नवम्बर 2020

रंग संवाद

रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र
तथा वनमाली सृजन पीठ की संवाद पत्रिका

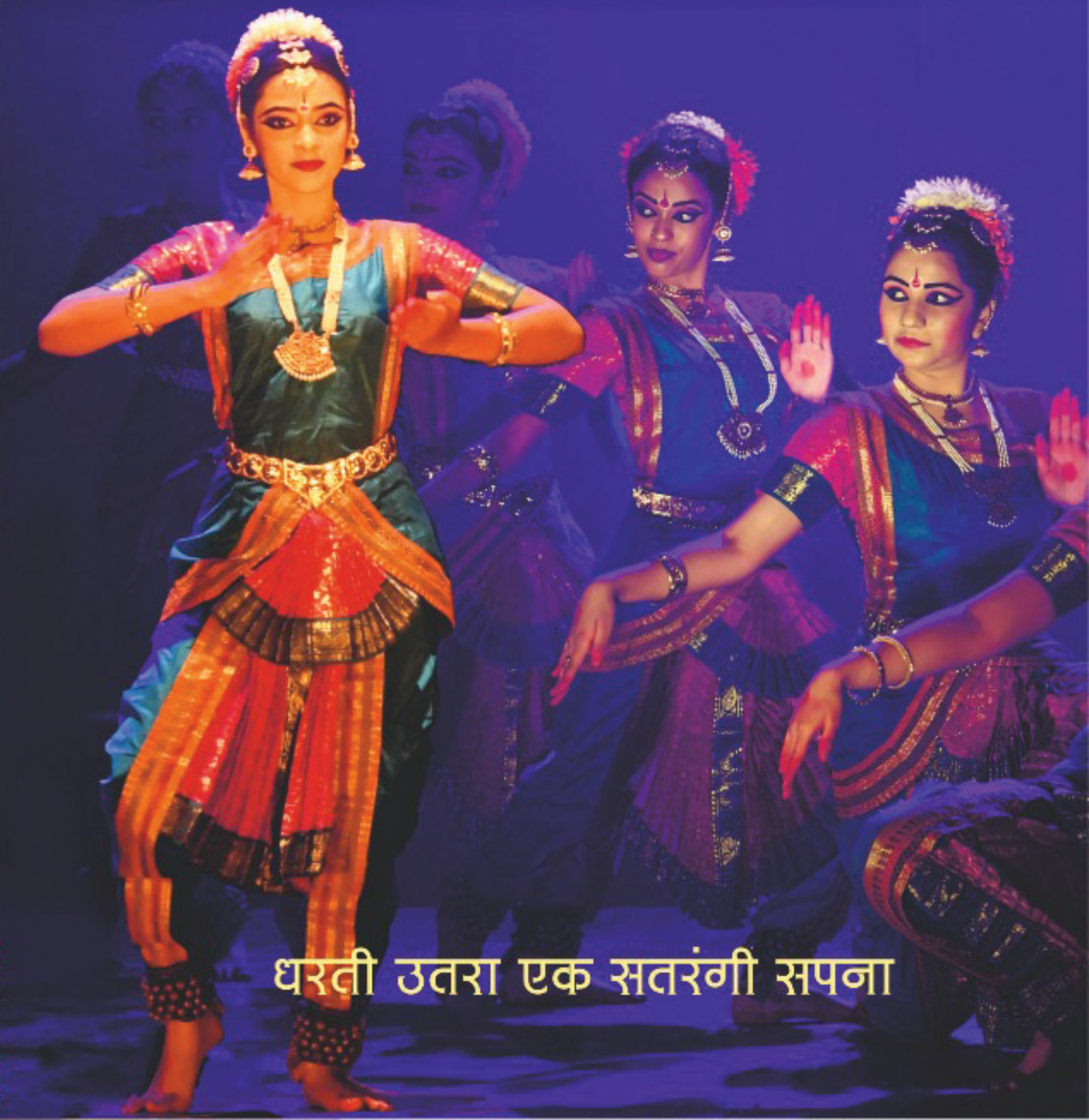

धरती उतरा एक सतरंगी सपना

टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल

शिक्षा तथा संस्कृति की परस्परता का रचनात्मक उपक्रम

अवधारणा, परिदृश्य और उद्देश्य

नई छात्र पीढ़ी में विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के साथ संस्कृति, कला तथा साहित्य के प्रति जिज्ञासा, अभिरूचि, सृजन और संस्कारशील व्यक्तित्व गढ़ने के उद्देश्य से रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वकला एवं संस्कृति केन्द्र की स्थापना की गई है।

अपनी सक्रियता के चलते इस केन्द्र ने अध्ययन, शोध और प्रदर्शनकारी गतिविधियों के माध्यम से विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्र-छात्राओं तथा विभिन्न विधाओं के अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त सर्जकों और विशेषज्ञों के बीच नवोन्मेषी रचनात्मक परिवेश तैयार किया है।

यह केन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, डॉ. सी. वी. रामन विश्वविद्यालय, बिलासपुर, खंडवा और पटना तथा आईसेक्ट विश्वविद्यालय हजारीबाग में समान रूप से संचालित है। भोपाल इसकी केन्द्रीय इकाई है।

विभिन्न ललित कलाओं, संस्कृति और साहित्य के विभिन्न पक्षों को अपनी गतिविधियों के दायरे में रखते हुए यह केन्द्र आंचलिक प्रस्तुतियों के अलावा शोध, विमर्श, संवाद, सृजन-शिविर, कार्यशालाओं, पुस्तक लोकार्पण, व्याख्यान, संपादन, अनुवाद और दस्तावेज़ीकरण की दिशाओं में सक्रिय है।

स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय महत्व के अनेक आयोजनों ने सकारात्मक परिवेश तैयार किया है। इस केन्द्र की सक्रियता को साहित्य, ललित कलाओं और रंगमंच की श्रेणियों में देखा जा सकता है।

अपनी प्रवृत्तियों और उद्देश्यों के साथ टैगोर विश्वकला एवं संस्कृति केन्द्र बहुलता की संस्कृति का आदर करते हुए सौहार्द और समन्वय की पुनर्स्थापना के लिए कृत संकल्प है।

संपर्क

भोपाल-विकलोद रोड, बंगरसिया चौराहे के पास, भोपाल, फोन : 0755-2700400, 2700404, मो. 9826392428

ई-मेल : tagorekala9@gmail.com, vinay.srujan@gmail.com

रंग संवाद

नवंबर – 2020

टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र तथा

वनमाली सृजन पीठ, रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की

संवाद पत्रिका

प्रधान संपादक

संतोष चौबे

choubey@aisect.org

संपादक

विनय उपाध्याय

vinay.srujan@gmail.com

शब्दांकन : **अमीन उद्दीन शेख़**

संपादकीय संपर्क:

22, E-7, अरेरा कॉलोनी,

भोपाल-462016

फोन : 0755-2423806, मोबाइल : 9826392428

• • •

जरूरी नहीं कि पत्रिका में संग्रहित आलेखों-चित्रों में व्यक्त रचनाकारों के विचारों से 'रंग संवाद' सहमत हो। किसी भी विवाद के लिए न्यायिक क्षेत्र भोपाल रहेगा।

टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र तथा

वनमाली सृजन पीठ (रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय), भोपाल द्वारा प्रकाशित

ई-मेल : **tagorekalabpl@gmail.com**

मुद्रक : पहले पहल प्रिंटरी प्रेस कॉम्प्लेक्स, भोपाल

TAGORE INTERNATIONAL LITERATURE & ARTS FESTIVAL
विश्व रंग
BHOPAL (INDIA)

इस बार

- सांस्कृतिक हस्तक्षेप की पहल /5

संतोष चौबे से विनय उपाध्याय का संवाद

- नई नज़ीर.../9

संतोष चौबे से सुधीर सक्सेना का संवाद

- परंपरा और आधुनिकता का संयोग है विश्वरंग/16

प्रणव मुखर्जी (पूर्व राष्ट्रपति) का संदेश

- शब्द, रंग और चितेरा- **अशोक भौमिक**/18
- आधुनिक कला और टैगोर- **सुमन कुमार सिंह**/29
- सुनी-अनसुनी आवाज़ें- **संतोष चौबे**/31
- अनुभव की आँच में पका कथा समय- **पुनर्वसु जोशी**/ 34
- महफ़िलों के महकते मंज़र... और चंपई यादें- **विनय उपाध्याय**/37
- रंगों में रमती आवाज़- **प्रेक्षक**/39
- समाज, कला, हुनर और वक्त की पड़ताल- **सुदीप सोहनी**/40
- दिल्ली में 'विश्वरंग'- **विक्रांत भट्ट**/43
- सपना, जो सच हुआ- **वंदना चतुर्वेदी**/46
- सुनहरा अध्याय- **रेखा राजवंशी**/49
- शहर के दरवाज़े दुनिया की दस्तक- **शिफाली**/51
- धरती उतरा एक सतरंगी सपना-**टीम विश्वरंग**/53
- उत्सव के छंद-**प्रदीप नवीन**/84

स्मृति शेष

उषा गांगुली

- बंगभूमि पर हिन्दी की रंग पताका -**विनय उपाध्याय**/76

राहत इंदौरी

- वो आसमां था मगर सर झुकाए फिरता था - **बद्र वास्ती**/78

सुषम बेदी

- बदल रही है स्त्री की दुनिया -**आदित्य**/80

रमाकांत गुंदेचा

- रमाकान्त होने का अर्थ -**अखिलेश**/82

➲ **आवरण आकल्पन :** वंदना श्रीवास्तव

➲ **भीतर का आकल्पन :** विनय उपाध्याय, अमीन उद्दीन शेख

➲ **अन्य छायाचित्र :** उपेन्द्र पटने, सौरभ अग्रवाल, आलोक खत्री, नीरज रिछारिया, प्रवीण दीक्षित, मुज़ीब-मुगीज़ फ़ारुखी, आदित्य उपाध्याय

➲ **सहयोग :** हेमंत देवलेकर, मुकेश सेन, अमित सोनी, विभोर उपाध्याय, मोहर सिंह चौहान, आशीष नेमा, प्रशांत सोनी, रोहित श्रीवास्तव, सिरील, केतन श्रोत्रिय, किशोर, श्वेता पांडे, कैलाश नारद

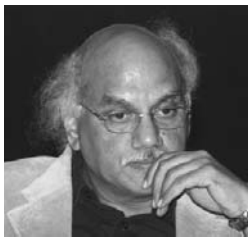

विश्वरंग 2020

आज जब हम विश्वरंग–2020 का आयोजन कर रहे है तो विश्वरंग–2019 की याद करना स्वाभाविक है। कई मायनों में विश्वरंग 2019 का आयोजन एक अभूतपूर्व और अनोखा आयोजन था। महामहिम राज्यपाल लालजी टंडन ने इसका उद्घाटन करते हुए इसे भारत का ही नहीं बल्कि एशिया का सबसे बड़ा साहित्यिक, सांस्कृतिक आयोजन निरुपित किया था। विश्वरंग 2019 में लगभग 30 देशों के 500 से अधिक कलाकार, साहित्यकार, संस्कृतिकर्मी शामिल हुए थे और लगभग इतने ही रचनाकार भारत से भी इस महोत्सव में उपस्थित रहे। तहज़ीब और अमन के शहर भोपाल ने इसे हाथों हाथ लिया और 7 दिनों तक चले इस फेस्टिवल को करीब 50,000 हजार लोगों ने देखा।

संपादकीय

आज जब हम पीछे मुड़कर देखते हैं तो विश्वरंग 2019 की अद्भुत सफलता के पीछे के आधार स्पष्ट नज़र आते है। विश्वरंग हिन्दी और भारतीय भाषाओं को केंद्रीयता प्रदान करता था और उसका मानना था कि हमारी भाषाओं के सामने पूरे विश्व में विस्तार करने का अनूठा अवसर उपस्थित है जिसे तकनीक ने और संभव बनाया है। विश्वरंग का यह भी मानना था कि हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर सम्मान का रिश्ता होना चाहिए, वैसे ही जैसे हिन्दी और उसकी बोलियों के बीच, जहाँ से भाषा जीवन रस प्राप्त करती है। विश्वरंग ने विधाओं के बीच चल रही आवा–जाही को भी रेखांकित करने का प्रयास किया था जिसके सुन्दर रचनात्मक परिणाम देखने मिले।

इस पूरे आयोजन के केन्द्र में टैगोर और गाँधी की वैचारिकता रही। टैगोर की चित्रकला पर शायद पहली बार किसी हिन्दी क्षेत्र में इतनी गंभीरता से बातचीत हुई तथा लगभग 1000 युवा चित्रकारों को पूरे आयोजन से जोड़ा गया। एब्स्ट्रेक्ट फोटोग्राफी की प्रदर्शनी ब्रीदिंग स्टोन का आयोजन भी भारत भवन में किया गया तथा कला के इतिहास पर एक सेमिनार भी आयोजित हुआ। इस सब ने चित्रकारों के बीच भी उत्साह की लहर पैदा की। विश्वरंग 2019 का एक और प्रमुख केन्द्र बिन्दु विश्व कविता था, जिसमें दिल्ली के आयोजन में लगभग 10 विश्व कवियों के अनुवाद प्रमुख भारतीय कवियों द्वारा प्रस्तुत किये गये तथा भोपाल के उत्सव में करीब 13 देशों के कवियों ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की। एक अन्तरराष्ट्रीय मुशायरे का आयोजन भी हुआ। भारत की लगभग 200 वर्षों की कथा परंपरा को समेटते हुए 18 खंडों में वृहद कथाकोश का निर्माण और विमोचन भी विश्वरंग के दौरान किया गया, जो एक अनूठी उपलब्धि थी।

लेकिन विश्वरंग 2019 की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि और उसकी सफलता का आधार, उसकी समावेशी दृष्टि थी। भोपाल की लगभग 50 से अधिक संस्थाओं ने इसमें बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया और भिन्न–भिन्न विचार धाराओं के राजनेता बड़े उत्साह के साथ पूरे आयोजन में उपस्थित रहे। विश्वरंग 2019 ने एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जिसने एक वैश्विक साहित्यिक सांस्कृतिक नेटवर्क की संभावना को जन्म दिया है।

विश्वरंग 2020 का आयोजन इसी पृष्ठभूमि में किया जा रहा है। आज जब दुनिया कोविड-19 की महामारी से जूझ रही है और विश्व में एक तरह का अवसाद देखने मिलता है तब इस तरह की सांस्कृतिक पहल का महत्व और बढ़ जाता है। विश्वरंग के पहले आयोजन में जो विभिन्न देशों के प्रतिनिधि आए थे वे यहां से इतना उत्साहित होकर लौटे कि जब विश्वरंग 2020 के आयोजन की बात चली तब उन्होंने अपने-अपने देश में भी उसका आयोजन करने का निर्णय लिया। विश्वरंग 2020 के पहले चरण में 16 देशों में जो अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम हुए है, उनमें अद्‌भुत उत्साह और रचनात्मकता देखने मिली है और एक सांस्कृतिक, साहित्यिक, वैश्विक नेटवर्क वास्तविकता बन चुका है।

विश्वरंग 2020 में हम कोविड-19 के बाद की दुनिया पर विचार कर रहे हैं, लेकिन उसी के साथ लगभग 50 से अधिक सत्रों में प्रख्यात लेखकों और कलाकारों से बातचीत भी आयोजित है। छः खंडों में विज्ञान कथा कोश का निर्माण किया गया है तथा 300 से अधिक लेखकों को लेकर विज्ञान कविता कोश भी बनाया गया है। टैगोर और गाँधी पर वैचारिक विमर्श जारी रखा जाएगा और राष्ट्रीय पेटिंग प्रदर्शनी में लगभग 800 से अधिक युवा चित्रकार पहले ही शामिल हो चुके है। इस बार एक अन्तरराष्ट्रीय लघु फिल्म प्रतियोगिता का आयोजन भी किया जा रहा है, जिसमें 600 से अधिक लघु फिल्में प्राप्त हो चुकी हैं तथा पहली बार एक चिल्ड्रन लिटरेचर फेस्ट भी समानान्तर रुप से आयोजित किया जा रहा है।

ये पूरा काम वर्चुअल प्लेटफार्म पर आयोजित है। अब तक लगभग 80 लाख लोगों तक विश्वरंग का संदेश पहुंचा हैं। सवा लाख से अधिक लोगों ने पूर्व रंग में अन्तरराष्ट्रीय कार्यक्रमों को देखा है तथा 20 हजार से अधिक लोग विश्वरंग वेब साईट पर अपना रजिस्ट्रेशन करवा चुके है और यह संख्या लगातार बढ़ती ही जा रही हैं।

तो आइये 20 से 29 नवम्बर के बीच विश्वरंग 2020 की सभी गतिविधियों में भाग लें। विश्वरंग www.vishwarang.com वेब साईट पर रजिस्ट्रेशन कराएं और हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के इस महा आयोजन में शिरकत करें। रंग संवाद का यह अंक विश्वरंग 2019 की झलकियाँ प्रस्तुत करता है और विश्वरंग 2020 में आप की भागीदारी का आह्वान करता है।

पिछले विश्वरंग में हमारे बीच उपस्थित आदरणीय प्रणब मुखर्जी, अमेरिका की प्रख्यात कथाकार सुषम बेदी, प्रख्यात नाट्यकर्मी उषा गांगुली, मशहूर उर्दू शायर राहत इंदौरी तथा पद्‌श्री रमाकांत गुंदेचा अब हमारे साथ नहीं है। उन्हें पूरे विश्वरंग परिवार की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि।

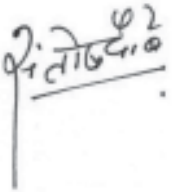

● **संतोष चौबे**

सांस्कृतिक हस्तक्षेप की पहल

संतोष चौबे से विनय उपाध्याय का संवाद

अदब और तहज़ीब की रंग-ओ-महक के बेमिसाल सिलसिलों को थामता विश्वरंग... । महास्वप्न। एक आन्दोलन। एक अभियान। एक मिशन। हमारे वक़्ती दौर के ज़रुरी और ज्वलंत मुद्दों और विषयों पर बहस-मुबाहिसों का एक ऐसा समावेशी मंच, जहाँ तमाम ख़ानाबंदियों से निकलकर विचार की खुली सांस भरी जा सकती है। आकल्पन और संयोजन के स्तर पर सारी दुनिया को चकित और मुग्ध कर देने वाले इस विराट उत्सव के सांस्कृतिक नायक संतोष चौबे की जुबाँ से विश्वरंग को जानना जैसे पाँखुरी-पाँखुरी किसी फूल को खिलते देखना है। मंज़िल की जुस्तजुँ में उनका कारवाँ दुश्वारियों को चुनौती देता है तो दूसरी ओर फिर एक महास्वप्न को रचने का हौसला भी बटोरता है। विनय उपाध्याय और सुधीर सक्सेना के सवालों का जवाब देते हुए चौबे इसी आत्मविश्वास और उर्जा से भरे नुमायां होते हैं।

विनय उपाध्याय : आपके मन में विश्वरंग कब और कैसे कौंधा?

संतोष चौबे: विनय, ऐसा है कि 'विश्व रंग' को दो दृष्टियों से देखा जा सकता है। एक तो हम इसको अपने देश के बाहर से देख सकते हैं और एक देश के भीतर से देख सकते हैं। मुझे लगता है कि हम वैश्विक परिदृष्य को देखें तो दो-तीन बातें बहुत साफ़ हैं। हमारी जो दी हुई धरती थी या हमें जो प्रकृति प्राप्त हुई थी, जिसके साथ हमें जीना था या जिसके साथ हम अपना जीवन-यापन करते थे। इस प्रकृति के अंधाधुंध दोहन से जिस तरह का समाज अब बन रहा है, जिस तरह का विश्व अब बन रहा है, मुझे लगता है कि उसके प्रति संवेदनशील होने की बहुत ज़रूरत है और वो कलाओं और कला-माध्यमों के द्वारा ही किया जा सकता है।

दूसरी बात यह है कि विज्ञान जिस तरह का मनुष्य बनाने की बात करता है, बायोटेक्नॉलॉजी और बायोइंफॉर्मेटिक्स का जो कन्वर्जन्स है, इसमें मनुष्य को विस्थापित करने की ही बातें हो रही हैं। माने रोबोटिक्स की बात हो रही है, बायोटेक्नॉलॉजिकल मनुष्य की बात हो रही है। तो क्या हम मनुष्य के बिना या मनुष्य की संवेदनाओं के बिना किसी धरती के बारे में सोच सकते हैं? मुझे लगता है कि साहित्यकारों और कलाओं का अब बहुत ज़रूरी काम है कि वो इस संवेदना को पुनः जागृत करें, देखें कि विज्ञान जिस तरह का समाज बनाना चाहता है, जिस तरह से प्रकृति का अंधाधुंध दोहन हमने किया है, उससे हम किस तरह की धरती का निर्माण कर रहे हैं।

और तीसरी बात, जो बहुत ज़रूरी है कि अब टेक्नॉलॉजी बहुत आड़े आती है। यानी इस तरह का एक कुहासा टेक्नॉलॉजी ने हमारे दिमाग में खड़ा कर दिया है, इस तरह का एक विभ्रम रच दिया है जिसमें बहुत तीव्र गति से चलने वाली दृश्यावलियाँ हैं, जिसमें हमारे दिमाग में एक तरह का फ्रिगमेंटेशन पैदा हुआ है। इस सबको पुनः केन्द्रित करते हुए मनुष्य मात्र पर और मनुष्य की संवेदनाओं पर केन्द्रित करते हुए काम किये जाने की आवश्यकता लगती है। मुझे लगता है कि ये काम सिर्फ़ कलाएँ ही कर सकती हैं और ये समय जो है, ये सांस्कृतिक हस्तक्षेप का समय है।

उत्सवधर्मी भारत में पहले भी कई सांस्कृतिक गतिविधियाँ होती रही हैं लेकिन 'विश्व रंग' किन अर्थों में अनूठा रचने की कोशिश रही?

– हाँ... ये जो हमारी मूल अवधारणा है उससे जुड़ा हुआ सवाल है। असल में लिटरेचर फेस्टीवल्स या 'विश्व रंग' जैसे साहित्य समारोहों को आयोजित करने के दो तरीके हो सकते हैं। एक यह है कि आप उसे व्यावसायिक हितों में रचें, दूसरा यह है कि उसमें अंग्रेज़ियत और एक इलिटिज़्म डोमिनेट करें। हमारे यहाँ जो परिकल्पना है या जो हमारे रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की परिकल्पना है वो यह है कि भारत, भारतीयता और भारतीय भाषाएँ इसके केन्द्र में होनी चाहिए। हम हिन्दी में और हिन्दी भाषा में बातचीत करने वाले, रचने वाले समाज हैं। हम भारतीय भाषाओं में रचने वाले समाज हैं। हमारी विषद् परम्परा अपनी कलाओं की रही है। ये जो पूरा देश में परिदृश्य बना है, जिसमें कि ऐसा लगता है कि उन समारोहों में प्रवेश में दिक्कत होती है और जिस तरह की बातें की जाती हैं; तो हमारी कोशिश यह है कि हम हिन्दी और भारतीय भाषाओं को पुनः केन्द्र में लाएँ और जो हमारी परम्परा है और जो हमारी कला और संस्कृति है उसके साथ जोड़कर इस चीज़ की बात करें।

एक विश्वविद्यालय को क्या ज़रूरत पड़ी कि वो साहित्य और कलाओं का उत्सव रचे? किस नवाचार का आग्रह है?

– मुझे ऐसा लगता है कि ये भी एक तरह का शैक्षिक नवाचार है। क्योंकि ब्रेख़्त ने यह कहा था कि शिक्षा सबसे अच्छी वो है या कला सबसे अच्छी वो है जो शिक्षित करती है। तो शिक्षा को भी कलाओं के पास जाने की ज़रूरत है और मुझे लगता है कि ये हम ज़रूरी काम कर रहे हैं। ये नवाचार ही है। दूसरी बात यह है कि हमारे विश्वविद्यालयों में और अपने टेक्नॉलॉजी नेटवर्क में हर समय यह बात स्वीकार की जाती है कि मनुष्य को विज्ञान की भी उतनी ही ज़रूरत है और कलाओं की भी उतनी ही ज़रूरत है। अगर हमें सन्तुलित मनुष्य बनाना है, अगर हमें एक विचारशील, संवेदनशील मनुष्य बनाना है तो वह विज्ञान की तकनीकों को हासिल करेगा लेकिन कलाओं की तकनीकों को भी हासिल करेगा और कलात्मक रूप से सोचने के लिए वह समृद्ध होगा। तो ये सन्तुलन हर तरह बना रहता है।

टैगोर हमारे भारत की संस्कृति एक प्रस्थान बिन्दु है। ऐसे में टैगोर किन अर्थों में विन्यस्त हुए?

– यह बहुत बढ़िया सवाल है। ऐसा है कि जो साहित्य समारोह की हमने अब तक बात की, उसके पूर्वरंग के रूप में टैगोर का एक पुनरावलोकन भी आयोजित किया। तीन दिनों तक टैगोर पर केन्द्रित समारोह और बहुत ही आवश्यक था कि हम टैगोर को फिर फोकस में लाते। उसमें एक दिन भोपाल शहर के बच्चे टैगोर की कविताओं की बड़ी प्रस्तुति जो दृश्य-श्रव्य प्रस्तुति रही। टैगोर की पेंटिंग्स पर एक सेपरेट सेशन और उनकी पेंटिंग एक्ज़ीबिशन भी। टैगोर की कविताओं पर तो काफी बात होती है और नाटक पर भी बात होती है पर उनकी पेंटिंग्स पर उतनी चर्चा हमारे देश में नहीं हुई है। हम टैगोर की पेंटिंग्स की एक एक्ज़ीबिशन भी हुई। इसी कन्टेक्स्ट में 'हिस्ट्री ऑफ़ आर्ट इन इण्डिया' एक सेमिनार टैगोर वि.वि. में हुआ। तीसरे दिन उनका एक नाटक, जो बहुत प्रमुख नाटक है, 'चाण्डालिका' कलकत्ता से आने वाली हमारी उषा गांगुली जी ने प्रस्तुत किया। टैगोर के नाटक, टैगोर की पेंटिंग्स, टैगोर की कविता, टैगोर का विचार, टैगोर का रंग-संगीत, रवीन्द्र संगीत- ये सभी इसमें शामिल रहा। अभी हाल ही में हमने जयश्री चक्रवर्ती को बुलाया था, वह भी टैगोर के रवीन्द्र संगीत पर अपना बहुत अच्छा प्रदर्शन करके गयी हैं। कोशिश है कि टैगोर से शुरू करके वैश्विक दृष्टि प्राप्त की जाए।

'विश्वरंग' का हासिल?

– हाँ... ये थोड़ा कठिन सवाल है, लेकिन निश्चित रूप से इसे पूछा जाना चाहिए। मुझे ऐसा लगता है- जैसा मैंने शुरू में भी कहा- ये हमारे पैंतीस-चालीस वर्षों के काम का निष्कर्ष है, कि छात्रों को और आगे चलकर मनुष्य को भी एक सन्तुलित मनुष्य के रूप में व्यवहार करना चाहिए। इसका एक तो इनहेरण्ट आइडियालॉजिकल पर्सपेक्टिव यह है

मनुष्य को विज्ञान की भी उतनी ही ज़रूरत है और कलाओं की भी उतनी ही। अगर हमें सन्तुलित, विचारशील, संवेदनशील मनुष्य बनाना है तो वह विज्ञान की तकनीकों को हासिल करेगा लेकिन कलाओं की तकनीकों को भी प्राप्त करेगा और कलात्मक रूप से सोचने के लिए वह समृद्ध होगा।

कि विज्ञान और कलाएँ साथ-साथ चलें और 'विश्व रंग' के ज़रिए कोशिश कि कि विज्ञान और कलाओं के साथ-साथ लाएँ।

दूसरी बात, जब हमारे साहित्यकार मित्र, यह कहते हैं कि कई चीज़ें गलत हो रही हैं। लेकिन कोशिश होनी चाहिए कि यदि आप उस पर विश्वास करते हैं तो प्रत्युत्तर भी पैदा करें, आप एक काउण्टर-प्वाइण्ट भी पैदा करें, जिसमें बताएँ कि चीज़ों को अगर होना है तो इस तरह से होना है। अगर हम कहते हैं कि व्यावहारिक हितों के आधार पर साहित्य को नहीं देखा जाना चाहिए, अगर हम कहते हैं कि हमारे लोकल कनेक्ट और हमारे समाज के कनेक्टेड फेस्टिवल होने चाहिए। सारे फेस्टिवल बड़े शहरों पर न रहकर पूरे व्यापक समाज से जुड़कर होने चाहिए, ऐसा एक टाउण्टल एक्शन भी हमें करना चाहिए। मैं मानता हूँ कि लेखक-कलाकार को थोड़ा-थोड़ा सोशल एक्टिविस्ट भी होना चाहिए और ये हमें लोगों से जुड़ने के लिए प्रेरित करता है।

पुस्तक यात्रा विश्वरंग के पूर्व भारत की सांस्कृतिक धड़कनों से वाबस्ता होने का एक बड़ा अभियान रही। क्या इस प्रतिक्रिया में आप कुछ जोड़ना चाहेंगे?

– ये फेस्टिवल सचमुच इस तरह से डिफरेन्ट रहा है कि इसमें पहले एक 'पुस्तक-यात्रा' निकाली गयी जो कि देश के पचास-पचपन स्थानों पर गयी। ये छोटे कस्बे थे। ये बिहार के छोटे कस्बे थे, ये झारखण्ड के छोटे कस्बे थे। ये मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ की वो जगहें थीं जहाँ पर कि सामान्य रूप से बड़े साहित्यकार नहीं जाते हैं। पहला प्रयास तो वहाँ जाकर शामिल करने का किया गया। दूसरा प्रयास यह है कि इसमें भाषाओं पर बहुत जोर है और हम अपनी भाषा और अपनी संस्कृति पर बहुत ज़्यादा जोर दे रहे हैं। तीसरी बात यह है कि हम किसी तरह से इसका व्यवसायीकरण नहीं कर रहे हैं, जिसमें कि कोई कॉर्पोरेट बड़े तौर पर शामिल हो या कि सरकार इसको ड्राइव करने की कोशिश करे। ये पूरी तरह से शैक्षणिक संस्थानों द्वारा संचालित देश का पहला प्रयास है। आगे चलकर एक लम्बी और बड़ी योजनाएँ, जिसमें 'पुस्तक मित्र' बड़ी संख्या में बनाये जाएँगे और कोशिश होगी कि पुस्तक संस्कृति की वापसी हो। जहाँ तक एक ओर तो इसका वैश्विक दृष्टिकोण है और दूसरा इसका एक राष्ट्रीय दृष्टिकोण भी है जिसमें हमारी कोशिश है कि हम अन्य फेस्टिवल से अपनी कार्य पद्धति से, अपनी वैचारिक पद्धति में अलग दिखें और एक तरह का भारतीय कनेक्ट इसमें से दिखे।

विश्व साक्षरता दिवस से एक अनूठा रचनात्मक अभियान आपने शुरू किया पुस्तक यात्राओं का। इन यात्राओं का तजुर्बा कैसा रहा? संयोजकों और आप तक क्या संदेश पहुँचा?

– मुझे लगता है कि 'पुस्तक यात्रा' एक ऐसा नवाचार और इतना अच्छा और इतना सुन्दर प्रयास था, जिसने कि बहुत सारे लोगों की आँखें खोलीं। एक अभूतपूर्व रिस्पॉन्स पुस्तक यात्राओं को गाँवों और कस्बों में मिला। जहाँ-जहाँ से यात्राएं गुजरी और ये काफिला जहां-जहां पहुंचा फूल-मालाओं से और पूरे आत्मीयता से भरकर उनका स्वागत किया गया। जिन स्कूलों और संस्थाओं में पुस्तक यात्राओं के तहत विभिन्न गतिविधयां हुई, छात्र-छात्राओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। ये भ्रम टूटता-सा दिखता है कि लोगों की रुचि किताबों में नहीं है। लोगों की रुचि किताबों में है, किताबें ही वहाँ तक नहीं पहुँच रही हैं, ऐसा हमें लगता है। इतनी सारी रचनात्मकता हमारे ग्रामीण क्षेत्र में फैली हुई है। किताबों के अलावा हमें वहाँ पेंटर मिले, वहाँ हमें गायक कलाकार मिले, वहाँ हमें लोकल यानी आंचलिक कलाकारों के बड़े अच्छे समूह मिले और सबने यह कहा कि- 'साहब, ये प्रयास अब तक क्यों नहीं किया गया?' इस पुस्तक यात्रा से पहली धारणा तो यह स्थापित होती है कि पुस्तकों की डिमाण्ड है, लोग पुस्तक पढ़ना चाहते हैं, पुस्तकों को वहाँ तक पहुँचना चाहिए और शब्द की सत्ता अभी बनी हुई है और हम लोगों से बातचीत कर सकते हैं। दूसरी बात यह है कि लोग शामिल होना चाहते हैं।

विनय, हुआ यह है कि हम बड़े शहर से और बड़े शहर से और बड़े शहर तक की यात्रा करते रहे, लेकिन हमने कभी जो रिवर्स यात्रा है वो नहीं की है। क्योंकि हम साहित्य जिनके लिए सृजित कर रहे हैं, जिनको शामिल करना चाहते हैं, उन तक तो हम पहुँचते ही नहीं हैं। फिर ये शिकायत करते हैं कि हमारी किताबें नहीं बिक रही हैं।

हमारी कोशिश रही है कि शहर और प्रदेश की जो संस्थाएँ हैं वो इस गतिविधि का हिस्सा बनें। प्रसन्नता की बात है कि सभी संस्थाओं ने पूरे मन से इसमें शामिल होने का निर्णय लिया। जैसे कि कृष्ण भगवान ने पूरा पर्वत उठा लिया था और बहुत सारी उँगलियाँ उसमें लगीं। हमारे सभी विश्वविद्यालयों की पूरी टीम लगी। मुझे लगता है आपसी समझदारी, पारिवारिकता, समावेषी प्रवृत्ति बहुत बड़ी चीज़ है, जो कि हमारे इस लक्ष्य को आगे ले जाती है।

जो रिश्ता 'पुस्तक यात्राओं' के दौरान बना, किस हद तक इसे स्थायी आप बनाना चाहते हैं? इसको कायम रखना चाहते हैं?

– हमारे पाँचों विश्वविद्यालयों ने तय किया है, अभी इस पर बातचीत हुई है। पहली बात तो यह कि हम इसको वार्षिक यात्रा बनाएँगे और हर साल एक पुस्तक यात्रा व्यापक स्तर के रूप में निकाली जाएगी। हमारे प्रकाशक बन्धुओं ने भी यह कहा है कि क्या हम एक ऐसा समन्वित प्रयास कर सकते हैं, जिसमें विश्वविद्यालय भी हैं और लोग भी शामिल हों, प्रकाशक भी शामिल हों, राष्ट्रीय यात्रा निकालें।

तीसरी बात मैं यह सोचता हूँ कि मैं बड़ी संख्या में 'पुस्तक मित्रों' का निर्माण करूँ। करीब-करीब एक लाख 'पुस्तक मित्र' बनाने की योजना है, जो दस लाख तक भी जा सकती है। ये पुस्तक मित्र जो होंगे, इस यात्रा को आगे ले जाएँगे और साथ में एक ऐसा सम्बन्ध स्थापित करेंगे जिसमें कि हम उनके पास तक जाएँगे और वो हमारे पास तक आएँगे।

ये पुस्तक यात्राएँ 'विश्व रंग' का पूर्वरंग हम मान सकते हैं और दरअसल सबसे पहले हम अपने देश और अपनी आत्मा में झाँकने की कोशिश करें। लेकिन रचने के स्तर पर निश्चित रूप से बड़ी चुनौती थी। आपने इतने सारे प्रबन्ध, इतनी सारी कल्पनाशीलता जुटायी कैसे? कृपया खुलासा कीजिए।

– यह तो हम लोगों की, मतलब आईसेक्ट नेटवर्क की ख़ासियत मानी जाती है कि वो बहुत आसानी से बड़े-बड़े काम कर लेता है। मुझे लगता है कि जो सामूहिक कार्य है, जो टीमवर्क है और जो हम लोगों की आपसी समझ है और जो पारिवारिकता है हमारे पूरे नेटवर्क और विश्वविद्यालयों में; एक तो वो हमें ताकत देती है। दूसरी बात यह है कि लम्बी प्लानिंग की आवश्यकता पड़ती है।

लगभग दो वर्षों से 'विश्वरंग' की प्लानिंग की जा रही थी और मैं कहूँ कि आधा काम तो हमने करके दिखा दिया है, यानी पुस्तक यात्राएँ निकाली जा चुकी हैं, युवा उत्सव किये जा चुके हैं और ये काम तो करके दिखाया जा चुका है। इससे जो व्यापक हलचल पैदा हुई है, इससे जो ऊर्जा पैदा हुई है, उसको अब समन्वित कर रहे हैं। एक बहुत ज़रूरी बात बताना चाहता हूँ कि जितने फेस्टिवल्स होते हैं वो कभी स्थानीय संस्थाओं को शामिल नहीं करते। हमारी कोशिश रही है कि हमारे शहर के, हमारे प्रदेश की जो संस्थाएँ हैं वो उसका हिस्सा बनें और बहुत ही प्रसन्नता की बात है कि सभी संस्थाओं ने पूरे दिल से इसमें शामिल होने का निर्णय लिया। धीरे-धीरे तिनका-तिनका जोड़कर हम बड़ी टीम बनाते हैं और जैसे कि कृष्ण भगवान ने पूरा पर्वत उठा लिया था और बहुत सारी उँगलियाँ उसमें लगी थीं, इस तरह से बहुत सारे लोगों का हाथ इसमें लगा। हमारे सभी विश्वविद्यालय, हमारी पूरी टीम लगी। मुझे लगता है एक आपसी समझदारी, पारिवारिकता, समावेषी प्रवृत्ति एक बहुत बड़ी चीज़ है, जो कि इसको आगे ले जाती है।

नई नज़ीर...

संतोष चौबे से सुधीर सक्सेना का संवाद

'विश्व रंग' की सफलता आशातीत रही या उम्मीद से कम?

– मुझे लगता है कि इस सवाल का जवाब प्राप्त करने के लिए आपको मीडिया में प्रकाशित रिपोर्ट्स 'विश्व रंग' के अखबारों में प्रकाशित समाचार, 'विश्व रंग' के डेली बुलेटिन, आमंत्रित अतिथियों के वक्तव्य तथा विदेशी रचनाकारों के वीडियो और ऑडियो फीडबैक देखने चाहिए। ये सभी प्रिंट मीडिया सोशल मीडिया तथा यूट्यूब आदि पर उपलब्ध हैं। जिस तरह से भोपाल शहर ने 'विश्व रंग' का स्वागत किया वह आशातीत था। लगभग 30 देशों के 500 से अधिक रचनाकार, कलाकार महोत्सव में पधारे और उन्होंने इसमें बड़े उत्साह के साथ भागीदारी की। करीब 15000 लोगों ने महोत्सव में शामिल होने के लिए ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन कराया था और प्रतिदिन 5 से 6 हजार लोग विभिन्न एकेडमिक सत्रों में, शाम के लोकप्रिय सत्रों में तथा प्रदर्शनियों में आते रहे। भोपाल के 30 सर्वोत्तम स्कूलों के लगभग 3 हजार छात्र–छात्राएं इस फेस्टिवल में आये, और इसकी विभिन्न गतिविधियों का अवलोकन भी किया। खास बात यह भी है कि चीन के 20 छात्रों का विशेष अध्ययन दल सभी लेखकों–कलाकारों से मिला और लेखन और कला–संस्कृति पर उनसे सार्थक संवाद भी किया। भारत भवन में नेशनल पेंटिंग एग्जीबिशन में लगभग 200 नवोदित चित्रकारों के चित्र प्रदर्शित किये गये। कुल मिलाकर देशभर से 1000 से अधिक एंट्रीज प्राप्त हुई थी। हिस्ट्री ऑफ आर्ट्स विषय पर नेशनल सेमीनार आयोजित किया गया और विश्व कविता तथा विश्व में हिंदी विषयों पर महत्वपूर्ण सत्र आयोजित किये गये।

देश के 200 वर्षों के कथा साहित्य को समेटे हुए 18 खंडों में निर्मित कथादेश का लोकार्पण हुआ। वहीं दूसरी ओर हिंदी के 40 चयनित कथाकारों का अंग्रेजी अनुवाद 'अ जर्नी इन टाइम', 'गोल्डन ट्रेजरी' भी दो खंडों में प्रकाशित होकर लोकार्पित हुआ। थर्ड जेंडर की कविताओं का एक महत्वपूर्ण सत्र भी आयोजित हुआ। गांधी, टैगोर, इकबाल और फ़ैज़ पर महत्वपूर्ण व्याख्यान 'विश्व रंग' में हुआ। अंतरराष्ट्रीय मुशायरे में उर्दू के 15 शीर्षस्थ शायरों ने करीब 4 हजार श्रोताओं को तीन से चार घंटे तक बांध कर रखा। सातों दिन लोक संगीत तथा लोकनृत्य की छटाएं भी समय–समय पर देखने मिलीं। इस तरह विमर्श की दृष्टि से और भागीदारी की दृष्टि से 'विश्व रंग' आशातीत रूप से सफल

रहा तथा उसे अभूतपूर्व और अनोखा आयोजन माना गया। जिस तरह की धनात्मक ऊर्जा का उसने संचार किया, वैसी ऊर्जा कई प्रतिभागियों के अनुसार, देश में पहले कभी देखी नहीं गई।

कुछ लेखकों ने 'विश्व रंग' का विरोध भी किया? क्या इसका कुछ असर पड़ा?

– देखिए मैं तो किसी को भी अपना विरोधी नहीं मानता और फेसबुक पर चलने वाली हल्की–फुल्की टिप्पणियों को किसी गंभीर बहस के योग्य भी नहीं मानता। मैंने 'विश्व रंग' की पूरी अवधारणाएं 'विश्व रंग' के पूर्व ही अपने साक्षात्कार में स्पष्ट कर दी थीं। अगर उन पर कोई बात होती तो बहस आगे बढ़ सकती थी। सोशल मीडिया की कुछ अधकचरी टिप्पणियों में जिन्हें 'विश्व रंग' का विरोधी निरूपित किया जा रहा है, वे वास्तव में मेरे गहरे और पुराने मित्र हैं। उदाहरण के लिए राजेश जोशी का दर्जा मेरे जीवन में फ्रेंड फ्लॉसफर और गाइड का रहा है और मेरे पहले कथा संग्रह पर उनकी भूमिका से शुरू होकर लगभग प्रत्येक आयोजन प्रत्येक किताब और प्रत्येक चर्चा में वे सहभागी रहे हैं। वे बरसों वनमाली कथा सम्मान के निर्णायक मंडल में रहे और असंख्य कार्यशालाएं, वर्कशॉप्स, चर्चा और संगोष्ठियां हमने साथ–साथ कीं। वे कथा मध्यप्रदेश और कथादेश दोनों के ही संपादक मंडल में थे, और 'विश्व रंग' के पहले चरण–पुस्तक यात्रा, में उन्होंने बड़े उत्साह से भागीदारी की थी। हिन्दी भवन में कैलाश पंत के नेतृत्व में पुस्तक यात्रा के स्वागत के दौरान तो वे मंच पर थे। 'विश्व रंग' में कविता पाठ के सत्र की शुरूआत में विमोचित पुस्तक 'शब्द, ध्वनि और दृश्य' में मेरे द्वारा लिया गया उनका साक्षात्कार प्रकाशित है। इसी तरह पंकज सुबीर सीहोर में 'विश्व रंग' की प्रायोजक संस्था आईसेक्ट से संबद्ध कौशल विकास केंद्र संचालित करते हैं, जो स्वयं रबींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय से संबद्ध है। उन्हें वनमाली युवा कथा सम्मान से विभूषित किया जा चुका है तथा उनके उपन्यास 'ये वो सहर तो नहीं' पर मैंने एक सुचिंतित अध्यक्षीय व्याख्यान दिया था, जिसे उन्होंने बहुत पसंद किया था। उनके हर आयोजन में मैं जाता रहा हूं और कई बार अध्यक्ष की हैसियत से वे मुझे बुलाते हैं। वे मेरे प्रिय कथाकार हैं, और अलग–अलग विषयों पर सृजनपीठ द्वारा आयोजित संगोष्ठियों में शिरकत/संचालन करते रहे हैं। उन्होंने सीहोर में भरी बारिश में पुस्तक यात्रा का भव्य स्वागत किया था तथा रचना पाठ का आयोजन भी। मुझे याद पड़ता है, कि पंकज का मेरे बारे में अभिमत था कि भाई साहब, आपका जन्म तमाम जड़ताओं को तोड़ने के लिये हुआ है।

मंगलेश डबराल ने सबसे पहले मेरी कहानी 'जनसत्ता' में प्रकाशित की थी। वे और नरेश सक्सेना हमारे विश्वविद्यालय तथा वनमाली सृजनपीठ की कई संगोष्ठियों में अपनी गरिमामय उपस्थिति बनाते रहे हैं, तथा सृजनपीठ एवं विश्वविद्यालयों की गतिविधियों के प्रशंसक भी रहे हैं। आईसेक्ट स्टूडियो ने दोनों के ही लंबे साक्षात्कार लिए थे जो कि ऊपर उल्लेखित पुस्तक 'शब्द, ध्वनि और दृश्य' में प्रकाशित हैं और जिसे कविता पाठ के पूर्व विश्व रंग में विमोचित किया गया। नरेश सक्सेना की कविताओं

तथाकथित विरोध को अंतर्विरोध कहना ज़्यादा उचित होगा। 'विश्व रंग' के कार्यक्रम समाप्त हो जाने के बाद फेसबुक पर चली बहसों को मैंने देखा हैं। एक सामान्य पाठक भी उनके अंतर्विरोध को समझ सकता है। वे सभी वैचारिक कुहासे के बीच एक–दूसरे को काटती हुई टिप्पणियां हैं। कहीं–कहीं तो वे मुझे बहुत हास्यास्पद भी लगीं। मैं उन पर अपनी ओर से कोई भी टिप्पणी करना आवश्यक नहीं समझता।

पर मेरा एक लंबा आलेख प्रकाशित है, और मेरी षष्टिपूर्ति के अवसर पर वे विष्णु नागर, लीलाधर मंडलोई, डॉ. चित्रा मुद्गल तथा ममता कालिया के साथ रबींद्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय तथा भारत भवन पधारे थे। विष्णु नागर उसके पहले भी वनमाली कथा सम्मान समारोह में शिरकत करते रहे हैं। इसी तरह मैंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ मिलकर '75 की देहरी पर अशोक वाजपेयी' कार्यक्रम तब आयोजित किया था, जब उनके मित्रों की संख्या भोपाल में कुछ सीमित हो चली थी, और उनकी कविता पर लिखा गया मेरा आलेख खूब सराहा गया था। उसे बाद में पियूष दईया द्वारा संपादित उनके अभिनंदन ग्रंथ में शामिल भी किया गया। मेरे इतने प्रिय, घनिष्ठ और श्रद्धेय मित्रों को कैसे विरोधी माना जा सकता है?

पर ये भी सत्य है कि कैलाश पंत रबींद्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय की गवर्निंग बॉडी में शासन द्वारा नामित सदस्य हैं, उनके द्वारा संचालित हिन्दी भवन हिन्दी के लेखकों, कलाकारों को खूब स्थान देता है, हिन्दी के लिए समर्पित कई संस्थाएं वहां स्थान और आश्रय पाती हैं तथा अन्य भाषा भाषी हिन्दी सेवियों को वे हर साल पुरस्कृत करते हैं। क्या उनके इस कार्य का सम्मान नहीं किया जाना चाहिए? मैं उनके द्वारा आयोजित पावस व्याख्यान माला में अक्सर बोलने जाता हूं और मेरे विचारों का वहां स्वागत भी होता है। उन्होंने मेरे बोलने पर कभी कोई प्रतिबंध नहीं लगाया। हिन्दी भवन में पुस्तक यात्रा का जबरदस्त स्वागत हुआ, पूरे भोपाल के हिन्दी उर्दू के 100 से अधिक साहित्कार वहां थे जिनमें राजेश जोशी, डॉ. रमेश चंद्र शाह) डॉ. विजय बहादुर सिंह, शशांक, बद्र वास्ती, जहीर कुरैशी, प्रतिभा, संध्या, अनिता सक्सेना, राम वल्लभ आचार्य और कई अन्य शामिल थे। डॉ. श्रीराम परिहार खंडवा के डॉ. सी.वी. रामन विश्वविद्यालय के साथ स्थापना से ही जुड़े हैं और निमाड़ क्षेत्र में लोक तथा शास्त्र के प्रमुख अध्येताओं में से हैं। वे देश के कुछ बचे खुचे ललित निबंधकारों में से हैं जिन्होंने इस विधा को जीवित रखा है। डॉ. देवेंद्र दीपक मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी के निदेशक रहे और मध्य प्रदेश के वरिष्ठ साहित्कारों में शुमार हैं। राजीव वर्मा भोपाल के प्रसिद्ध नाट्य अभिनेता हैं जिन्होंने फिल्मों में सबसे पहले भोपाल का झंडा बुलंद किया। डॉ. सच्चिदानंद जोशी इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के मेंबर सेक्रेटरी हैं। यह केंद्र 'विश्व रंग' के सह आयोजक जैसा था। वे और उनकी श्रीमती जी भोपाल के रंग जगत से गहराई से जुड़े हैं। तो इन सबको आमंत्रित करने में मुझे प्रसन्नता ही हुई और किसी की भी आपत्ति का कोई कारण मुझे समझ नहीं आता। हमारे विश्वविद्यालयों ने हर समय एक खुलेपन के साथ रचनाकारों से सम्मान का रिश्ता बनाये रखा है और आगे भी बनाये रखेंगे। सवाल यह है कि आप जब संवाद करने निकलेंगे तो क्या खुद ही से संवाद करते रहेंगे या अपने से इतर लोगों से भी मिलेंगे? प्रख्यात कवि ऋतुराज ने या ईश मधु तलवार ने या निरंजन श्रोत्रिय ने इस पर ज़्यादा संतुलित स्टैंड लिया। वे आये और उन्होंने अपनी बात कही। कहा भी गया है– हमीं हम हैं तो क्या हम हैं, तुम्ही तुम हो तो क्या तुम हो।

नई नज़ीर स्थापित करने के लिये काम को नये तरीके से करना पड़ता है। फिर जो भी व्यक्ति 'विश्व रंग' में शामिल हुआ, वह यह नहीं कह सकता कि 'विश्व रंग' में विमर्श का स्तर कहीं भी कमतर था। डॉ. सुधीर चंद्रा ने अपने फीडबैक में कहा है कि 'विश्व रंग' की सबसे बड़ी खासियत यह थी कि इसमें चर्चा का स्तर बहुत ऊंचा था, जैसा कि अन्य समारोहों में नहीं होता।

फिर भी कुछ कारण तो रहा होगा? इसका कोई असर?

– जब करीब 500 से अधिक लोगों को आमंत्रित किया जाए, तो एक से दो प्रतिशत आमंत्रितों का ड्रॉप आउट होना सामान्य बात है। इससे 'विश्व रंग' पर कोई असर नहीं पड़ा। फिर भी ये सवाल आपको उन्ही से पूछना चाहिए। जैसा कि मैने कहा मैं तो उपरोक्त सभी लोगों को अपना मित्र ही मानता रहा हूं। मुझे लगता है, कि इस तथाकथित विरोध को अंतर्विरोध कहना ज़्यादा उचित होगा। 'विश्व रंग' के कार्यक्रम समाप्त हो जाने के बाद फेसबुक पर चली बहसों को मैंने देखा हैं। एक सामान्य पाठक भी उनके अंतर्विरोध को समझ सकता है। वे सभी वैचारिक कुहासे के बीच एक–दूसरे को काटती हुई टिप्पणियां हैं। कहीं–कहीं तो वे मुझे बहुत हास्यास्पद भी लगीं। मैं उन पर अपनी ओर से कोई भी टिप्पणी करना आवश्यक नहीं समझता। वे खुद ही उस संभ्रम को स्पष्ट कर देती हैं जिससे मैं एक्शन के द्वारा बाहर निकलना जरूरी समझता हूं। मुझे जैसा समझ में आया है कुछ मित्रों के मन में इतने बड़े कार्यक्रम में अपनी भूमिका स्पष्ट न हो पाने को लेकर प्रश्न थे, और शयद रोष भी। दिलचस्प यह है कि इनमें से लगभग सभी 'विश्व रंग' के चार चरणों–पुस्तक यात्रा युवा उत्सव, दिल्ली के आयोजन 'आरंभ' या उस दौरान आयोजित 55 संगोष्ठियों में हिस्सा ले चुके थे। मेरे सामने चुनौती यह थी कि 'विश्व रंग' के अंतिम चरण में 7 दिनों तक आयोजित होने वाले लगभग 70 सत्रों में आमंत्रितों के नामों को कैसे प्रस्तुत किया जाये। इसके लिये एक 16 पृष्ठीय प्रोग्राम बुकलेट बनाई गई थी, जिसे वेबसाइट पर रख दिया गया था। किसी भी अंतर्राष्ट्रीय समारोह में एक छोटा सा आमंत्रण पत्र, जो कि हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होता है प्रेषित कर दिया जाता है और आमंत्रितों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे वेबसाइट पर जाकर विस्तृत कार्यक्रम देख लें। हमने भी निमंत्रण पत्र में यही अनुरोध किया था। परंतु अभी हमारे यहां टेक्नोलॉजी के इस तरह के उपयोग की आदत नहीं पड़ी है। सो कार्ड देख कर कुछ भ्रम की स्थिति बन गई। यदि पूरा कार्यक्रम प्रोग्राम बुकलेट में देखा जाता तो शायद त्वरित प्रतिक्रिया की जरूरत नहीं पड़ती। मुझे एक दूसरा कारण यह भी लगता है कि कई मित्र इस बात को पहचान ही नहीं पाये कि यह किसी जन संगठन का नहीं बल्कि एक विश्वविद्यालय का कार्यक्रम है, जो अपनी सीमाओं और बाध्यताओं के भीतर कार्य करता है। उससे जन संगठन जैसी अपेक्षाएं नहीं की जानी चाहिए। एक तीसरा कारण यह भी है कि घनघोर पैठी असहिष्णुता और व्यक्तिवादिता के कारण अब हमें समितियों तक में बैठने में दिक्कत होने लगी है। उदाहरण के लिए हमारे एक वरिष्ठ लेखक खुद से मतभेद रखने वाली उतनी ही वरिष्ठ लेखिका के साथ किसी समिति में बैठना ही नहीं चाहते थे। एक दूसरे मित्र लेखक को भी बैठकों में आकर अपनी बात कहने में दिक्कत महसूस हो रही थी। मेरा मानना है कि जब हम 'अन्य' को अपने साथ लेते हैं तो 'अपना' कुछ त्यागना पड़ता है। इसी तरह व्यापकतर संवाद स्थापित हो सकता है या व्यापकता हासिल हो सकती है। इसमें काफी धैर्य लगता है जो कि आजकल थोड़ा कम हो चला है।

मैं पहले ही बता चुका हूं, कि 'विश्व रंग' के आयोजन पर सोशल मीडिया में चली घटिया बहस का कोई प्रभाव नहीं पड़ा और विश्व रंग अत्यंत भव्यता और सफलता के साथ संपन्न हुआ। एक अनुमान के अनुसार सात दिनों में लगभग 50,000 लोग आये और उनमें बड़ी संख्या में युवा शामिल थे, करीब 500 से अधिक रचनाकारों ने विभिन्न सत्रों में शिरकत की। नेशनल मीडिया के लगभग कई पत्रकार लगातार फेस्टिवल के दौरान उपस्थित रहे तथा हिंदी और अंग्रेजी दोनों के ही राष्ट्रीय मीडिया ने इसे पर्याप्त स्थान दिया। इनमें इंडिया टुडे, आउटलुक, इंडियन एक्सप्रेस, सन्डे गार्जियन टाइम्स ऑफ इंडिया, स्टेट्समैन तथा कई क्षेत्रीय और भारतीय भाषाओं के अखबार शामिल थे। लगभग 10 पत्रिकाओं ने इस अवसर पर अपने विशेषांक भी प्रकाशित किये, जिनमें नया ज्ञानोदय, पक्षधर, कथादेश, समावर्तन, पहला अंतरा और आपकी अपनी पत्रिका दुनिया इन दिनों शामिल हैं। किसी कला और संस्कृति महोत्सव की सफलता को मापने का इससे बड़ा पैमाना और क्या हो सकता है?

'विश्व रंग' को लेकर सोशल मीडिया में चली घटिया बहस का कोई प्रभाव नहीं पड़ा और विश्व रंग अत्यंत भव्यता और सफलता के साथ संपन्न हुआ। एक अनुमान के अनुसार सात दिनों में लगभग 50,000 लोग आये और उनमें बड़ी संख्या में युवा शामिल थे, करीब 500 से अधिक रचनाकारों ने विभिन्न सत्रों में शिरकत की। नेशनल मीडिया के लगभग कई पत्रकार लगातार फेस्टिवल के दौरान उपस्थित रहे तथा हिंदी और अंग्रेजी दोनों के ही राष्ट्रीय मीडिया ने इसे पर्याप्त स्थान दिया।

आपने भव्यता का ज़िक्र किया है। इतनी भव्यता क्यों?

– मैं आपको एक अन्य पत्रिका में लिखे आपके अपने संपादकीय की याद दिलाता हूं जिसमें आपने लिखा है कि 'विश्व रंग ने देश में एक नई नज़ीर स्थापित की है---'। नई नजीर स्थापित करने के लिये काम को नये तरीके से करना पड़ता है। फिर जो भी व्यक्ति 'विश्व रंग' में शामिल हुआ, वह यह नहीं कह सकता कि 'विश्व रंग' में विमर्श का स्तर कहीं भी कमतर था। स्वयं डॉ. सुधीर चंद्रा ने जो कि देश के प्रख्यात बुद्धिजीवियों में शामिल हैं और जिन्होंने गांधी और टैगोर: विरासत और लोकतंत्र विषय पर व्याख्यान दिया था, ने अपने फीडबैक में कहा है कि 'विश्व रंग' की सबसे बड़ी खासियत यह थी कि इसमें चर्चा का स्तर बहुत ऊंचा था, जैसा कि अन्य समारोहों में नहीं होता। ऐसा ही अभिमत डॉ. देरिगा कोकोएवा (कजाकिस्तान), डॉ. लिउडमिला खोखालोवा (मास्को, रूस), डॉ. रिपसिमे नेर्सिस्यान (आर्मेनिया), डॉ. नंदकिशोर आचार्य, डॉ. रमेश चंद्र शाह (भारत) और बहुत से युवा लेखकों और कवियों ने दिया। तसदीक के लिए 'विश्व रंग' के प्रकाशन, उसकी पुस्तकों, वीडियो क्लिप्स तथा ग्रंथावलियों को देखा जा सकता है। इस पूरी सामग्री को प्रॉपर डॉक्यूमेंटेशन की शक्ल भी दी जा रही है। अगर कोई विपरीत टिप्पणी कर रहा है तो उसने शायद इस सब सामग्री को नहीं देखा है और वह वनमाली सृजनपीठ की डॉक्यूमेंटेशन की गहरी परंपरा से भी अनभिज्ञ है। एक अंतर्राष्ट्रीय समारोह अंतर्राष्ट्रीय पैमाने और स्तर पर ही आयोजित होगा और क्योंकि ऐसा किया गया इसलिये उसकी सुव्यवस्था और सुचारू तथा कुशल संचालन को इतनी राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय प्रशंसा मिली। इसमें 'वैभव' जैसी कोई बात नहीं है। युवाओं व स्कूली बच्चों के आकर्षण के लिये प्रदर्शनियों तथा गतिविधियों का आयोजन मिंटो हॉल के प्रांगण में किया गया था। इसमें 'वैभव' कहां से आ गया?

यहां मैं आपको एक समानांतर उदाहरण देना चाहता हूं। हाल ही में मैं कजान (रूस) में आयोजित वर्ल्ड स्किल कांपिटिशन में भारत की ओर से भाग लेने गया था। इसमें 114 देश भाग ले रहे थे। मुझे अपेक्षा थी कि स्किल कंपिटिशन में कुछ फैक्टरी जैसा ड्राय इंडस्ट्रियल वातावरण देखने मिलेगा, पर उन्होंने उसे ओलंपिक खेलों जैसा बनाया। उद्घाटन तथा समापन सत्र भव्यता के साथ आयोजित किये गये। बाहर प्रांगण में रूस के लोक गायक और लोक नृत्यकार भीतर स्किल कांपिटिशन के शेड्स तथा कॉरिडोर में वर्चुअल रियेलिटी तथा ऑटिर्फिशियल इंटेलिजेंस आधारित इंटरेक्टिव स्टेशन जिसमें स्कूली बच्चे कॉलेज के छात्र तथा आम जन भी हिस्सा ले सकते थे। कई समानांतर कांफ्रेंसेस और संगोष्ठियां भी आयोजित थीं। अब चीजों को अलग और न, तरीके से करने का समय है, विशेषकर अगर आपको युवाओं को भी शामिल करना है तो। आर्मीनिया से आई रिपसिमे नेर्सिस्यान ने कहा कि वे 'विश्व रंग' जैसा ही कुछ अपने देश में करना चाहेंगी।

दिल्ली के एक प्रसिद्ध साहित्यकार ने विचारहीनता की भी बात की थी ?

– यदि मैं ठीक समझ रहा हूं तो आप जिनकी बात कर रहे हैं, मैं उनका ज़िक्र ऊपर कर चुका हूं। दिलचस्प ये है कि विश्व रंग में जो पहली पुस्तक लोकार्पित हुई ('शब्द, ध्वनि और दृश्य' 11 रचनाकारों से संवाद) उसमें स्वयं उनका साक्षात्कार शामिल है और उनके साथ ही राजेश जोशी, नरेश सक्सेना, रवींद्र कालिया, लीलाधर मंडलोई, ममता कालिया सहित अपने समय के 11 रचनाकारों के साक्षात्कार शामिल हैं, जिन्होंने आने वाले सत्रों में विमर्श को दिशा दी। मेरा पूरा विश्वास है कि वे खुद स्वयं को और इन रचनाकारों को विचारहीन नहीं बता रहे हैं और न ही वे डॉ. सुधीर चंद्रा, डॉ. नंद किशोर आचार्य, डॉ. रमेश चंद्र शाह, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, डॉ. गेनादि श्लोम्पेर (इसराइल), डॉ. हाईस वेसलर (जर्मनी), प्रियंवद, शशांक और ऋतुराज जैसे रचनाकारों को विचारहीन कह रहे हैं, जिन्होंने विभिन्न वैचारिक सत्रों की अध्यक्षता की या जिन्होंने लेखक से मिलिये कार्यक्रम की जीवंत बहसों में हिस्सा लिया। निश्चित ही वे उन नोबल लॉरेट्स को भी विचारहीन नहीं बता रहे हैं, जिनकी कविताओं के अनुवाद दिल्ली के 'आरंभ' कार्यक्रम में 'कविता का विश्व रंग' के नाम से लोकार्पित हुए, जिनमें से एक का अनुवाद उन्होंने खुद किया था। विश्व रंग में लगभग 40 सत्र वैचारिक सत्र या लेखक से मिलिये जैसे वैचारिकता से भरपूर सत्र थे। ऐसी स्थिति में विचारहीनता की बात या तो अज्ञानतापूर्ण है या हास्यास्पद। दोहराने की कीमत पर भी मैं एक बार पुनः स्पष्ट कर देना चाहता हूं, कि 'विश्व रंग' शायद देश का पहला उत्सव था, जो एक ओर तो हिन्दी और भारतीय भाषाओं को केंद्रीयता प्रदान करता था, जिसने बोलियों से भाषा के रसभरे रिश्ते को पुनजीर्वित करने की बात की, जिसने विश्व में हिन्दी के अवसरों और चुनौतियों पर सारगर्भित चर्चा की और जिसने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के पठन-पाठन तथा अनुवाद की समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया, तो दूसरी ओर वर्तमान समय में टैगोर की अंतर्राष्ट्रीयता, मानवीयता और रेडिकल ह्यूमनिज्म की जरूरत पर नई बहस को जन्म दिया। टैगोर, गांधी, इकबाल और फ़ैज़ पर केंद्रित सत्रों ने प्रतिभागियों को एक नई वैचारिक स्फूर्ति प्रदान की। छूटे हुए समूहों की प्रस्तुति (जैसे थर्ड जेंडर की कविताएं) में भी एक नया उजास लोगों को देखने मिला। 'विश्व रंग' में आये बिना अगर कोई विचारहीनता की बात करता है तो एक तो वह टैगोर की परंपरा और स्वयं के कवि होने का अपमान करता है और दूसरा शायद यह मानता है कि वह अकेला विचारवान है और बाकी सभी विचारहीन। इससे ज्यादा अहम्मन्यता की स्थिति क्या हो सकती है?

यह तय है कि भोपाल में 'विश्व रंग' के सफल आयोजन के बाद एक वैश्विक नेटवर्क उभरेगा तथा 'विश्व रंग' और बड़ा होकर लौटेगा।

'विश्व रंग' के जरिए जीवन के उपकरणों को साधने का प्रयोजन किस हद तक सधा?

– जीवन के उपकरणों को साधने का प्रयोजन एक दूरगामी प्रक्रिया है। मेरा मानना है, कि यह उपकरण संगीत–कला तथा साहित्य के पास ज्यादा हैं, बनिस्बत विज्ञान के। अगर हमें आज के समय में किसी अंतर्राष्ट्रीयता की तलाश करनी है, तो एक बार फिर गांधी और टैगोर की ओर दृष्टिपात करना होगा, कलाओं के भीतर अंतर्संबद्धता की तलाश करनी होगी तथा प्रकृति से समन्वय स्थापित करना होगा। इन सभी दिशाओं में 'विश्व रंग' ने सफल शुरूआत की है। 'विश्व रंग' का सबसे बड़ा हासिल, उत्साह तथा उम्मीद की वह भावना है, जिससे लबरेज होकर सभी प्रतिभागी लौटे। कईयों ने तो लिखा, कि वे लौटना नहीं चाहते हैं और 'विश्व रंग' को कभी नहीं भुला पायेंगे।

भावी 'विश्व रंग' को लेकर क्या योजना है? क्या इसमें विस्तार, नये आयामों और नये युग्मों का समावेश होगा?

– 'विश्व रंग' इस घोषणा के साथ समाप्त हुआ है कि हम फिर लौटेंगे। फिलहाल तो 'विश्व रंग' की एक वैश्विक समन्वय समिति बनाई जा रही है, जो करीब 20 देशों में 'विश्व रंग' की अवधारणाओं को आगे बढ़ाने का काम करेगी। इनमें रूस, उज़्बेकिस्तान, कजाकिस्तान, ब्रिटेन, अमेरिका, कनाडा, डेनमार्क, सिंगापुर, ऑस्ट्रेलिया जैसे देश शामिल हैं। भारत में भी अब तक काम कर रही समन्वय समिति को औपचारिक रूप दिया जा रहा है, जिसमें सभी विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधि शामिल होंगे। सोशल इनोवेशन में विश्वविद्यालयों की भूमिका विश्व भर में केंद्रीय स्वरूप ग्रहण करती जा रही है और देश के प्रमुख सामाजिक उद्यमी और इन्नोवेटर के रूप में हमारे विश्वविद्यालय इसमें शीर्षस्थ भूमिका निभाएंगे। हर्ष की बात है कि ब्रिटेन, नीदरलैंड्स, अमेरिका एवं रूस जैसे कई देशों से मिनी 'विश्व रंग' आयोजित करने के प्रस्ताव आया हैं। फिलहाल भोपाल में 2 वर्षों में एक बार 'विश्व रंग' आयोजित करने की योजना है। उसमें बच्चों पर केंद्रित बाल रंग भी शामिल किया जाए, ऐसा प्रस्ताव है। यह तय है कि भोपाल में 'विश्व रंग' के सफल आयोजन के बाद एक वैश्विक नेटवर्क उभरेगा तथा 'विश्व रंग' और बड़ा होकर लौटेगा।

परंपरा और आधुनिकता का संयोग है विश्वरंग

भारत रत्न प्रणव मुखर्जी (पूर्व राष्ट्रपति)

शुभकामना

श्री संतोष कुमार चौबे, कुलाधिपति, रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, विशिष्ट अतिथि, देवियों और सज्जनों,

मैं आप लोगों के बीच प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित नहीं हूँ इसके लिए मैं खेद व्यक्त करता हूँ। अपरिहार्य और आकस्मिक परिस्थितियों के कारण मैं झीलों के शहर भोपाल नहीं आ पाया। यह मेरी क्षति है, क्योंकि मैंने विलक्षण साहित्यकारों और प्रतिभाशाली कलाकारों के सानिध्य का अवसर खोया है। मुझे जानकारी दी गई है कि अनेक साहित्यकार और कलाकार विश्व के विभिन्न भागों से 'टैगोर अंतराष्ट्रीय साहित्य और कला महोत्सव' में भाग लेने आये हैं।

मैं कुलाधिपति और रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के प्रबंधन को इस प्रतिष्ठित महोत्सव के आयोजन की बधाई देता हूँ। यह महोत्सव नोबल पुरस्कार विजेताओं, बूकर अवार्ड विजेताओं, साहित्य अकादमी विजेताओं, पद्म, पुरस्कार विजेताओं सहित विश्व के कवि, लेखक, कलाकारों, कला-साहित्य के विद्यार्थी और गणमान्य नागरिकों का संगम हैं।

विश्व में एक-दूसरे की संस्कृति और साहित्य से प्राप्त ज्ञान से ही सभ्यताओं का मिलन होता है। इस विचार से रबीन्द्रनाथ टैगोर प्रभावित थे। मैं भारतीय साहित्य को विशाल, निडर और रचनात्मक भारत के जीवन और आसपास के विश्व के लिए बनता देखना चाहता हूँ।

मैं गुरूदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर, जो कि विश्व में संस्कृति के क्षेत्र में विख्यात शख्सियतों में से एक हैं और भारत भूमि के महान पुत्र हैं। गुरूदेव को उनके साहित्यिक कार्य के लिये संपूर्ण विश्व में सम्मान मिला है, उनको श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए अपनी बात प्रारंभ करता हूँ।

वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे जिन्होंने भारतीय संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय योगदान दिया। वह कवि, लेखक, संगीतकार, चित्रकार और उत्कृष्ट दार्शनिक थे। वह संपूर्ण भारत के साथ-साथ पूरी वैश्विक मानवीयता से संपृक्त थे। टैगोर का काम पूरे विश्व में फैला और विभिन्न भाषाओं में पढ़ा गया। यह प्रसन्ता की बात है कि आज उनके नाम से साहित्य और कला महोत्सव मानने के लिये हम एकत्रित हुए है। विश्व में एक-दूसरे के संस्कृति और साहित्य

औपनिवेशिक भारत में यह दृढ़तापूर्वक नये भारत की पहचान है जो वैश्विक स्पेस में आधुनिकता और पारंपरिकता का मिश्रण है। वह टैगोर का समय था, यह टैगोर के सृजन और विचार से आपसी तालमेल का बेहतर समय है।

से प्राप्त ज्ञान से ही सभ्यताओं का मिलन होता है। इस विचार से रबीन्द्रनाथ टैगोर प्रभावित थे। विश्व भारती में उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि जो भी सभ्यताओं में श्रेष्ठ है। उस पर हर व्यक्ति को कायम रहना चाहिए। विश्व भारती का विचार विश्व की सभी जाति, पंथ के मध्य सामंजस्य की स्थापना करना है।

हम अकसर देखते हैं कि राष्ट्र दृढ़ सीमाओं के साथ अखंड होते हैं, परन्तु भविष्यदर्शी रबीन्द्रनाथ टैगोर ने हमें यह अहसास कराया कि साहित्य, इतिहास और संस्कृति मानवीयता के सामान्य विचार का प्रतिनिधित्व कर राष्ट्रीय सीमाओं का अतिक्रमण करती है। यही 'विश्वबोध', मानवीयता को साझा करने की भावना है जिसे टैगोर ने अपने साहित्य और संगीत में प्रस्तुत किया है। 26 मई 1921 में स्टाकहोम में रबिन्द्रनाथ टैगोर ने अपने महत्वपूर्ण भाषण में यह प्रश्न पूछा कि ''क्या कारण हो सकता है कि मेरी कविताओं को इतनी अधिक स्वीकार्यता और सम्मान मिलता है''! इसी भाषण में उन्होंने कहा कि मेरे देशवासी भी सम्मान मेरे साथ साझा करते हैं।

औपनिवेशिक भारत में यह दृढ़तापूर्वक नये भारत की पहचान है जो वैश्विक स्पेस में आधुनिकता और पारंपरिकता का मिश्रण है। वह टैगोर का समय था, यह टैगोर के सृजन और विचार से आपसी तालमेल का बेहतर समय है। दैवीय शक्ति को प्रस्तुत करने का आनंद, प्रकृति के विशाल विस्तार में भाग लेने और दैवीय शक्ति को साकार करने के लिये स्वयं को आनंदित करने का सुख, मानवता के जिस स्वरूप को उन्होंने बनाया वो वर्ष 1913 में और अधिक प्रासंगिक हो गये जब उन्हें नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। जो लोकाचार उन्होंने स्थापित किया है वो आज भी उन्हें प्रासंगिक बनाता है। भारत में साहित्य की बड़ी और समृद्ध परंपरा रही है। यह समृद्धि अद्वितीय रूप से है। भारत की भाषाई धरोहर की समृद्धि और विविधता वाल्मिकी से भादलू, त्रिभादलू से टैगोर, नानक से निराला और मीरा से मुंशी प्रेमचंद तक है। हम सौभाग्यशाली है कि हमारे पास स्थाई रूप से अद्वितीय लेखक और कवि है। उन्होंने यह बताया कि कैसे साहित्य किसी देश के जीवन, इतिहास और संस्कृति का संपूर्ण भाग है। उर्वरता के असीम स्त्रोत की तरह वह कार्य कर रहा है।

हमारे रचनाकारों ने मानवीय जीवन के मूलभूत सत्य को निर्भीकतापूर्वक खोजा। वो साधक थे जो इस अनादि प्रश्न के उत्तर की खोज में थे कि ''मनुष्य और प्रकृति और विधाता के मध्य क्या संबंध है'' और जो अनुभव है, उन्हें जो भी आभास हुआ वो उसे ईमानदारी और प्रामणिकता से व्यक्त करते हैं। जो साहित्य की व्यक्तिगत रचनात्मकता की विशेषता है भारतीय साहित्य ने स्वयं की परख के लिये वास्तव में कालातीत मानक स्थापित कर लिया है। आज पूरा विश्व महात्मा गांधी की 150वीं जयंती मना रहा है, मैं बापू के कला और साहित्य के विचारों का स्मरण करना चाहता हूँ। उन्होंने लिखा है जिसे मैं उद्घृत कर रहा हूं- ''मैं जो कला और साहित्य चाहता हूँ वो जन सामान्य की बात कहे''। कला और कलात्मक रचनात्मकता हमेशा समाज के सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक वातावरण का प्रतिबिंब होती है।

हमारे आज़ादी के संघर्ष के समय, सभी महान लेखक यह विश्वास रखते थे कि भारत की आज़ादी में उनके लेखन का योगदान हो सके। यह वास्तव में संपूर्ण मानवता के लिये था। उनके इस अग्रणी कार्य ने अन्याय को उजागर किया और हमारे समाज में सुधार के लिये उत्प्रेरक की भूमिका निभाई। अब समय परिवर्तित हो गया है, विश्व पहले की अपेक्षा सिमट गया है। जो कल्पना गुरूदेव रबिन्द्रनाथ टैगोर ने की थी, वो आज तकनीक ने संभव कर दी है। यद्यपि आज भी उदारीकरण के इस दौर में अच्छा साहित्य किसी उद्देश्य के बिना नहीं हो सकता है। साहित्य के किसी विशिष्ट कार्य का उद्देश्य लेखक के लिये अन्वेषण करना और पाठकों के लिये खोज करना है। लेखक के पास संयमित स्वतंत्रता होनी चाहिए कि जैसे वह देखता या देखती है उसका अन्वेषण कर उसे व्यक्त कर सकें।

यह मेरी इच्छा है कि मैं भारतीय साहित्य को विशाल, निडर और रचनात्मक भारत के जीवन और आस-पास के विश्व के लिये बनता देखूँ। इसे जिस समाज में हम रह रहे है उसका और हमारा दर्पण बनने दें। साहित्य को सत्य का श्रेष्ठ उदाहरण बनने दो। समसामयिक भारतीय साहित्य हमें प्रफुल्लित करे। उदार करे, प्रतिक्रिया उत्पन्न करे, नाराज करे और आंदोलित करे, उत्प्रेरित करे, प्रेरित करे। हमें नये दृष्टिकोण के लिये साहित्य प्रेरित करे। इन सपनों को सच करने के लिये हमें काम करने पड़ेंगे। कला व साहित्य को नये भारत व नये विश्व का उत्सव मनाने दें। धन्यवाद, जय हिन्द।

शब्द, रंग और चितेरा

अशोक भौमिक

प्रगति

भारतीय साहित्य में रबीन्द्रनाथ ठाकुर की ख्याति विश्व-कवि के रूप में होने के साथ-साथ एक समर्थ कथाकार, नाटककार और सामाजिक चिन्तक के रूप में भी है। उनकी समस्त रचनाओं में अपने समय की गहरी समझ दिखाई देती है। रबीन्द्रनाथ ठाकुर की बहुसंख्य रचनाएँ, जो भारतीय महाकाव्यों और मिथकों पर आधारित हैं, वहाँ भी हम रचना के पीछे उनकी आधुनिक और समकालीन सोच को साफ़ महसूस कर पाते हैं। उनकी रचनाओं में अन्तर्निहित विचार, उनके शिल्प के वैभव में ग़ुम नहीं होते बल्कि इसी कारण वे शास्त्रीय होकर भी लोकप्रिय हैं और लोकप्रिय होकर भी शास्त्रीय!

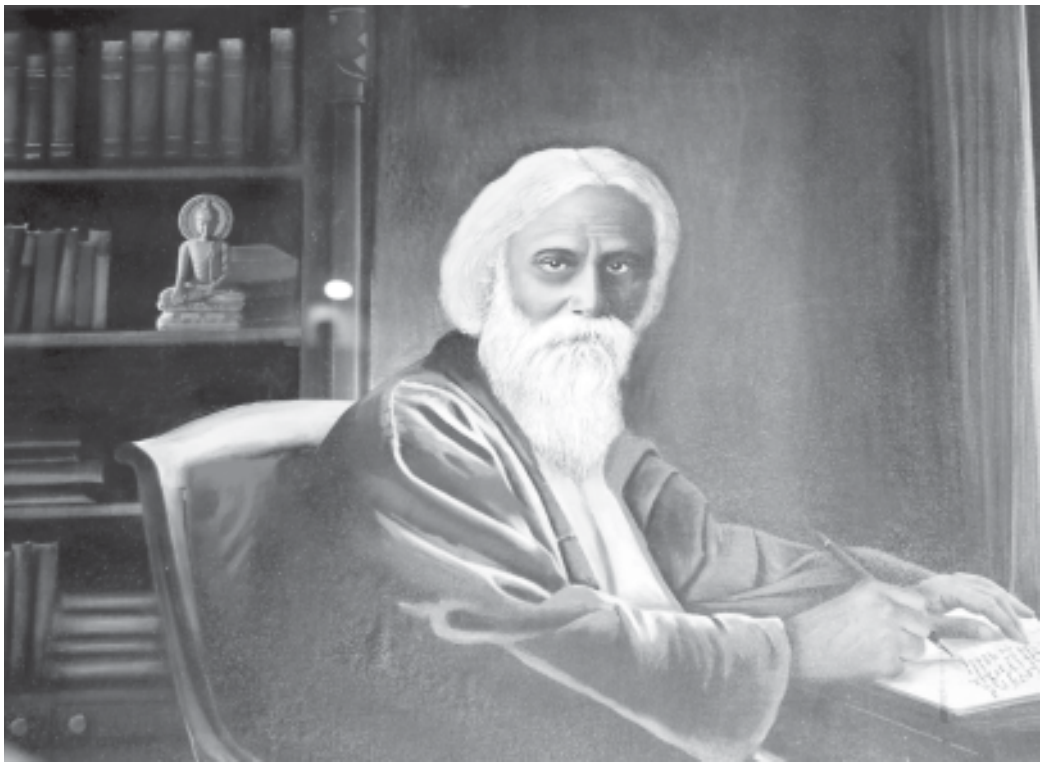

चित्र : प्रभु जोशी

शब्दों की दुनिया के कोलाहल से चलकर एक ख़ामोश कला में खो जाने के इस सफ़र को हम शायद उन्हीं की बातों से बेहतर समझ सकते हैं।

उनका युग बंगाल में औपनिवेशिक और सामन्ती प्रवृत्तियों का एक अन्धकार काल था। अंग्रेजों और (कुछ सीमित क्षेत्रों में) फ्रांसीसियों का उपनिवेश बनने के ऐतिहासिक कारणों के चलते बंगाल में एक महानगर केन्द्रित सभ्यता का विकास हो चुका था जो दुर्भाग्य से कलकत्ते में रहने वाले धनी वर्ग तक ही सीमित थी। दूसरी तरफ़ बंगाल का विशाल ग्रामीण हिस्सा था, जिसे अशिक्षित और कुसंस्कारों से ग्रस्त मान लेना शहरी 'बाबुओं' के लिए परम आत्मसन्तुष्टि का कारण था। इस ग्रामीण बांग्ला को रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने नज़दीक से जानने की कोशिश की थी। अपनी अनेक रचनाओं, जैसे - घोरेबाइरे, नोष्टोनीड, चार अद्धाय आदि में जहाँ वे एक रबीन्द्रकालीन औपनिवेशिक शहर कलकत्ते के अभिजात वर्ग के अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण करते हैं, वहीं चित्रांगदा, पुजारिनी, श्यामा, कर्ण-कुन्ती संवाद, वाल्मीकि प्रतिभा आदि में वे पौराणिक कथाओं तक जाते हैं। अपनी रचनाओं में, रबीन्द्रनाथ ठाकुर ग्रामीण-कस्बाई महानगरीय जीवन और संस्कृतियों तथा वर्तमान एवं अतीत के बीच सहज आवाजाही करते हैं। उनकी पारलौकिक विषयों पर लिखी गद्य रचनाएँ (क्षुधितोपाषान, मोनिहारा आदि) अपने वैविध्य के कारण हमें चकित करती हैं। अचलायतन,

रक्तकरबी जैसी अपनी अनेक कालजयी रचनाओं के माध्यम से वे आने वाले वक्त के जन को सम्बोधित करते हुए दिखते हैं। समकालीन से पुराण तक! रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने सदियों पुराने सामन्ती मूल्यों में फलते-फूलते धार्मिक पाखण्ड, नियतिवाद और ब्राह्मणवाद के खिलाफअपनी सार्थक रचनाओं के जरिये जनता में आधुनिक और वैज्ञानिक विचारों को संचारित करने का बारम्बार प्रयास किया। वास्तव में देशप्रेम का अर्थ उनके लिए यही था।

रबीन्द्रनाथ की रचनाओं के बारे में यहाँ यह भूमिका इसलिए ज़रूरी है क्योंकि वे अपनी रचनाओं के विषयों और उनके विश्लेषणों में अत्यन्त आधुनिक होने के बावजूद कला (नाटक, कविता, कहानी, उपन्यास और गीतों आदि) में वे इसकी पूर्व-स्थापित संरचना या ढाँचे में कोई बहुत बड़ा क्रान्तिकारी प्रयोग करते नहीं दिखते। रबीन्द्रनाथ ठाकुर जहाँ अपने आरम्भिक वर्षों में गुरु ग्रन्थ साहब और कबीर से प्रभावित हुए, वहीं आगे चलकर मूर्ति-पूजा विरोधी ब्रह्म-समाज से गहराई से जुड़ गए। इन सब का प्रभाव उनके समस्त रचनाकर्म में दिखाई देता है। उनकी साहित्यिक रचनाएँ, उनके अपने मानवतावादी दर्शन पर उनके विश्वास का प्रतिनिधित्व करती हैं, साथ ही वे पाठकों के 'मनोरंजन' को अपने सरोकारों से अलग नहीं करते। पर इन सबके ठीक विपरीत, अपने चित्रों में वे भारतीय चित्रकला के परम्परागत स्वरूप को सीधे चुनौती देते हैं। चित्रकला सम्बन्धी उनके विचार, जो उन्होंने अपने लेखों, पत्रों और व्याख्यानों में व्यक्त किये हैं, हमें चित्रकला के एक सर्वथा नए सत्य से परिचित कराते हैं।

> गुरुदेव के चित्रों को लेकर भारतीय कला-जगत उस समय क्या सोच रहा था, यह शायद इतिहासकार बता पाएँगे, पर उनके रचनात्मक जीवन में आए नए परिवर्तन के प्रति वे बेहद सजग थे और यह ख़ूब समझते थे कि भविष्य उन्हें जब भी याद करेगा, उनके कलाकार की भूमिका को भुला नहीं सकेगा।

यह तो हम सभी जानते हैं कि रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने जीवन के अन्तिम दस-बारह वर्षों में पूरी तन्मयता से चित्र-रचना की थी। उन्होंने चित्रकला को 'शेष बोयेशेर प्रिया' या 'जीवन संध्या की प्रेयसी' माना था। रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने चित्रकला को 'खेल के बहाने वक्त गुजारने की संगिनी माना था ('खेलार छले बेला काटानोरशोंगिनीएईचित्रोकला'), पर जीवन के अन्तिम पड़ाव पर पहुँचकर जब कोई किसी नए काम को इतनी तन्मयता के साथ करता है तो यह कतई ज़रूरी नहीं कि यह उनके रचना कर्म का एक विस्तार मात्र ही हो। रबीन्द्रनाथ ठाकुर अपने जीवन में लम्बे समय तक कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, गीत, नृत्य आदि विधाओं में पूरी ऊर्जा और तन्मयता के साथ सक्रिय रहे किन्तु जीवन के अन्तिम दस वर्षों की अवधि में चित्रकला को जिस गम्भीरता से उन्होंने लिया, उसे उनके रचना कर्म का महज एक 'विस्तार' नहीं माना जा सकता, बल्कि ऐसा अनुभव होता है कि चित्रकला को उन्होंने अपने अन्य रचना-कर्म का 'विकल्प' माना।

शब्दों की दुनिया के कोलाहल से चलकर एक खामोश कला में खो जाने के इस सफ़र को हम शायद उन्हीं की बातों से बेहतर समझ सकते हैं।

निर्भीक कला चिंतक

जैसा कि हम जानते हैं कि अपने पत्रों में अपने विचारों को पिरो देने की उनमें अद्भुत क्षमता थी। अपने पत्रों में, कभी-कभी वे बेहद सहज और मज़ाकिया लहज़े में अपनी बातें भी करते हैं किन्तु अधिकांश पत्रों में ऐसा प्रतीत होता है कि वे बहुत सजग रूप से अपने विचारों के दस्तावेज़ रच रहे थे। अपनी मज़बूरियों, अपने दु:खों का उन्होंने बहुत कम शब्दों में जिक्र भर किया है। ठीक उसी प्रकार वे अपने विचारों की भी कोई व्याख्या प्रस्तुत नहीं करते।

अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में उन्होंने अपने पत्रों में चित्रकला पर जितना लिखा, उतना पहले कभी नहीं लिखा। अपने पत्रों, लेखों और व्याख्यानों में जब भी उन्होंने चित्रकला पर लिखा या कहा, उनमें वे एक स्वतन्त्र और निर्भीक कलाचिन्तक की भूमिका में कला की कई स्थापित मान्यताओं के खिलाफएक नयी ज़मीन तैयार करने का प्रयास करते दिखे। यहाँ यह भी सच है कि रबीन्द्रनाथ ठाकुर इस बात को बखूबी समझते थे कि उनके अपने देशवासी उनकी बातों से आसानी से सहमत नहीं होंगे।

पत्रों, व्याख्यानों और लेखों के अलावा अपने दैनन्दिन रचनाकर्म के साथ-साथ जब-जब कोई विचार उनके मन में आता था, रबीन्द्रनाथ ठाकुर उसे अपनी डायरी में लिखकर रख लेते थे। उनकी ये टिप्पणियाँ जीवन, रचना, किसी घटना या किसी स्थान पर कभी-कभी स्वीकारोक्तियों के रूप में भी नज़र आती हैं। इन समस्त संक्षिप्त टिप्पणियों को संकलित कर सन् 1912 में 'छिन्न पत्र' के नाम से प्रकाशित किया गया था जिसमें पहली टिप्पणी या लघु-लेख

अक्टूबर, 1885 का है। इसी पुस्तक में प्रकाशित दिनांक 17 जुलाई 1893 की टिप्पणी रबीन्द्रनाथ की कला-यात्रा को समझने में हमारी मदद करती है। वे लिखते हैं, 'अगर मुझे सच कहना हो तो मैं कहूँगा कि यह जो चित्र-विद्या है, उसकी ओर भी मैं हरदम एक हताश प्रेम की लालच भरी निगाहों से देखता रहा हूँ - पर उसके मिलने की मुझे कोई उम्मीद नहीं है। साधना करने की अब उम्र नहीं रही। दूसरी विद्याओं जैसे ही उसे आसानी से नहीं हासिल किया जा सकता है...। बस केवल कविता को साथ लिए चलूँ, यही सबसे आसान है मेरे लिए। लगता है, इसी (कविता) ने ही मुझे अपना सब-कुछ सौंपा है!'

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के इस बयान से यह तो स्पष्ट है कि उनका चित्रकला के प्रति भले ही आकर्षण क्यों न रहा हो, चित्र-रचना की बात तो वह कतई नहीं सोच रहे थे। पर इसके सात वर्षों बाद (17 सितम्बर, 1900 ई.) में जगदीश चन्द्र बोस (लब्धप्रतिष्ठ विज्ञानी और कला मर्मज्ञ) को लिखे एक पत्र से हमें पता चलता है कि रबीन्द्रनाथ ठाकुर शायद चित्र-रचना की ओर धीरे-धीरे आकृष्ट हो रहे थे। यहीं पर यह भी समझ में आता है कि ऐसा वे किसी पूर्णकालीन या पेशेवर चित्रकार बनने के उद्देश्य से नहीं कर रहे थे।

'यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैं एक स्केच बुक लेकर चित्र बना रहा हूँ। कहना न होगा कि मैं ये चित्र पेरिस की किसी प्रदर्शनी के लिए नहीं बना रहा हूँ...। पर जिस तरह से अपने बदसूरत बच्चे के लिए माँ के मन में एक ख़ास प्रेम होता है, उसी प्रकार जो विद्या नहीं आती उसके प्रति लोग दिल से एक ख़ास आकर्षण महसूस करते हैं। इसीलिए जब मैंने तय कर लिया कि अब थोड़ा आलस का मज़ा लूँ, तब खोजते-खोजते मेरे हाथ चित्रकला आ लगी। इस दिशा में कुछ हासिल करने में सबसे बड़ी दिक्कत यह आ रही कि जितना मैं पेन्सिल का उपयोग कर रहा हूँ उससे भी ज़्यादा मुझे रबर के इस्तेमाल करने का अभ्यास होता जा रहा है - इसलिए मृत राफ़ेल (विश्व प्रसिद्ध इतालवी चित्रकार: 1483-1520 ई.) अपनी कब्र में निश्चित होकर सोये रह सकते हैं कि मेरे हाथों उनके यश में कोई कमी नहीं होने वाली!'

रबीन्द्रनाथ ठाकुर, जो सन् 1900 ई. में चित्र-रचना के बारे में लिखते हुए स्पष्ट कहते हैं कि पेरिस (विश्व में चित्रकला का सबसे महत्वपूर्ण माना जाने वाला केन्द्र) में प्रदर्शनी करने के लिए चित्र नहीं बना रहे हैं। वही रबीन्द्रनाथ ठाकुर तीस साल बाद अपनी लगन और आत्मविश्वास के चलते एक ऐसे स्तर तक पहुँच जाते हैं जहाँ उसी शहर यानी कि पेरिस की गैलेरी पिगाले में (मई 2, 1930 से मई 19, 1930 ई.) उनकी पहली प्रदर्शनी का आयोजन होता है। यही नहीं, मात्र एक वर्ष (मई 1930 से मई 1931 ई.) के दरम्यान फ्रांस, इंग्लैंड, जर्मनी, डेनमार्क, स्विट्ज़रलैण्ड, रूस और अमेरिका में उनकी एकल प्रदर्शनियों का सफल आयोजन होता है।

चित्र : रबीन्द्रनाथ

मुक्ति का आनंद

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों को लेकर तत्कालीन भारतीय कला-जगत क्या सोच रहा था, यह शायद इतिहासकार बता पाएँगे, पर रबीन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं अपने रचनात्मक जीवन में आए इस नए परिवर्तन के प्रति बेहद सजग थे और यह ख़ूब समझते थे कि भविष्य उन्हें जब भी याद करेगा, उनके कलाकार की भूमिका को काटकर याद नहीं कर सकेगा। रबीन्द्रनाथ ठाकुर दिनांक 24 अक्टूबर, 1930 ई. को एक पत्र में लिखते हैं, 'मैंने (पहले) कभी चित्र नहीं बनाये थे, सपने में भी यह यक़ीन नहीं किया था कि कभी चित्र बनाऊँगा। पिछले दो-तीन वर्षों में मैंने बड़ी तादाद में चित्र बनाये और यहाँ (विदेश में) लोगों ने उनकी तारीफ़ भी की है... जीवनग्रन्थ के सभी अध्याय जब समाप्त होने को आये हैं, तब एक अभूतपूर्व ढंग से मेरे जीवनदेवता ने उसका परिशिष्ट लिखने के लिए मुझे साधन जुटा दिया है।'

रबीन्द्रनाथ ठाकुर अपने जीवन के अन्तिम दौर में चित्रकला से कितनी गहराई से जुड़ गए थे, इस बारे में हम सभी जानते हैं पर उनका एक ख़ास बयान हमें कई बातों पर सोचने के लिए मज़बूर करता है। अपने एक पत्र में (07 नवम्बर, 1928 ई.) वे एक स्थान पर लिखते हैं कि 'अब मैं चित्रकला से इस कदर जुड़ गया हूँ कि प्राय: यह भूल जाता हूँ कि मैं कभी कविता भी लिखा करता था।' निस्सन्देह यह एक बेहद महत्वपूर्ण स्वीकारोक्ति है क्योंकि यह उस व्यक्ति का बयान है जिन्होंने न केवल असंख्य कविताएँ रचीं, जिन्हें कविता के लिए ही नोबेल पुरस्कार मिला था, बल्कि जिन्हें विश्व-कवि के रूप में ही लोग जानते हैं। ऐसा लगता है कि उन्हें चित्रकला में 'मुक्ति' का एक ऐसा आनन्द मिला था जिसे वे शायद उम्र भर साहित्य और अन्य कला विधाओं में तलाशते रहे थे।

चित्र-रचना में वे किस कदर डूब गए थे इसका प्रमाण श्री अमिय चक्रवर्ती को लिखे एक और पत्र में मिलता है। 'आजकल लिखने से ऊब हो गयी है मुझे। मेरा दिल आदतन बस चित्र बनाने को करता है। मेरा कलाकर्म अब दौड़ रहा है बस चित्रों (चित्र-रचना) की ओर। इस बीच अगर कहीं से भाषण देने की फरमाइश आती है तो मेरा धैर्य टूट जाता है। पर क्या करें! दूसरा कोई उपाय भी तो नहीं... टैगोर को कभी शिक्षा-संस्कारक बनना पड़ रहा है, तो कभी ग्राम-संस्कारक और कभी विश्व-संस्कारक। अब सब भेष त्यागकर चित्रकूट के शीर्ष पर एकान्तवास करने को मन करता है' (23 अक्टूबर, 1934)।

इसी बात को रबीन्द्रनाथ 12 मार्च, सन् 1938 को विलियम रोटेन्सटाइन को लिखे पत्र में भी दोहराते हैं, '....और यह चित्रकला, मेरे मन की नियमित क्रीड़ा-साथी बन मुझे साहित्यिक वाचालता (talkativeness) या मुखरता से ज़रूरी विकर्षण प्रदान कर रही है। यह मानो एक सपना हो...!'

चित्र : रबीन्द्रनाथ

रबीन्द्रनाथ ठाकुर किस गहराई से चित्रकला से जुड़ते चले गए, इसका प्रमाण हमें इन टिप्पणियों से मिलता ज़रूर है, पर हम प्रतिभा के उस विस्फ़ोट का शायद ही अनुमान लगा सकते हैं। विश्व के अनेक रचनाकार हैं जिन्होंने सत्तर की उम्र के बाद भी अपनी रचनात्मक सक्रियता को कम नहीं होने दिया, किन्तु एक नितान्त नई विधा में, बिना किसी व्यवस्थित कला-शिक्षा के रबीन्द्रनाथ ठाकुर का अपनी बढ़ती उम्र में चित्रकला के क्षेत्र में आगमन और अपने जीवन के अन्त तक उत्तरोत्तर बढ़ती उनकी सक्रियता हमें अचम्भित करती है। शायद पैशन, आवेश, अनुराग या जूनून शब्द इसकी ठीक-ठीक व्याख्या नहीं कर सकते।

प्रचलित अवधारणा को चुनौती

विख्यात फिल्म निर्देशक और कथाकार सत्यजीत राय ने रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों पर कहा है 'रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों और रेखाचित्रों की संख्या दो हज़ार से कहीं ज़्यादा है। चूँकि उन्होंने (चित्र-रचना का कार्य) देर से शुरू किया था, यह एक चकित करने वाली उर्वरता है। यहाँ इसका विशेष उल्लेख ज़रूरी है कि वे किसी देशी या विदेशी चित्रकार से प्रभावित नहीं थे। उनके चित्र किसी परम्परा से विकसित नहीं हुए। वे निस्संदेह मौलिक हैं। कोई उनके चित्रों को पसन्द करे या न करे पर ये तो मानना ही पड़ेगा कि वे अनूठे हैं।'

हज़ारों सालों से चली आ रही भारतीय कला अवधारणा को, पहली बार रबीन्द्रनाथ ठाकुर के साथ-साथ अमृता शेरगिल चुनौती देती हैं और अपने चित्रों को कथाओं और सन्दर्भों से मुक्त करती हैं। अपने चित्रों में ये दोनों चित्रकार, अपने-अपने ढ़ंग से भारतीय चित्रकला को देवताओं और राजपुरुषों की ऊब भरी उपस्थिति से मुक्त कर आम जनों के लिए जगह बनाते हैं। इन दोनों चित्रकारों के लिए यह समय कितना कठिन था इसका अनुमान हम सहज ही लगा सकते हैं। इस दौर में, एक ओर जहाँ राजा रवि वर्मा के चित्रों में भारतीय बुद्धिजीवी समाज का बड़ा हिस्सा भारतीय चित्रकला परम्परा को विकसित होते देख रहा था वहीं दूसरी ओर बंगाल स्कूल के विकास के दौर में कला परिसर के चित्रों में स्वर्ग से अवतरित भिन्न-भिन्न देवी देवताओं ने स्थान बना लिया था। रबीन्द्रनाथ ठाकुर केवल राजा रवि वर्मा से ही नहीं बल्कि कई बार हुए विदेश भ्रमण के दौरान यूरोप, जापान आदि की चित्रकला गतिविधि से भी परिचित हो सके थे। तत्कालीन विदेशी चित्रकारों के कला-कर्म से भी वे भलीभाँति परिचित हुए। अपने बहुत करीब, नव-बंगाल चित्रकला को जन्म लेते और समूचे देश में अपने प्रभाव का विस्तार करते देखा। रबीन्द्रनाथ ठाकुर, चित्रकला की इस अवधारणा से सहमत नहीं थे, जिसमें तत्कालीन सामन्तों और बुद्धिजीवियों का एक बड़ा तबका कला में 'भारतीयता' को पुनर्स्थापित करने का दावा कर रहा था। बंगाल के अभिजात वर्ग के एक बड़े हिस्से के लिए यह विशेष आत्मसुख का कारण था क्योंकि चित्रकला की यह धारा 'भारतीयता' के साथ-साथ अनिवार्य रूप से 'हिन्दू' कला थी।

सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री धुर्जटी प्रसाद मुख़र्जी (सन् 1894-1961 ई.) बंगाल स्कूल की चित्रकला के इस दौर के बारे में लिखते हैं, 'इतिहास का जो कुछ अवदान था वह चित्रों के विषय तक ही सीमित था। पुराणकथाएँ ही इनकी लीलाभूमि बनीं। देखकर लगता है कि प्रमुख देवताओं और देवियों का दल कुछ समय के लिए बंगभूमि में छुट्टी बिताने आया हो। चित्रकारों ने इनमें से अपनी पसन्द के मुताबिक (देवताओं को) चुन लिया-किसी ने शिव को चुना तो किसी की पसन्द विष्णु बने या फिर उनके अवतार, किन्तु सर्वत्र कोमल और मधुर भाव ही केन्द्र में रहा। ...चित्रों में बुद्ध, बोधिसत्तव, अशोक या उनके जैसे राजा दिखे। शकुंतला, मेघदूत, रामायण, महाभारत के साथ-साथ ऐसा प्रचुर भारतीय काव्य-

टैगोर और अमृता

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रकला सम्बन्धी विचार उनके चित्रों जैसे ही मौलिक और अनूठे हैं किन्तु दुर्भाग्य से भारतीय चित्रकारों ने न तो उन्हें जाना और न ही समझने की कोशिश की। हम परम्परा के नाम पर कथाओं के चित्रण को ही चित्रकला मानते रहे और एक बहुभाषी देश की निरक्षर जनता के बीच देवी-देवताओं, राजा-रानियों की लीला-कथाओं के प्रचार के सबसे प्रभावी माध्यम के रूप में इसे विकसित करने का दायित्व निभाते रहे। इस प्रकार भारतीय चित्रकला में हम या तो परिचित कथाओं और कथानायकों को पहचानने के आदी हो गए या किसी नए दर्शन की व्याख्या को कला मान लिया। इस प्रक्रिया में हमने अपने चित्रों को कथाओं और सन्दर्भों का वाहक मान लिया।
1931 से 1941 के दशक को इस मायने में भारतीय कला के लिए एक बेहद महत्वपूर्ण दशक के रूप में चिन्हित कर सकते हैं। सन् 1931 में जहाँ रबीन्द्रनाथ ठाकुर की कला यात्रा पूरी गति पकड़ती हुई दिखती है वहीं अमृता शेरगिल के लिए भी यह एक नयी यात्रा की शुरूआत का समय था। दुर्भाग्य से, 1941 में ही, मात्र 28 वर्ष की आयु में अमृता शेरगिल का निधन होता है और उसी वर्ष अस्सी वर्ष की उम्र में रबीन्द्रनाथ ठाकुर का देहावसान! किन्तु इन दोनों प्रतिभाओं ने आने वाले समय के कलाकारों के लिए चित्रकला के एक युग का सूत्रपात किया जिसके चलते भारतीय चित्रकारों का एक बड़ा वर्ग अपने चित्रों में 1943 के बंगाल के महा-अकाल से लेकर 1947 के विभाजन और विस्थापन की त्रासदियों को एक जीवन्त दस्तावेज़ के रूप में दर्ज़ कर सका।

हज़ारों सालों से चली आ रही भारतीय कला अवधारणा को, पहली बार रबीन्द्रनाथ ठाकुर के साथ–साथ अमृता शेरगिल चुनौती देती हैं और अपने चित्रों को कथाओं और सन्दर्भों से मुक्त करती हैं। अपने चित्रों में ये दोनों चित्रकार, अपने–अपने ढ़ंग से भारतीय चित्रकला को देवताओं और राजपुरुषों की ऊब भरी उपस्थिति से मुक्त कर आम जनों के लिए जगह बनाते हैं।

साहित्य, जिन्हें पर्याप्त प्राचीन मान लिया गया हो, उन सबों का व्यापक ढंग से प्रयोग किया गया। पुराणों के प्रति यकायक इस आकर्षण का क्या कारण था? यह सवाल किसी ने नहीं पूछा।' (न्यू इंडियन लिटरेचर, वॉल्यूम 1 संख्या 1, 1938)।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर इस पूरी प्रक्रिया के मूक दर्शक बनकर चित्रकला को मनुष्य की एक ऐसी अभिनव अभिव्यक्ति के रूप में पहचानने की कोशिश करते हैं जहाँ इसे किसी प्रान्त, प्रदेश या देश के दायरे में नहीं बाँधा जा सकता है। चित्रकला के बारे में रबीन्द्रनाथ ठाकुर के विचार उनके 'मानवतावाद' के विचारों के बहुत करीब लगते हैं। रबीन्द्रनाथ ठाकुर देशप्रेम के ऊपर मानवतावाद को स्थापित करते हैं और इसलिए वे चित्रकला को अन्य सभी कलाओं भिन्न मानते हुए यहाँ तक कहते है कि 'चित्र चित्र ही होते हैं, इससे ज़्यादा कुछ नहीं और इससे कम भी नहीं। भारतीय, अभारतीय जैसे भेद अर्थहीन हैं।'

चित्र–रचना ने रबीन्द्रनाथ ठाकुर को निश्चय ही एक नवीन दृष्टि दी थी। जिस बांग्ला भाषा में उन्होंने सत्तर वर्ष की उम्र तक पूरी तन्मयता और सृजनशीलता के साथ साहित्य रचना की थी, उसी भाषा की प्रादेशिकता की सीमाओं को तोड़ने की सामर्थ्य उन्हें चित्रकला में दिखी। चित्र–रचना के साथ रचनाकार की प्रादेशिकता या भाषा का कोई रिश्ता चित्रकला के क्षेत्र में नहीं हो सकता है, ऐसा उनका मानना था और ऐसा कहते हुए वे अपने चित्रों का नाता यूरोप से जोड़ने की हिम्मत भी दिखाते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में यदि हम 'भारतीय चित्रकला' जैसी अवधारणा पर विचार करें तो हम अपने कई पूर्वग्रहों को ध्वस्त होते पाते हैं।

निर्मल कुमारी महलानबीश को लिखे एक ख़त में (18 अगस्त, 1930 ई.) उन्होंने लिखा था, 'मैं जब लिखता हूँ बांग्ला की वाणी (भाषा) के साथ, मेरे भाव का रिश्ता अपने आप बन जाता है। जब चित्र बनाता हूँ, तब रेखाएँ हों या रंग हों, किसी प्रदेश के परिचय के साथ नहीं आते। लिहाज़ा ये (चित्र) केवल उनके लिए हैं, जो इन्हें पसन्द करते हैं। मैं बंगाली हूँ, इसलिए अपने आप में यह (मेरे चित्र) बंगालियों की चीज़ नहीं हैं। इसीलिए मैंने खुद ही अपने चित्रों को पश्चिम को दान किया है। मेरे देश के लोग शायद एक बात समझ सकते हैं कि मैं किसी जाति (भाषा, धर्म, प्रान्त आदि) विशेष का नहीं हूँ – इसीलिए वे अन्दर ही अन्दर मुझे इतना नापसन्द करते हैं और मुझे बुरा–भला कहने से नहीं थकते। मैं शत प्रतिशत बंगाली नहीं हूँ – मैं समान रूप से यूरोप का भी हूँ, मैं चाहता हूँ कि यह बात मेरे चित्रों के ज़रिये प्रमाणित हो!'

चित्रकला को किसी प्रान्त या देश की सीमा में बाँधने के पक्षधर रबीन्द्रनाथ ठाकुर कभी नहीं रहे। हालाँकि चित्रकला में भी हज़ारों वर्षों से अन्य सभी कलाओं की ही तरह विभाजन का चलन रहा है। वास्तव में प्रान्त, भाषा और काल के आधार पर विभिन्न कलाओं का विभाजन, अन्ततः एक जातीय अस्मिता के आधार पर उन्हें खण्डित करता है। चित्रकला चूँकि किसी भाषा पर आधारित कला नहीं है इसलिए रबीन्द्रनाथ एक तरफ़ जहाँ साहित्यकार के रूप में स्वयं को बांग्ला भाषा के साथ जोड़ते हैं, और ऐसा करते हुए वे बांग्ला भाषा, इतिहास और बंगाल के परिवेश से स्वयं को सहज रूप से जुड़ा पाते हैं, वहीं चित्रकला के उस ख़ास उदार स्वरूप को समझते हुए वे चित्रकला में स्वयं को वैश्विक मानते हैं और इस प्रकार चित्रकला को अपनी 'मानवतावाद' की अवधारणा के सबसे करीब पाते हैं।

इसी बात को रबीन्द्रनाथ 'रूस की चिट्ठी' (1931) में अपने चित्रों के बारे में साफ़–साफ़ लिखते हैं, 'मॉस्को शहर में मेरे चित्रों की प्रदर्शनी हुई थी। ये चित्र आवारा या बेघर हैं, इसे अलग से कहने की ज़रूरत नहीं। केवल इसे विदेशी कहना भी गलत होगा – ये किसी मुल्क के हैं ही नहीं।'

मेरे चित्र, रेखाओं के माध्यम से की गयी मेरी पद्य-रचना हैं

मूर्तिशिल्प: नीरज अहिरवार

रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने चित्रों के सन्दर्भ में इस बात को बारम्बार दोहराया है। चित्रकला के सन्दर्भ में 'अर्थ' या 'मायने' के बारे में उन्होंने कहा था, 'लोग मुझसे अक्सर मेरे चित्रों के अर्थ पूछते हैं। मैं खामोश रहता हूँ, ठीक जैसे मेरे चित्र खामोश हैं। उनका (चित्रों का) काम अपने को अभिव्यक्त करना है, व्याख्या नहीं। उनके अपने रूप के पीछे ऐसी कोई गूढ़ या गुप्त बात नहीं है, जिसे चिन्तन द्वारा खोजा जा सके और शब्दों द्वारा वर्णन किया जा सके।'

रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने बार-बार चित्रों को 'समझने' के स्थान पर 'अनुभव' करने की बात कही है। अपने चित्रों के लिए किसी शीर्षक से वे परहेज़ करते रहे हैं क्योंकि उनका मानना था कि चित्रों के शीर्षक, दर्शक द्वारा चित्रों का स्वतन्त्र अनुभव करने की प्रक्रिया में आड़े आते हैं।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों को देखते हुए एक बात तो साफ़ समझ में आती है, कि उन्होंने 'चित्रकला क्या है?' इस प्रश्न पर न केवल गहरा मन्थन किया था, बल्कि अन्य कला रूपों से 'चित्रकला' भिन्न क्यों है, इस पर भी गम्भीरता से सोचा था।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर का मानना था कि, 'अन्य कलाओं की तुलना में, हमारा साहित्य का ज्ञान बेहतर है। यह इसलिए है क्योंकि साहित्य का वाहक भाषा होती है और भाषा अन्ततः 'अर्थ' पर आश्रित होती है। लेकिन रेखाओं और रंगों की कोई जुबान (voice) नहीं होती। पूछने पर वे खामोश अपने चित्रों की ओर निर्देशित करते हुए मानो कहते हैं कि स्वयं ही देख लो और कोई सवाल मत पूछो'।

एक ऐसे समाज में जहाँ युगों से, अर्थों और सन्दर्भों के सहारे ही चित्रों को देखने का इतिहास रहा हो, रबीन्द्रनाथ चित्रकला को लेकर बिलकुल नए सवाल उठाते हैं। वे बार-बार यह कहने की कोशिश करते हैं कि चित्रकला अपने अस्तित्व और स्वरूप में सन्दर्भों से मुक्त, कथाओं से मुक्त, एक स्वतन्त्र कला है। दिनांक 20 मई, 1934 ई. को कोलम्बो में अपनी चित्रों की प्रदर्शनी के अवसर पर रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा था, 'आप पूछ सकते हैं इन चित्रों के मायने क्या हैं? मैं कहूँगा, इनका कोई अर्थ नहीं है। प्राचीन काव्य और (गद्य) साहित्य का अर्थ है, पर चित्रकला का अर्थ किसी भाषा के ज़रिये व्यक्त करना सम्भव नहीं, लिहाज़ा चित्रकला का कोई अर्थ नहीं। इस बात को ध्यान में रखकर ही आप लोग इन चित्रों के मर्म को अनुभव करने का प्रयास करेंगे। मर्मोपलब्धि का अर्थ आम तौर पर जो हम समझते हैं, मैं उस अर्थ से मर्मोपलब्धि नहीं कह रहा हूँ। किस आख्यान को आधार मानकर इन्हें रचा गया है। इन चित्रों की आध्यात्मिक या दार्शनिक

व्याख्या क्या है – ऐसे सवालों के जवाब इन चित्रों में नहीं मिलेंगे। जिज्ञासु मन लेकर इन चित्रों को मत देखिएगा। चूँकि ये चित्र मैंने बनाये हैं, लिहाज़ा मेरी बातों से मैं कुछ घमण्डी लग सकता हूँ। हाँ, मैं मानता हूँ कि कवि और चित्रकार कुछ घमण्डी होते हैं।'

रचने का साहस

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों पर कोई अकादमिक टिप्पणी करना कतई आसान नहीं है, क्योंकि उनके चित्रों में न तो अपने पूर्ववर्ती किसी चित्रकला धारा का प्रभाव दिखता है और न ही वे अपने समकालीन चित्रकारों के करीब दिखते हैं। उन्हें हम कहीं से भी भारतीय चित्रकला परम्परा से नहीं जोड़ पाते हैं। न ही किसी विदेशी चित्रकला परम्परा का असर उन पर दिखाई देता है।

पर रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने चित्रों के बारे में एक बात बहुत स्पष्ट कही है, जिस पर ध्यान दिए बगैर हम हम उनकी कला को जानने की शुरूआत ही नहीं कर सकते। अपने चित्रों के बारे में 12 अक्टूबर 1934 ई. को विलियम रॉटनस्टाइन को लिखे एक पत्र में वे कहते हैं कि 'मैं ढेरों चित्र बनाता रहा हूँ और कभी कभी मुझे लगता है कि आप उन्हें देखना चाहेंगे, जो साहसिक तकनीक और शैली (style) से रचे गए हैं और जिसे केवल एक अप्रशिक्षित (untrained) और आवेगयुक्त (impulsive) स्वप्नद्रष्टा ही रच सकता है।'

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों के संसार में जो बात हमें सबसे ज़्यादा आकृष्ट करती है, वह है रचने का साहस! रचने के इस साहस को रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने चित्रकला के बारे में अपने मौलिक विचारों के चलते ही हासिल किया था। उनके 'सृजन' के लिए शिक्षा या कौशल का उतना महत्व कभी नहीं रहा, जितना कि स्वतन्त्रता और आवेग का। वे एक लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार थे, पर एक सक्रिय चित्रकार के रूप में रचते हुए उन्होंने कभी साहित्य की गुलामी स्वीकार नहीं की। अपने चित्रों को किसी कथा का वाहक नहीं बनने दिया।

कविता की देह पर चित्र

शुरू से ही रबीन्द्रनाथ ठाकुर का साहित्य के प्रति गहरा आकर्षण रहा पर उम्र के साथ-साथ, कला की नयी-नयी विधाओं की ओर भी वे सहज रूप से आकृष्ट होते रहे। कविता के अलावा कहानी, उपन्यास, नाटक, संगीत और नृत्य जैसी विधाओं में उनके ऐतिहासिक योगदान के बारे में हम सब जानते हैं। पर चित्रकला के क्षेत्र में उनका आना कतई किसी सोची-समझी योजना के तहत नहीं हुआ था। अपनी कविताओं को लिखते समय वे व्यापक संशोधन और सम्पादन किया करते थे। वे कविता के शब्दों को, पंक्तियों को काटते थे या नए शब्दों से उन्हें प्रतिस्थाकपित कर दिया करते थे। यह प्रक्रिया निश्चित रूप से एक कवि की अपनी कविता का प्रथम पाठक बनने के साथ-साथ प्रथम आलोचक बनने की प्रक्रिया है, जो नि:सन्देह एक बेहद गम्भीर प्रक्रिया है। रबीन्द्रनाथ ठाकुर अपनी कविता का शुरूआती प्रारूप जिन शब्दों-वाक्यों के संयोजन से बनाते थे, उसे अन्तिम रूप देने के लिए वे कई शब्दों को, पंक्तियों को न केवल काटते थे बल्कि रेखाओं के घने जाल के पीछे गुम कर देते थे।

अपनी कविताओं में, निश्चय ही ग़ैर-ज़रूरी लगने वाले शब्दों को काटने-पीटने के ज़रिये संशोधन करने के उद्देश्य से बने 'उपोत्पा द' (बाई-प्रोडक्टक) जैसे लगने वाले इन चित्रों को देखने से दो बातें साफ़ नज़र आती हैं। एक, कि ये चित्र केवल ग़ैर-ज़रूरी शब्दों को बिना किसी चित्र परिकल्पना के सघन रेखाओं के नीचे दफ़नाने मात्र से नहीं बने हैं। दूसरा, कि ये चित्र निश्चय ही कविता को अन्तिम रूप तक पहुँचाने के बाद ही कवि का दूसरे चरण पर किया गया स्वतन्त्र सृजन कर्म है। यानी, एक ही काग़ज़ पर कविता-रचना के पूर्ण होने के बाद, उसी स्पेस को स्वतन्त्र चित्र-रचना के लिए प्रयोग किया गया है। यहाँ गौरतलब है कि कविता के विषय या भाव से इन चित्रों के भाव बिल्कुनल स्वतन्त्र हैं।

रबीन्द्र नाथ आदिवासियों की कला से बेहद प्रभावित थे। यह कला दैनन्दिन जीवन में काम आने वाली चीजों को आकर्षक बनाने के लिए घड़ो, बर्तनों और औज़ारों आदि पर उकेरी जाती रही है। यह कला-कर्म की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें रचनाकार से ज़्यादा उसका समाज महत्वपूर्ण होता है, लिहाज़ा ऐसी कृतियाँ हस्ताक्षरित नहीं होती हैं। वे सतही रूप से इन आदिम आकृतियों के प्रति आकृष्ट नहीं हुए थे, वे रचनाकार और कृति के बीच के आदिम रिश्ते से भी प्रभावित थे।

सन् 1924 में अपनी पेरू यात्रा के दौरान रबीन्द्र नाथ अस्वरस्थह हो गए थे और उन्हें अर्जेंटिना के एक छोटे-से शहर सॉ-इसीडोर में अपने मित्र विक्टोरिया ओकाम्पोथ के घर रहना पड़ा था। विक्टोरिया ओकाम्पो एक विदुषी महिला थीं, जिन्होंने रबीन्द्रनाथ को गहरे रूप से प्रभावित किया था। रबीन्द्रनाथ ने अपना कविता-संग्रह 'पुरबी' विक्टोंरिया ओकाम्पोन को ही समर्पित किया था। इस संग्रह की कविताएँ रबीन्दनाथ ने अपने अर्जेंटिना प्रवास के दौरान लिखी थीं। कविता लिखते समय रबीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा ग़ैर-जरूरी शब्दों/अंशों को 'दफ़नाने' की प्रक्रिया में उभरते चित्रों पर विक्टोरिया ओकाम्पोर का ध्यान गया था और उन्होंने रबीन्द्रनाथ ठाकुर को चित्र-रचना के लिए प्रोत्साहित किया। इसके छह वर्षों बाद पेरिस में रबीन्द्रनाथ ठाकुर की पहली एकल प्रदर्शनी के आयोजन में भी उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी।

रबीन्द्र नाथ आदिवासियों की कला से बेहद प्रभावित थे। यह कला दैनन्दिन जीवन में काम आने वाली चीजों को आकर्षक बनाने के लिए घड़ो, बर्तनों और औज़ारों आदि पर उकेरी जाती रही है। यह कला-कर्म की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें रचनाकार से ज़्यादा उसका समाज महत्वपूर्ण होता है, लिहाज़ा ऐसी कृतियाँ हस्ताक्षरित नहीं होती हैं। साथ ही इनमें किसी कलाकार विशेष की कला-निपुणता से ज़्यादा किसी कबीले या प्रान्त की अपनी खास पहचान को देखा जा सकता है। वे सतही रूप से इन आदिम आकृतियों के प्रति आकृष्ट नहीं हुए थे, वे रचनाकार और कृति के बीच के आदिम रिश्ते से भी प्रभावित थे।

चेहरों का अन्तहीन संसार

रबीन्दनाथ ने असंख्य पोर्ट्रेट या चेहरों के चित्र बनाए हैं। उनमें स्त्री, पुरुष, और बच्चे आदि अपने-अपने स्वतन्त्र अन्दाज़ में दिखते हैं, इसलिए उनका हर एक पोर्ट्रेट विशिष्ट है। रबीन्द्रनाथ द्वारा बनाये गए पोर्ट्रेटों का एक ख़ास खण्ड, हास्य-कौतुक से भरे चेहरों का भी है। ये चेहरे नाटक के विदूषक के से लगते हैं जिनके चेहरों की रेखाओं को इतनी सावधानी से उकेरा गया है कि हम इनमें एक ख़ास भाव को स्पष्ट देख पाते हैं। ऐसे ही अनेक विशेष भाव हमें उनके दूसरे पोर्ट्रेट्स में मिलते हैं जो उनके चेहरों के चित्रों में एक विशिष्ट वैविध्य प्रदान करता है। रबीन्द्रनाथ ने कई सेल्फ़-पोर्ट्रेट भी बनाए हैं, जो प्रायः उनके फ़ोटोग्राफ़ पर आधारित लगते हैं पर इनमें से कुछ ऐसे भी चित्र हैं, जो उनकी आत्मविश्वासि से भरी तेज गतिमान रेखाओं की शक्ति से हमें परिचित कराते हैं।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के पोर्ट्रेट या चेहरों के चित्रों का एक बड़ा हिस्सा महिलाओं के चित्रों का है। उन्होंने जिस सम्मोन और प्रेम से महिलाओं को अपने चित्रों में प्रस्तुत किया है उसी लगन से अपनी रचनाओं में भी उन्हें उनका स्थासन दिया है। रबीन्द्रनाथ ने इन चित्रों में जहाँ महिलाओं की स्वाभाविक कोमलता को चित्रित किया है, वहीं कई चित्रों में वे पत्थर को तराश कर बनाई गयी मूर्ति-सी लगती हैं।

महिलाओं के पोर्ट्रेट्स में उन्होंने कुछ महिलाओं के चित्र भी बनाये हैं, जो विदेशी लगती हैं। उनके कई चित्रों में तत्कालीन भारतीय समाज में शिक्षित होती महिलाओं को भी हम सहज ही पहचान लेते हैं। रबीन्द्रनाथ के ऐसे चित्रों की कला-वीथिका में जितने भी चित्र हैं, वे सब अपने आप में स्वतन्त्र हैं, ठीक रबीन्द्रनाथ की रचनाओं के नारी पात्रों जैसे।

इच्छाओं की हरी पत्तियाँ

मेरे प्यार की ख़ुशबू
वसंत के फूलों-सी
चारों ओर उठ रही है।
यह पुरानी धुनों की
याद दिला रही है
अचानक मेरे हृदय में
इच्छाओं की हरी पत्तियाँ
उगने लगी हैं
मेरा प्यार पास नहीं है
पर उसके स्पर्श मेरे केशों पर हैं
और उसकी आवाज़
अप्रैल के सुहावने मैदानों से
फुसफुसाती आ रही है।
उसकी एकटक निगाह यहाँ के
आसमानों से मुझे देख रही है
पर उसकी आँखें कहाँ हैं
उसके चुंबन हवाओं में हैं
पर उसके होंठ कहाँ हैं... !

- रबीन्द्रनाथ टैगोर

अनुवाद- कुमार मुकुल

'घरे-वाइरे' की विमला, 'नष्ट-नीड़' की चारुलता, 'रक्त करबी' की नन्दिनी या फिर चाण्डोलिका के बीच फैले वैविध्यन के समानान्तर हम रबीन्द्रनाथ के चित्रों में नारियों को पाते हैं- वे वर्ण में, वर्ग में, शिक्षा में और आत्मविश्वास में एक-दूसरे से भिन्नी हैं। इनकी आँखों में कहीं विजय का उल्लास है तो कहीं पराजय की ग्लादनि, कहीं शिक्षा का आत्मविश्वास है तो कहीं स्त्रीत्व का गर्व। रबीन्द्रनाथ के महिलाओं के चित्र अपने समय के एक महत्व पूर्ण यथार्थ को भी प्रस्तुतत करते हैं, जो उनके साहित्यम के यथार्थ के बहुत क़रीब जाता है। पर वे किसी कथा के पात्र नहीं हैं और न ही वे किसी सन्दर्भ के दर्पण में देखकर पहचाने जाने के लिए बने हैं।

प्राणियों के चित्र

रबीन्द्रनाथ के चित्रों में विचित्र जीव-आकृतियों की उपस्थिति, उनकी सुन्दर और असुन्दर की अवधारणा को एक ज़मीन प्रदान करती है। मानव सभ्यता के विकास क्रम में चित्रों के सुन्दर होने की अनिवार्यता ने चित्रों के स्वाआभाविक विकास को कई कृत्रिमताओं से बोझिल किया है, जो यथार्थ चित्रण के नाम पर आँखों से देखे गए और प्रकृति और प्राणी जगत के निपुण अनुकरण ही रहे। इस दबाव के चलते चित्रकला में 'रचने' की गुंजाइश कम होती चली गई और इसीलिए अन्य कलाओं से इसकी दूरी भी बढ़ी। रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्र और उनके चित्रकला सम्बन्धी विचार, दोनों ही हमें चित्रकला में 'सृजन' और 'अनुकरण' के बीच के अन्तर को समझने में मदद करते हैं। रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों को देखते हुए हम 'रचना' के सर्वथा नवीन अर्थ से परिचित होते हैं। हमारे दृश्य जगत में, यानी 'सृष्टि' में जो कुछ हम देख पाते हैं, उन सभी की 'सृष्टि' यानी निर्माण, किसी न किसी के द्वारा हुई होगी। 'सृष्टा' का अस्तित्व भी इसी 'सृष्टि' के कारण ही है, यानी यदि सृष्टि की मौलिकता नहीं है या यदि वह सृष्टि के अनुकरण की कोशिश मात्र ही है, तो उसे हम सृष्टा नहीं मान सकते हैं। इसी बात को यदि हम रबीन्द्रनाथ ठाकुर की चित्रकला के सन्दर्भ में समझने का प्रयास करें तो हम पाते हैं कि रबीन्द्रनाथ अपने दृश्य जगत की किसी भी उपस्थिति, चाहे वह कोई दृश्य हो या प्राणी, कोई नृत्य या नाटक की भंगिमा हो या कोई भवन या स्थापत्य हो, वे अनुकृति नहीं बनाते, बल्कि उनसे प्रभावित होकर 'रचने' का प्रयास करते हैं। इसलिए उनके चित्रों के पक्षियों को देखकर हम अनायास ही एक पक्षी की शिनाख़्त तो कर पाते हैं पर उस पक्षी की उपस्थिति, रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्र के बाहर हमारे दृश्य जगत में कहीं भी नहीं है। इसे यदि दूसरे शब्दों में कहें तो रबीन्द्रनाथ उस 'सृष्टा' द्वारा रचित समस्त पक्षियों से भिन्न, अपनी कल्पना से एक नए पक्षी की सृष्टि या सृजन करते हैं। यही बात फूलों पर बने उनके चित्रों पर, शबीहों यानी पोर्ट्रेट्स पर, दृश्य-चित्र या लैंडस्केप्स पर, इमारतों और स्थापत्य पर बने सभी चित्रों में हमें साफ़ दिखती है।

उन्होंने भवनों या स्थापत्य के कई दिलचस्प चित्र बनाये हैं (चित्र 78') । यहाँ गौरतलब है कि जिन भवनों के चित्र उन्होंने बनाये, उनका रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्र के बाहर कहीं कोई अस्तित्व नहीं है। इसी प्रकार अपने दृश्य-चित्रों में भी उन्होंने कल्पना को कौशल से कहीं ज़्यादा महत्व दिया और 'सृजन' और 'सृष्टि' के नवीन अर्थों से हमें पहली बार परिचित कराया।

वह अनंत अग्नि कहाँ है

रोना बेकार है
व्यर्थ है यह जलती अग्नि इच्छाओं की
सूर्य अपने आरामगाह में जा चुका है
जंगल में धुंधलका है
और मनमोहक है आकाश
उदास आँखों से देखते,
आहिस्ता क़दमों से
दिन की विदाई के साथ
तारे उगे जा रहे हैं।
तुम्हारे दोनों हाथों को
अपने हाथों में लेते हुए
और अपनी अतृप्त आँखों में
तुम्हारी आँखों को
कैद करते हुए,
ढूँढ़ते और रोते हुए,
कि कहाँ हो तुम
कहाँ हो, कहाँ हो...
तुम्हारे भीतर छिपी
वह अनंत अग्नि कहाँ है...
जैसे गहन संध्याकाश में अकेला तारा
अपने अनंत रहस्यों के साथ
स्वर्ग का प्रकाश
तुम्हारी आँखों में काँप रहा है
जिसके अंतर में गहराते रहस्यों के बीच
वहाँ एक आत्मस्तंभ चमक रहा है।
अवाक एकटक यह सब देखता हूँ, मैं
अपने भरे हृदय के साथ
अनंत गहराई में छलाँग लगा देता हूँ,
अपना सर्वस्व खोता हुआ।

- रबीन्द्रनाथ टैगोर

अनुवाद- कुमार मुकुल

लय, गति और अभिनय

रबीन्द्रनाथ के चित्रों के विशाल संग्रहों में एक स्वतन्त्र खण्ड के रूप में हम नाटक–अभिनय–नृत्य पर बने चित्रों को रख सकते हैं। हालाँकि ये चित्र न तो किसी ख़ास श्रृंखला के अन्तर्गत रचे गए हैं और न ही किसी नाटक विशेष से इन्हें हम सीधे जोड़ पाते हैं। इन चित्रों में एक अद्भुत नाटकीय तत्व है, जिसके चलते हम इन चित्रों को, किसी नृत्य की मुद्रा या भंगिमा से या नाटक के अभिनय से सहज ही जोड़ पाते हैं। उदाहरण के लिए, हम चित्र 46' को देख सकते हैं, जहाँ किसी नर्तकी के नृत्य की गतिमय भंगिमा के एक ऐसे मुहूर्त का चित्रण है, जो एक स्थिर चित्र होने के बावजूद हमें नर्तकी और नृत्य की गतिमयता से परिचित करता है। इस चित्र में तेज़ गति से नर्तकी के बिखरे हुए बालों और वस्त्र में एक अद्भुत लय दिखाई देती है। पर वास्तव में यह चित्र किसी नर्तकी को देखकर नहीं बनाया गया है।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा बनाये गए नाटक के अन्यन अनेक चित्रों में हम किसी दृश्य। को अभिनीत होते पाते हैं जहाँ कोई संवाद नहीं है पर अपनी भंगिमाओं के कारण ये चित्र किसी नाटक विशेष का चित्रण न होकर भी, चित्र में एक नाटकीय मुहूर्त की संरचना करते है। रबीन्द्रनाथ ठाकुर के ऐसे चित्रों को देखते हुए आश्चर्य होता है कि एक ऐसा रचनाकार जिसने विविध विषयों पर अनेक नाटक रचे हों, चित्र रचते समय कहीं भी उन नाटकों के किसी दृश्य को अपने चित्र का आधार नहीं बनाता।

उजास भरी रेखाएँ

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों को ध्या न से देखते समय उनके चित्रों की एक शैलीगत विशेषता पर ध्यान जाता है। उनके चित्रों में उजली सफ़ेद रेखाओं की उपस्थिति उन्हें एक चित्रकार के रूप में औरों से भिन्न बनाती है।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों की इन रेखाओं को क़रीब से देखने पर हम पाते हैं कि ये सफ़ेद रंग से बनी रेखाएँ नहीं बल्कि ये सफ़ेद स्पेस या रिक्त स्थान हैं जो दो गहरे रंगों के बीच बचे कैनवास या काग़ज़ का स्वाभाविक रंग है। यह रबीन्द्रनाथ के चित्रों का एक महत्वंपूर्ण पक्ष है, क्योंकि ये 'रेखाएँ' यह भी प्रमाणित करती हैं कि रबीन्द्रनाथ के चित्र स्वत: स्फूर्त होने के साथ–साथ बेहद सावधानी से रचे गए पूर्व–निर्धारित संयोजन हैं। ऐसी सफ़ेद रेखाओं के ज़रिये (जो वास्तव में स्पेस का एक विशेष रूप है) चित्र–रचना, एक ख़ास मानसिक तैयारी की माँग करती है। रबीन्द्रनाथ की इन रेखाओं को हम उनके चित्रों में कई रूपों में पाते हैं। जहाँ कुछ चित्रों में ये रेखाएँ लयात्मक हैं, वहीं अन्यत्र इनके शुद्ध ज्यामितीय स्वरूप से हम परिचित होते हैं।

निसर्ग की ख़ामोशी

रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने दृश्य–चित्रों को 'रचा' है, जहाँ उन्होंने किसी दृश्य–चित्र को रचते समय अपनी स्मृति का सहारा शायद लिया भी हो, पर वे किसी परिचित दृश्य के प्रतिबिम्बन नहीं हैं। उनके प्रकृति चित्रों में कोलाहल से दूर एक ख़ास तरह की गम्भीरता को सहज ही देखा जा सकता है, जिसे वे रंगों के सीमित प्रयोग से और भी सघन बना देतें हैं। रबीन्द्रनाथ ठाकुर के लैण्डस्केप या दृश्य चित्रों की यह ख़ामोशी, उनके अन्य चित्रों में नहीं मिलती। इन प्रकृति चित्रों में प्रयोग की व्यापकता नहीं है, बल्कि इनमें कुछ समानताएँ हैं, जिसे चित्रकार ने बड़ी सजगता के साथ सभी दृश्यचित्रों में मौजूद रखा है। रबीन्द्रनाथ के इन प्रकृति चित्रों में डीटेल्स नहीं हैं। यहाँ पेड़ हैं, पर पेड़ों की पत्तियों के विवरण नहीं हैं, चटियल मैदान है पर उस पर घास का अस्तित्व नहीं दिखता। आसमान पर दिन की शेष बची रौशनी के सामने प्रकृति को उन्होंने कई बार छाया चित्र (silhouette) के रूप में बनाया है, जहाँ आकृतियों के डीटेल्स नहीं हैं। इन सभी प्रकृति–चित्रों में कुछ सीमित अपवादों को छोड़ कर कहीं भी मानव या अन्य प्राणियों की उपस्थिति नहीं है। पर इन सबसे ज़्यादा महत्व पूर्ण पक्ष इन प्रकृति चित्रों का आकाश है, जो प्राय: सपाट होते हुए भी चित्र के लिए एक बेहद प्रभावी पृष्ठभूमि का सृजन करता है।

एक नि:संग पथिक

रबीन्द्रनाथ अपने चित्रों में, स्वाभाविक रूप से उन पौराणिक और ऐतिहासिक कथाओं के प्रसंगों और पात्रों को चित्रित कर सकते थे, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। उनके एक भी चित्र में किसी परिचित कथा–नायक या कथा–सन्दर्भ का न होना हमें निश्चय ही चकित करता है और हम उनकी उस कठिन कला यात्रा की कल्पना कर सकते हैं, जहाँ उन्हें एक नितान्त नि:संग यात्री के रूप में चलना पड़ा था। दुर्भाग्य है कि ठाकुर के चित्रों से न तो उनके बाद की पीढ़ी और न ही किसी आलोचक ने आगे बढ़कर उनकी कला और कला सम्बन्धी विचारों को कलाकारों और कलाप्रेमियों तक पहुँचाने की कोशिश की। वे अपनी कला यात्रा में एक नि:संग यात्री ही बने हुए हैं।

आज़ादी के बाद की भारतीय कला पर एक दृष्टि डालने मात्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारी समकालीन कला इस दौर में सिर्फ महानगर केंद्रित बनकर रह गयी है। यानी जो कलाकार दिल्ली, मुंबई, बंगलोर, कोलकाता और चेन्नई जैसे महानगरों में नहीं रह रहे हैं, उनकी कला की चर्चा तक नहीं हो पाती है। यह महानगरीय कला जगत अपने आप में जिन विसंगतियों को समेटे हुए है, उसके कारण कहीं ना कहीं हमारी कलाधारा अवरुद्ध सी हो गयी है।

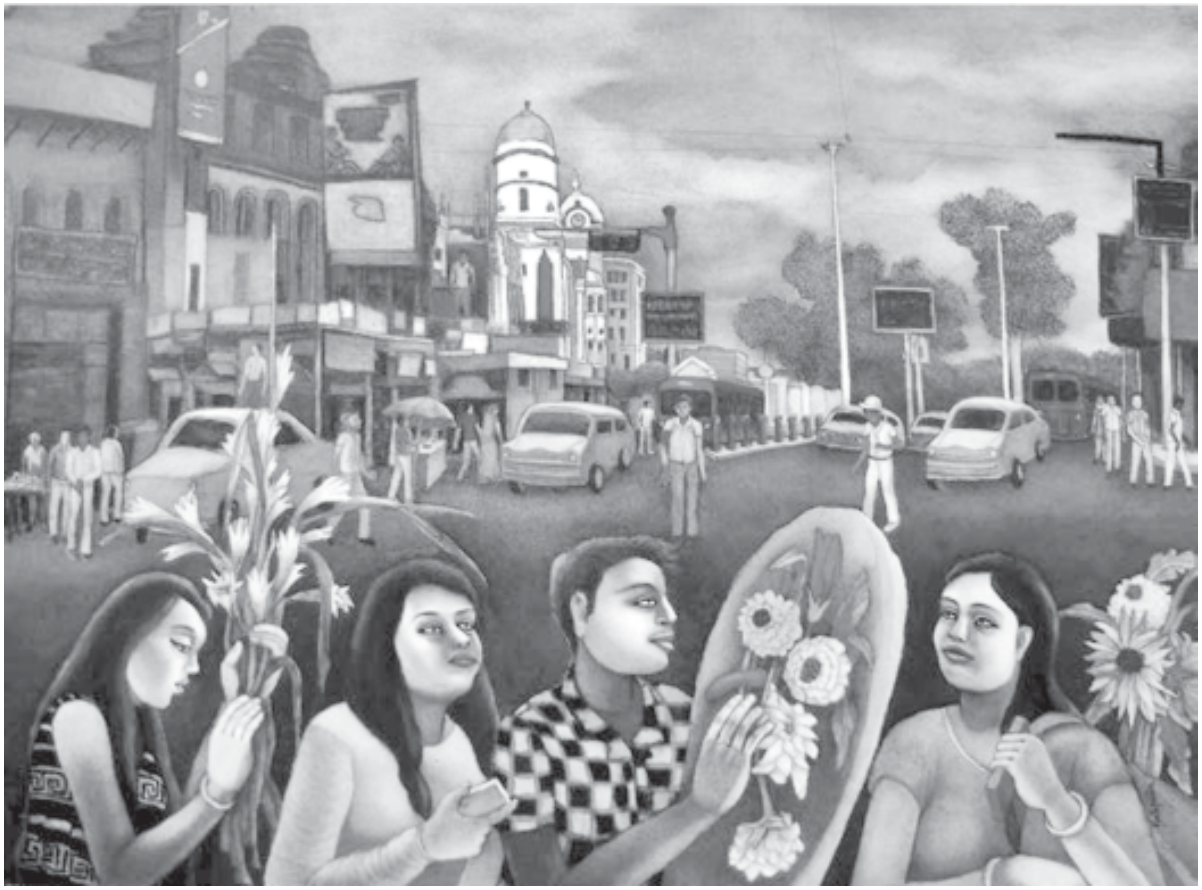

चित्र : कालीपद पुरकैत

आधुनिक कला और टैगोर

सुमन कुमार सिंह

टैगोर एक महान कवि के साथ-साथ महान कलाकार भी थे, जिन्हें आज आधुनिक भारतीय कला के आधार स्तंभों में गिना जाता है। भारतीय कला के उस दौर को हम याद करें तो तब एक तरफजहां राजा रवि वर्मा और अमृता शेरगिल जैसे कलाकार पश्चिमी तकनीक वाली कला शैली को अपनाते हुए भारतीय विषयों को केन्द्र में रखकर चित्र रचनाएं कर रहे थे। वहीं नितांत पश्चिम विरोध को अपनाते हुए हैबेल और अवनीन्द्रनाथ टैगोर का बंगाल स्कूल, जापानी वाश तकनीक के माध्यम से तथाकथित भारतीयता की खोज कर रहा था। जिसे अंततः भारतीय कला में हिन्दू धार्मिक प्रतीकों और मान्यताओं के सबलीकरण का प्रयास भर माना गया। ठीक उसी दौर में वैश्विक कला की दुनिया से अपने को जोड़ने का एक प्रयास रवीन्द्रनाथ टैगोर अपने रेखाचित्रों और ड्रूड्ल्स के माध्यमसे कर रहे थे। इस प्रक्रिया में हालांकि तत्कालीन समीक्षकों और कलाकारों ने टैगोर की कला को भी बंगाल स्कूल से जोड़ दिया। किन्तु आज यह स्पष्ट हो चुका है कि टैगोर की रचना शैली नितांत मौलिक, सहज व बिल्कुल भिन्न थी, जिस पर किसी भी तत्कालीन

कला परंपराओं का कोई प्रभाव नहीं था। कतिपय इन्हीं कारणों से आज हम टैगोर को अपने समय का सबसे आधुनिक कलाकार मानते हैं। बहरहाल इस अवसर पर जिस सेमिनार का आयोजन किया गया, उसमें 1850 से लेकर 2019 तक के कला इतिहास के विभिन्न पहलूओं पर विस्तार से चर्चा की गयी। जिसमें देश के विभिन्न हिस्सों से आये 14 कला लेखकों व कला समीक्षकों ने भागीदारी की। हालांकि सेमिनार के लिए समय कम रहने की वजह से विस्तृत चर्चा तो नहीं हो पायी, किन्तु उक्त कालखंड के विभिन्न पहलूओं का उल्लेख अवश्य सामने आया। बहरहाल इस सेमिनार के वक्ताओं के पर्चों को पुस्तक आकार देने की योजना है। अत: माना जा सकता है कि इसके माध्यम से भारतीय कला इतिहास पर एक प्रमाणिक पुस्तक जल्द ही सामने आएगी। दरअसल देखा जाय तो अभी तक अपने यहां कला इतिहास पर समग्रता में चर्चा नहीं हो पायी है। क्योंकि कला महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में ज्यादातर सिर्फकला इतिहास की चर्चा दिखती है यानी पाठ्यक्रम में समकालीन कला पर बातचीत यहां नदारद रहती है। वहीं कला दीर्घाओं व कला अकादमियों की चर्चा सिर्फसमकालीन कलाओं तक सीमित दिखती है, ऐसे में समग्रता से कला चर्चा का होना एक नयी पहल है। इस अवसर पर आयोजित कला प्रदर्शनी के लिए लगभग 1000 कलाकारों ने अपनी रचनाएं भेजीं जिनमे से चयन समिति ने 175 कलाकारों की 185 कृतियों को चयनित किया। इन 175 कलाकारों में से जिन पांच कलाकारों को पुरस्कृत किया गया, वे हैं- अनुपमा डे, खैरागढ़, सोनलप्रिया सिंह, भोपाल, कालीपद पुरकैत, पालघर, चारूदत्त पांडे, पुणे व उत्कर्ष जायसवाल, इलाहाबाद(प्रयागराज)।

इस आयोजन में एक नयी पहल यह भी दिखी कि पुरस्कृत कलाकारों व वक्ताओं के अलावा जहां जयकृष्ण अग्रवाल, पूर्व प्राचार्य लखनऊ कला महाविद्यालय, प्रभाकर कोलते, पूर्व प्राध्यापक जे.जे.कॉलेज ऑफआर्ट, मुंबई व वरिष्ठ कला समीक्षक मनमोहन सरल को आमंत्रित किया गया था। वहीं देश के विभिन्न हिस्सों से वरिष्ठ व युवा कलाकारों को भी बुलाया गया था। ताकि इस आयोजन में कलाकारों के बीच आपसी संवाद का क्रम निरंतर जारी रहे। आयोजन के पीछे इस तरह की सोच के सूत्रधार थे वरिष्ठ कलाकार व कला समीक्षक अशोक भौमिक। विदित हो कि अशोक भौमिक उन कलाविदों में शामिल हैं जो भारतीय कला की पुनर्व्याख्या के पक्षधर हैं, इस कार्यक्रम में रवीन्द्रनाथ टैगोर की कला पर उनका व्याख्यान इसी बात पर केंद्रित भी था। आजादी के बाद की भारतीय कला पर एक दृष्टि डालने मात्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारी समकालीन कला इस दौर में सिर्फमहानगर केंद्रित बनकर रह गयी है। यानी जो कलाकार दिल्ली, मुंबई, बंगलोर, कोलकाता और चेन्नई जैसे महानगरों में नहीं रह रहे हैं, उनकी कला की चर्चा तक नहीं हो पाती है। यह महानगरीय कला जगत अपने आप में जिन विसंगतियों को समेटे हुए है, उसके कारण कहीं ना कहीं हमारी कलाधारा अवरुद्ध सी हो गयी है। इन्हीं विसंगतियों को रेखांकित करता कला समीक्षक व लेखक विनोद भारद्वाज का उपन्यास एक सेक्स मरीज का रोगनामचा जब पिछले वर्ष सामने आया तो आम आदमी भी इससे परिचित हो पाया। वैसे विगत कुछ वर्षों में एक बदलाव यह भी देखने को मिल रहा है कि कोच्चि, जयपुर, बोधगया, जबलपुर, बनारस, लखनऊ से लेकर पटना और उत्तर पूर्व के राज्यों में भी कला गतिविधियों में बढोत्तरी हो रही है। यही नहीं आज से दो-तीन दशक पूर्व तक जिस तरह से हमारी लोककलाओं के लिए समकालीन कला आयोजनों में कोई जगह नहीं थी, उस नजरिये में भी बदलाव दिखने लगा है। बहरहाल इन आयोजनों की सार्थकता तो तभी है जब समाज कलाभिमुख हो जाए और कला भी समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों के निर्वहन को प्राथमिकता देने लगे।

इस अवसर पर प्रकाशित कैटलॉग में आयोजित चित्रकला प्रदर्शनी व सेमिनार के बारे में संतोष चौबे कहते हैं- साहित्य के अलावा विश्वरंग कलाओं को भी पर्याप्त स्थान प्रदान करता है। इसलिए इसमें रवीन्द्रनाथ टैगोर की चित्र प्रदर्शनी तो लगाई ही गई। उनके चित्रों पर आधारित कैटलॉग का प्रकाशन भी किया गया। टैगोर के बहाने भारत में कलाओं के इतिहास पर एक सेमिनार का आयोजन भी, जो चित्रकला के इतिहास पर गहन विचार-विमर्श रहा।

चित्र : ऋषिराज तोमर

दस्तावेज़

इस संग्रह में सभी महादेशों को प्रतिनिधित्व दिया गया है। एशिया से भारत, तुर्की, अरब, ईरान और चीन, यूरोप से स्वीडन और पोलैंड, अमेरिका और दक्षिण अमेरिका (चिली) से, अफ्रीका और कैरीबियन यनाईजीरिया और सेंट लूसिया तथा आस्ट्रेलिया से प्रतिनिधि रचनाकारों ने इसमें जगह पाई है। इनमें नोबल पुरस्कार विजेता हैं, राजनीतिक चेतना के मुखर स्वर हैं, स्त्री के पक्ष में सशक्त आवाज़ें हैं और मनुष्यता के पक्ष में खड़ी होती कविता है। दिलचस्प है कि तमाम क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद कविता की केंद्रीय ध्वनि प्रेम, प्रकृति और मनुष्य को बचाये रखने की सशक्त पुकार ही है।

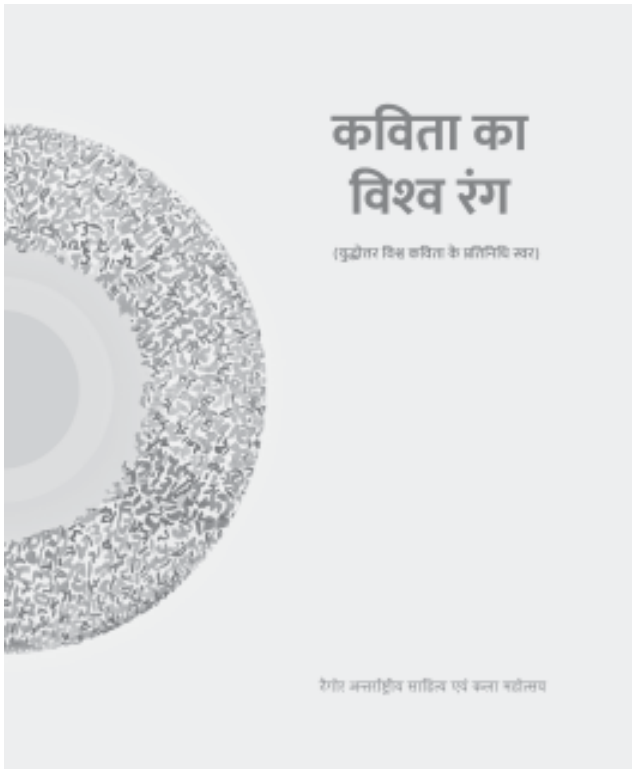

सुनी–अनसुनी आवाज़ें

संतोष चौबे

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव–विश्व रंग, के अवसर पर विश्व कविता के इस चयन का प्रकाशित होना सुखद और महत्वपूर्ण रहा। आज जब जीवन की गति इतनी तेज़ हो गई है कि चीज़ों को जानना–पहचानना मुश्किल होता जा रहा है, जब दृश्य और ध्वनियों ने हमें इस कदर घेर लिया है कि जीवन को संबल प्रदान करने वाली बारीक आवाज़ों को सुन पाना असंभव सा लगता है और जब मनुष्य के सामने भविष्य का कोई स्वप्न ठीक–ठीक आकार लेता नहीं दिखता, तब कविता एक सुखद बयार की तरह हमारे जीवन में प्रवेश करती है। किसी वृक्ष की घनी छांव की तरह आश्रय स्थल बन जाना चाहती है, एक दिशा सूचक की तरह हमें याद दिलाती है कि सभ्यता का सही रास्ता क्या है, क्या होना चाहिये।

टैगोर, और कमोबेश उनके साथ के सारे कवि हमें याद दिलाते हैं कि वह रास्ता प्रेम से होकर जाता है। प्यार की खुशबू वसंत के फूलों सी चारों ओर उठती है और अचानक पुरानी धुनों की स्मृतियाँ हृदय में फैल जाती हैं, हृदय में एक बार फिर इच्छाओं की हरी पत्तियाँ उगने लगती हैं। कवि प्यार में आश्वस्ति खोजता है जो आसमानों से उसे देख रहा हैए विशाल मैदानों से फुसफुसाती आवाज़ों में उसे बुला रहा है और जिसकी अनुपस्थिति में भी जिसका स्पर्श वह अपने केशों पर महसूस कर पाता है। प्यार अपनी अपूर्व रहस्मयता में कवि के साथ–साथ चलता है और कभी–कभी, आश्चर्य की तरह, अचानक प्रकाशित हो उठता है। सभ्यता के विकास ने जो ऊपरी चकाचौंध पैदा की है उसके ठीक बीचों बीच रहते हुये भी कवि को एहसास है कि उसका मुल्क अपनी सबसे खूनी रातों में दूर से कुछ ऐसे जगमगाता है कि परदेसियों की आंखें चुंधिया जायें पर वही जानता है कि उसके भीतर रहने वालों का वहाँ रोज़ ब रोज़ दम घुटता है कि भारी सीसे जैसी है जुल्मत की हवा जिसके नीचे वह हलाकान है पर फिर भी, उसे उम्मीद है कि इंसान ही इंसानों को बदहाली से खुशहाली की जानिब ले जायेंगे।

स्त्री अपने अदम्य साहस और जिजीविषा के साथ इन कविताओं में उपस्थित है। भले ही अपने कड़वे और विकृत झूठों से इतिहास ने उसे गलत प्रस्तुत किया हो, वह धूल में मिलने के बाद फिर से धूल की तरह ही उठ खड़े होने का साहस रखती है, चांद से पैदा होने वाले ज्वार की तरह उमड़ना चाहती है और पवन की तरह बहना चाहती है। उसकी

लेस मरे की कविता

घर

घर है पहली
और अंतिम कविता
बीच की हर कविता में
होती हैं धारियाँ
माँ के घर की!

घर सबसे कमजोर दुश्मन
जैसे कि पिघलता हुआ लोहा,
पर युद्ध घर के खिलाफ़ है
सबसे लंबी पगयात्रा!

घर के पड़ोसी नहीं होते
पेड़ या साइनबोर्ड से भी
कमजोर होते हैं वे
अपने वही होते हैं–
लौट आते हैं जो!

और फिर उसके तुरंत बाद
अपने उदास, रज़ाई पर फैलाये
उड़ता है एक चकाचक–सा हवाई जहाज
रूमानी चीज़ों के साथ
घर लौटना चाहिए भावों को
अंतिम निर्णय के तुरत बाद!

हो सकता है प्रेम
ताज़ा–टटका और तरल, इतना कि
रंध्रो से करके प्रवेश मलुआ दे वह
जो भी है घर में
मुस्तैदी से सजा–धजा!

अंग्रेज़ी से अनुवाद : अनामिका

स्मृति में हवा बहती है, घंटियाँ बजती हैं, शब्द गाते हैं और अपने कानों को वह संगीत से भर लेना चाहती है, जीवन और जीने की सभी आवाज़ें सुनना चाहती है और मानती है कि प्रेम ही उसका सर्वस्व है, कि प्रेम ही है जो मुक्त करेगा हमें।

बढ़ती हुई धार्मिक और वैचारिक असहिष्णुता के बीच कविता हमें याद दिलाती है कि एक शब्द ने दूसरे शब्द का समूल नाश कर दिया है कि एक किताब ने जारी किए हैं दूसरी किताब को जला डालने के आदेश, कि भाषा की हिंसा से बनाई गई एक सुबह ने लोगों की सुबह ने मायने बदल दिये हैं। अभिव्यक्ति का छद्म कुछ ऐसा है कि चूहे और बिल्ली की अभिव्यक्तियाँ एक जैसी हो गई हैं। राष्ट्रीयताओं के बढ़ते ज्वार से उसे भय लगता है। नितांत निजी क्षणों से गुज़रते हुये कवि पाता है कि अंततः मातृभूमि एक स्थानीय लहजा है जिसके दूसरी ओर स्वयं उसका भय बोल रहा है।

सभ्यता विमर्श में वह मनुष्यता और जीवन के साथ खड़ा नज़र आता है। डार्विन के विकासवाद और निर्बलों पर बलवानों की विजय में वह अंततः विनाश ही देखता है और कम से कम किस्से कहानियों में ही सही, आशा की किरण खोजता है, जहाँ फिर से मिल जायेंगे प्रेमी, परिवारों में होगा मेल मिलाप, आपसी संदेह मिट जायेंगे, वफादारी फिर पुरस्कृत होगी, सुख समृद्धि लौटेगी, लालच पर अंकुश लगेगा तथा भले लोगों का नाम फिर से उज्जवल होगा। झंझटिया लोगों को खदेड़ दिया जायेगा पृथ्वी के बाहर, राह से भटके बेटे घर वापस लौट आयेंगे और दुख के प्यालों को समुद्र में उछाल दिया जायेगा। कविता में ऐसा करते हुये वह उन सभी अच्छी बातों के लौटने का आव्हान करता है जो मनुष्य को सभ्य और जीवन को सुखद बनाती थीं।

वह मानता है कि स्मृतियाँ भाषा में ही जीवित रहती हैं और भाषा का मरना उन स्मृतियों और अनुभूतियों का मरना भी है। नौजवानों के पास बचे ही नहीं हैं ज्यादा शब्द और बचे खुचे शब्दों से जुड़ी तमाम चीज़ें भी, अब एक एक कर गुम हो रही हैं। बच्चे उन मुहावरों को अब नहीं दुहराते जिन्हें घड़ी घड़ी, गुज़र गये उनके माँ–बाप, दुहराते थे। न जाने किसने उन्हें ये घुट्टी पिला दी कि हर बात को नए ढंग से कहने का ही चलन है आज और इसी तरह से उन्हें मिलेगी प्रशंसा। शब्द आखिर इसीलिये तो बने थे कि बता सकें हमें आंखों देखे दृश्यों के बारे में और संभावित परिवर्तनों के बारे में। पर इस सबसे अनजान हम हर बात पर कहते हैं शुक्रिया। अस्पतालों के चक्कर लगा कर लौटने के बाद हम कहते हैं शुक्रिया, लूट खसोट करने के बाद कहते हैं शुक्रिया, युद्ध को याद करें तो शुक्रिया, दरवाज़े पर खड़े पुलिस वाले दिखे तो शुक्रिया, अफसरों और धनाढ्यों के सामने शुक्रिया और कटते हुये जंगलों और दम तोड़ते जानवरों को देखते हुये भी शुक्रिया। दैत्य की मानिंद जैसे जैसे हमें निगलते जा रहे हैं शहर वैसे वैसे बदहवासी में हम कहते जा रहे हैं शुक्रिया।

असल में बात बहुत सीधी सी थी जिसे हम भूल गये हैं। शक्ति होती है मौन, पेड़ कहते हैं मुझसे और गहराई भी, कहती हैं जड़ें और पवित्रता भी, कहता है अन्न। पेड़ ने कभी नहीं कहा मैं सबसे ऊँचा हूँ। जड़ ने कभी नहीं कहा मैं बहुत गहराई से आयी हूँ और रोटी कभी

नहीं बोली दुनिया में क्या है मुझसे अच्छा। अगर हम ये मौन आवाज़ें सुनें तो पायेंगे कि गुलाब के दिल में जो तिजोरी है वही तुम्हारे दिल में भी है। उसको वैसे ही लुटाओ जैसे सबके बीच लुटा देता है गुलाब, तब तुम्हारा दर्द सबका हो जायेगा।

इस संग्रह में सभी महादेशों को प्रतिनिधित्व दिया गया है। एशिया से भारत, तुर्की, अरब, ईरान और चीन, यूरोप से स्वीडन और पोलैंड, अमेरिका और दक्षिण अमेरिका (चिली) से, अफ्रीका और कैरीबियन यनाईजीरिया और सेंट लूसिया तथा आस्ट्रेलिया से प्रतिनिधि रचनाकारों ने इसमें जगह पाई है। इनमें नोबल पुरस्कार विजेता हैं, राजनीतिक चेतना के मुखर स्वर हैं, स्त्री के पक्ष में सशक्त आवाज़ें हैं और मनुष्यता के पक्ष में खड़ी होती कविता है। दिलचस्प है कि तमाम क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद कविता की केंद्रीय ध्वनि प्रेम, प्रकृति और मनुष्य को बचाये रखने की सशक्त पुकार ही है।

रबीन्द्रनाथ ठाकुर, नाज़िम हिकमत, महमूद दरवेश, सिमी बिंहबिहानी, बेईदाओ, टोमस ट्रांसटोमर, विस्वावा शिम्बोर्स्का, माया ऐंजेलो, डब्ल्यू एस मेरविन, पाब्लो नेरुदा, गैब्रियेला मिस्त्राल, वोल सोयिंका, डेरेक वॉलकॉट, लेस मरे जैसे कवियों का अनुवाद भारत के सुविख्यात कवि-आलोचकों सुलोचना, कुमार मुकुल, सुरेश सलिल, अशोक कुमार पांडेय, यादवेंद्र, गीत चतुर्वेदी, मोनिका कुमार, राजीव कुमार शुक्ल, अनुराधा सिंह, मंगलेश डबराल, राकी गर्ग, विजय कुमार, प्रांजल धर और अनामिका ने किया है। कविताओं का चयन और संयोजन यादवेंद्र तथा राकी गर्ग ने किया है। इसमें सुविख्यात आलोचक विजय कुमार ने भी बहुमूल्य सहयोग प्रदान किया है। मैं उन्हें इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये, तथा विश्व रंग के अवसर पर, इन कवियों को एक बार फिर व्यापक पाठक वर्ग के सामने प्रस्तुत करने के लियेए बधाई देता हूँ।

चित्र : रवीन्द्रनाथ टैगोर

गैब्रिएला मिस्त्राल की कविता

जो नृत्य नहीं करते

एक अपाहिज बच्चे ने पूछा
मैं कैसे नृत्य करूँगा?
तुम्हारा दिल नृत्य करेगा
हमने कहा

तब एक अशक्त ने पूछा
मैं कैसे गाऊँगा?
अपने दिल को गाने दो
हमने कहा

तब एक बेचारे मुरझाये थीस्ल (फूल) ने कहा
लेकिन मैं कैसे नृत्य करूँगा
अपने दिल को हवा में उड़ने दो
हमने कहा

तब ईश्वर ने ऊपर से पूछा
मैं आसमान से कैसे नीचे उतरूँगा
तुम रोशनी के सहारे आओगे
हमने कहा

सारी घाटी एक साथ नृत्य कर रही है
सूरज के नीचे

और जिनके दिल हमसे नहीं जुड़ते
धूल में बदल जाते हैं धूल में।

अंग्रेज़ी से अनुवाद : राकी गर्ग

सामाजिक, सांस्कृतिक, और राजनैतिक उथलपुथल के ऐसे समय में ही हम साहित्य के अनुवाद की ओर देखते हैं। ऐसे में ही हम कविता, कहानियों, उपन्यासों और अब तकनीक की सहायता से, संस्मरणों, ब्लॉग्स और यात्रा वृत्तांतों को पढ़ते हैं। 'दूसरों' के साहित्य को पढ़ने में शरण लेना, कठोर यथार्थ से पलायन नहीं है, बल्कि, उसके उलट, किसी दूसरी भाषा के साहित्य के गंभीर, विचारशील पठन–पाठन के भीतर ही हमें, इस एक दूसरे में गड्डमड्ड होते हुए, तेज़ी से बदलते हुए यथार्थ से, दो–चार होने का भावनात्मक और मानसिक असला–बारूद और हौसला मिलता है।

चित्र : चारुदत्त सूर्यकांत पांडे

अनुभव की आँच में पका **कथा समय**

पुनर्वसु जोशी

कहना न होगा कि अगर पिछली शताब्दी पश्चिम के प्रभुत्व की रही है तो कदाचित, यह कहना भी अतिशयोक्ति नहीं होगा कि इक्कीसवीं शताब्दी में सूचना प्रौद्योगिकी के पदार्पण ने भारत को एशियाई देशों की अग्रिम पंक्ति में ला खड़ा किया है। और इसी के कारण, भारत की सारी भाषाओं ने आमतौर पर और हिन्दी ने– देश भर में सबसे अधिक बोलने वालों के कारण–ख़ास तौर पर, अपनी एक नई पहचान स्थापित की है। और, इसीलिए, इसके साहित्य ने भी, इस नई पहचान के चलते प्रतिष्ठा अर्जित की है। हालांकि, विभिन्न काल खंड़ों के प्रतिनिधि प्रादेशिक और अंतर्राष्ट्रीय साहित्यकार नियमित रूप से हिन्दी में अनदित होते रहे हैं, लेकिन तुलनात्मक रूप से हिन्दी से अंग्रेज़ी या अन्य भारतीय या विश्व की दूसरी भाषाओं में अनुवाद बहुत कम हुआ है। जबकि, हिन्दी का गद्य लेखन, अपनी भाषा के मुहावरे और शिल्प के स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य के बरक्स, बराबरी से खड़े होने की क्षमता बहुत पहले ही हासिल कर चुका था।

दरअस्ल, वास्तविक रूप में हिन्दी कथा–लेखन की यात्रा अभूतपूर्व रही है। यह इस अर्थ में अभूतपूर्व रही है कि वह सब कुछ जिसे दूसरी प्रमुख भाषाओं ने अपनी दीर्घ यात्रा में अर्जित किया, हिन्दी और हिन्दी साहित्य उसे तुलनात्मक रूप से कम समय में प्राप्त कर लिया है। इसी के चलते, हिन्दी कहानियों के इस संकलन में, बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक समय में लिखने वाले लेखक भी हैं और इस नई पीढ़ी के लेखक भी, जो कि इस उत्तरआधुनिक समय के भूमंडलीकरण के यथार्थ में जी रहे हैं और उससे दैनंदिन मुठभेड़ भी कर रहे है। यह नई पीढ़ी जो कि न केवल अवचेतन की भाषा को पढ़ने में दक्ष है, बल्कि, साथ ही साथ, भाषा के अवचेतन को देखने और उसे विघटित करने की क्षमता भी रखती है। या संक्षेप में, राल्फ वाल्डो इमर्सन के शब्दों में कहें, जैसा उन्होने 'द अमेरिकन स्कॉलर' में लिखा था, शहर युग, जैसा कि पाया गया है, को अपने समय की पुस्तकें स्वयं लिखनी चाहिए। या कहें, स्वयं की पीढ़ी के लिए और अगली पीढ़ी के लिए. पुरानी पीढ़ियों की पुस्तकें कारगर न होंगी।

अत:, यह प्रश्न पूछना स्वाभाविक है, कि इस जटिल, हिन्दी–भाषी समाज से, जहाँ कई प्रकार के वर्ग, वर्ण, जाति, उप–जाति नस्ल, आदि न केवल एक दूसरे में घुले–मिले हैं, बल्कि, बहुधा एक दूसरे की पहचान में भ्रमित भी हो जाते हैं, जहाँ सत्ता और ज्ञान, समाज में कई श्रेणियों में अत्यधिक बंटे और बिखरे हुए है, किस प्रकार की कहानियों और उनके अनुवाद की अपेक्षा की जा सकती है। हिन्दी कहानियों के इस संकलन में जहाँ एक ओर हिन्दी कथा–लेखन के पितृपुरुषों जैसे प्रेमचंद, जैनेन्द्र, अज्ञेय आदि का रचना संसार है, जो कि भूतकाल की प्रज्ञा और सामाजिक विसंगतियों की एक झलक प्रस्तुत करता है, वहीं दूसरी ओर, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, और मोहन राकेश जैसे कथाकारों की कहानियाँ, उन कथाकारों की कथाओं की श्रेणी में आती हैं जिन्होने, देश की स्वतन्त्रता के पश्चात के नेहरु के युग से हुए मोहभंग को दर्ज़ किया। कहना न होगा कि कथा–लेखन के उस समय की सीमाओं पर, एक विभाजित देश और विभाजित काल की सच्चाइयां प्रमुखता से उभर कर सामने आती हैं और मनुष्य की सतत संघर्षशील जिजीविषा को रेखांकित करती हैं।

कदाचित, यह भी कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं शताब्दी अनुवाद के लिए स्वर्णिम युग साबित होने की संभावना प्रस्तुत करती है। हज़ारों–लाखों लोग, भूमण्डल के एक कोने से दूसरे कोने पर आ–जा रहे हैं, भले ही वह व्यापार सम्बंधित प्रवास हो, पर्यटन हो, या प्राकृतिक या मानव–निर्मित कारणों से उपजा हुआ देशांतरण हो। और जब हम, पृथ्वी पर बहती हुई इस मानवीय आवागमन की विभिन्न धाराओं को देखते हैं, तो हम यह भी पाते हैं कि इन्हीं धाराओं में हमें भाषा, संस्कृति, और पहचान की पृथक धाराएं भी साथ चलती दिखती हैं। मानव समूह, अपनी भाषा और अपनी संस्कृति साथ लेकर चलते हैं और साथ ही साथ दूसरी भाषाओं और संस्कृतियों से भी रूबरू होते हैं। उत्तरऔपनिवेशिवादी विचारक होमी भाभा (वैज्ञानिक होमी जहाँगीर भाभा नहीं!) ने इन सांस्कृतिक और भाषाई संरचनाओं के वृहद् परस्पर मेलजोल को, ठीक ही, उभरता हुआ एक नया वैश्विक यथार्थ कहा है। यह राष्ट्रों, राष्ट्र–राज्यों, संस्कृतियों और सामाजिक संरचनाओं के मध्य एक नया स्पेस है, जहाँ अधिक–से–अधिक लोग, जो ज्ञात और परिचित है और वह जो अज्ञात और अपरिचित है, के मध्य सतत सामंजस्य बैठाते हुए, एक 'त्रिशंकु' की सी स्थिति में जीने के लिए बाध्य हैं, और यह 'त्रिशंकु' स्थिति उन्हें एक वैश्विक आशंका और कुछ सीमा तक एक अधर की एक अखंडित स्थिति में रख देती है. अत:, ऐसे में अनुवाद, विभिन्न संस्कृतियों के मध्य ईमानदार सम्प्रेषण के महत्व को रेखांकित करते हुए स्वयं को उस मानवीय स्थिति और और संबंधों के साझे सत्व के रूप

ये कहानियाँ अनपेक्षित सत्यों से साक्षात्कार करती हैं। वे जीवंत हैं, भावनाओं से ओतप्रोत हैं, अचानक हुए रहस्योद्घाटनों, चौंधियाने वाले यथार्थों से परिपूर्ण हैं। इस संकलन से गुज़रते हुए ऐसा लगता है मानो हम किसी अजायबघर से गुज़र रहे हों और जहाँ किसी काँच में हम या तो अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं या हमारे किसी परिचित या किसी सगे–सम्बन्धी का। जिन कथाकारों की रचनाएँ इस संकलन में हैं, वे अभिव्यक्ति के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

साहित्य, अपनी निरंतरता और उथलपुथल के समय में अपनी प्रासंगिकता अक्षुण्ण रखता है क्योंकि गहरी मानवीय संवेदनाएं जो किसी भी कहानी या उपन्यास से दिक् और काल से परे होकर रिस कर आती हैं वे ही किसी एक कालखण्ड के साहित्य को किसी दूसरे कालखण्ड के साहित्य के साथ एक वंश परम्परा में नाथती है।

में प्रस्तुत करता है। अनुवाद का महत्व, भूतकाल के किसी और समय के बनिस्बत, आज के समय में स्वयं को और अधिक प्रबलता से स्थापित करता है क्योंकि भाषाओं और संस्कृतियों के इस बढ़ते हुए परस्पर मेलजोल के चलते, अंतर्सांस्कृतिक समझ और प्रमुख सांस्कृतिक भेदों की जागरूकता की आवश्यकता अत्यधिक तीव्रता से महसूस की जा रही है। तुलनात्मक साहित्य की अमेरिकी प्राध्यापक बेल्ला ब्रोद्स्की के शब्दों में कहें तो, 'अनुवाद, सारे सांस्कृतिक विनिमयों के मूल में है, भले ही वे कितने ही सौम्य हों या कितने ही भ्रष्ट।' वे तो यहाँ तक कहती हैं कि अनुवाद को, हमारे बहुभाषिक, बहुसांस्कृतिक विश्व की संकल्पना के लिए मूलभूत माना जाना चाहिए।

अत:, सामाजिक, सांस्कृतिक, और राजनैतिक उथलपुथल के ऐसे समय में ही हम साहित्य के अनुवाद की ओर देखते हैं। ऐसे में ही हम कविता, कहानियों, उपन्यासों और अब तकनीक की सहायता से, संस्मरणों, ब्लॉग्स और यात्रा वृत्तांतों को पढ़ते हैं। 'दूसरों' के साहित्य को पढ़ने में शरण लेना, कठोर यथार्थ से पलायन नहीं है, बल्कि, उसके उलट, किसी दूसरी भाषा के साहित्य के गंभीर, विचारशील पठन-पाठन के भीतर ही हमें, इस एक दूसरे में गड्डमड्ड होते हुए, तेज़ी से बदलते हुए यथार्थ से, दो-चार होने का भावनात्मक और मानसिक असला-बारूद और हौसला मिलता है। कदाचित, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि कोई भी जटिल समाज और संस्कृति और विशेषकर भारतीय समाज जैसा जटिल और विविधतापूर्ण समाज, इतने वर्षों तक अपना अस्तित्व नहीं बनाए रख सकता था अगर वह मानवता के मूलभूत सिद्धांतों पर से अपनी पकड़ खो चुका होता और अगर उसने अपने सामाजिक, सांस्कृतिक, और राजनैतिक अवचेतन में असंख्य मतों, विचारों, स्वरों, और असहमतियों का समावेश न किया होता। ऐसे उथल-पुथल के समय में साहित्य, अधिकारों से वंचित पाठक को इस सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनैतिक उथलपुथल में एक आवाज़ देकर एक सशक्त भूमिका अदा करने में और उसे अपने अधिकारों और स्वतंत्रताओं पर प्रभावशाली ढंग से दावा करने में पुन: सामर्थ्यवान बनाता है क्योंकि किसी भी दमन के लिए कलम से बड़ा कोई दुर्जेय शत्रु नहीं है।

जब साहित्य की सतही वस्तुओं को हटा कर, उसका उसके मूलभूत स्वरुप में आकलन किया जाता है, तब जो बचता है, वह यह है कि साहित्य और कथा-लेखन के मूलभूत सिद्धांत बदलते नहीं हैं। साहित्य, अपनी निरंतरता और उथलपुथल के समय में अपनी प्रासंगिकता अक्षुण्ण रखता है क्योंकि गहरी मानवीय संवेदनाएं जो किसी भी कहानी या उपन्यास से दिक् और काल से परे होकर रिस कर आती हैं वे ही किसी एक कालखण्ड के साहित्य को किसी दूसरे कालखण्ड के साहित्य के साथ एक वंश परम्परा में नाथती है। कथा-कहानियों की यह सर्वोत्कृष्ट मानवीयता है जो काल से परे जाती है और दशकों और शताब्दियों के बाद भी उन्हें अप्रासंगिक होने से बचाती है। हमारी साझी मानवता का, इस प्रकार से साहित्य का मूलभूत आधार होना ही किसी एक कथा को अपने सृजन के कालखण्ड से मुक्त कर, भविष्य के किसी दूसरे नितांत अपरिचित कालखण्ड में पाठक के लिए प्रासंगिक बनाता है।

इस अनुदित संकलन में, जो कि 'विश्व-रंग' लिट्रेचर फेस्टिवल के तत्वावधान में आईसेक्ट प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है और जो प्रतिष्ठित हिन्दी कथाकार और कवि सन्तोष चौबे और उनकी टीम के विजन को साकार करता है। प्रस्तुत कहानियाँ अनपेक्षित सत्यों से साक्षात्कार करती हैं। वे जीवंत हैं, भावनाओं से ओतप्रोत हैं, अचानक हुए रहस्योद्घाटनों, चौंधियाने वाले यथार्थों से परिपूर्ण हैं। ये रचनाएं, लगभग-लगभग एक सौ पच्चीस वर्षों के कालखण्ड में लिखी गई और ये वे कहानियाँ हैं जिन्होनें भारतीय समाज, विशेषकर हिन्दी-भाषी समाज के सामाजिक परिवेश के छोटे-छोटे पक्षों का इतना सटीक चित्रण किया है कि वे समय की अग्निपरीक्षा से निकल कर, काल की सीमाओं को पार कर, अपनी शैली, शिल्प, नूतनता और जीवन्तता के कारण आज भी कहीं-न-कहीं हमारे भीतर, भले ही वे वृद्ध हों या युवा, प्रतिध्वनित होती हैं. वे, न केवल प्रतिध्वनित होती हैं बल्कि यह कहना उचित होगा कि इन कथाओं ने स्वयं को हमारे सामाजिक अवचेतन में गूंथ लिया है। इन सारी कहानियों में एक साधारण सी बात एक जैसी है- वह बात है एक ऐसे अनुभव की सार्वभौमिकता जो कि युवा हों या वृद्ध, सबको अपील करता है। एक सौ पच्चीस वर्षों के विस्तृत कालखण्ड में रची गई इन कहानियों के संकलन से गुज़रते हुए ऐसा प्रतीत होता है मानो हम किसी अजायबघर से गुज़र रहे हों और जहाँ किसी काँच में हम या तो अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं या हमारे किसी परिचित या किसी सगे-सम्बन्धी या नातेदार का। जिन कथाकारों की कहानियाँ इस संकलन में हैं, वे प्रतिष्ठित हैं और ये कहानियाँ उनके लेखन और अभिव्यक्ति का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं।

महफ़िलों के महकते मंज़र...
और चंपई यादें

विनय उपाध्याय

रोशनी के छंद गाती कार्तिक की सुरमई शामें...। संस्कृति की तन्मय तान, विरासत का विजय गान और संवादों की लय पर विचारों का आदान-प्रदान। एक खुला आसमान जहाँ शब्द, दृश्य, रंग, ध्वनि और छवियों का संसार मनुष्यता की इबारत रच रहा था। कला की कस्तूरी बह रही थी। लालित्य की लालिमा से ओर-छोर दमक रहा था। यूँ वक़्त की क़िताब में एक सुनहरा पन्ना जुड़ा जिसके माथे पर लिखा था- 'विश्वरंग'। संस्कृति का ऐसा अनुष्ठान जहाँ कलाओं का अभिषेक सारी क़ायनात के अमन, सुकून, प्रेम और भाईचारे के लिए था।

कुछ ऐसे ही चंपई अहसास जब यादों के दरीचे खटखटाते हैं तो विश्वरंग के खुलते आंगन में चहक-महक से तारी महफिलों के मंज़र उजले होने लगते हैं। ये महफिलें हिन्दुस्तानी तहज़ीब के छलकते समंदर और उसमें सदियों से लहराती रवायतों के दरिया के किनारे बैठकर चैन के लम्हे गुज़ारने का बेशकीमती ज़रिया बनीं।

इस ज़खीरे में क्या कुछ नहीं था! इबादत के पाक सुरों में घुली ध्रुपद की तानों से लेकर शहनाई का मंगल गान, गुदुम बाजा का खिलखिलाता नाद, संतूर और बाँसुरी की जुगलबंदी पर भक्ति और प्रेम की मोहर लगाती बंदिशें, कबीर, टैगोर और परंपरा के लोक गीतों का संगीत बिखेरता कोरस और इन तमाम रंगों-महक को चरम पर ले जाती सूफ़ियाना मौसिक़ी की महफ़िलें। 'विश्वरंग' की इसी सुंदर थाल में थिरकती जनजातीय और लोक नृत्यों की लय-ताल और मुद्राओं की नृत्यमय छवियों को निहारना भी सुखद था। रंगमंच पर संवाद और अदाकारी की बेमिसाल प्रस्तुतियों का सिलसिला भी बना और दरो-दीवार पर चस्पा कलाकृतियों पर उभर आयी रंग-रेखाओं ने कलागुरु टैगोर को श्रद्धा सुमन अर्पित किये। रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के टैगोर विश्व कला एवम् संस्कृति केन्द्र के संयोजन में तैयार हुआ यह सांस्कृतिक ताना-बाना इस बात की ताईद करता है कि जीवन को सुन्दर, ख़ुशहाल और यक़ीन से हरा-भरा बनाती संगीत, नृत्य, नाटक और चित्रकला जैसी सृजन की विधाएँ प्रार्थना के पलों सी सात्विक हैं। यहाँ मन का रंजन है तो बहुलता में एकता का संदेश भी सघन है। 'विश्वरंग' का बीज मंत्र मनुष्य की महिमा का उद्घोष है जो शताब्दियों

से चली आ रही महान सांस्कृतिक परंपराओं के गौरव को गाता वक़्ती दौर की नई आवाज़ों में अपनी धड़कनों को सुनना चाहता है। परिकल्पना, संयोजन और पूरे सांस्कृतिक विन्यास में 'विश्वरंग' की यह मंशा मूर्त होती दिखाई दी।

इस सांस्कृतिक स्वप्न को हक़ीकत का जामा पहनाने हिन्दुस्तान के हर कोने से कला की महान विभूतियाँ, गुणी युवा कलाकार और उत्साह से भरी नौनिहाल प्रतिभाएँ एक आवाज़ पर एक ज़मीन पर सिमट आयीं। इस फेहरिस्त में रंगमंच की अग्रणी निर्देशक–कला विदूषी उषा गांगुली, समकालीन चित्रकला के मान्य हस्ताक्षर प्रभाकर कोलते, अशोक भौमिक, प्रभु जोशी, हरचंदनसिंह भट्टी, देवीलाल पाटीदार, ध्रुपद गायक पद्मश्री उमाकांत–रमाकांत गुंदेचा, शहनाई वादक याकूब ख़ान, गायिका नगीन तनवीर, सुंद्री वादक भिमन्ना जादव, रंगकर्मी पीलू भट्टाचार्य, संगीतकार उमेश तरकसवार, रीना सिन्हा, अमीर खान, अमित मलिक, सत्येन्द्र सोलंकी, रामेन्द्र सोलंकी, भास्कर दास, शुभ्रवत सेन, दयाराम सारोलिया, राजीव सिंह, संदीपा पारे, नृत्यांगना श्वेता देवेन्द्र, क्षमा मालवीय, मंजू मणि तथा तनिष्का हतवलने, लोक कलाकार संजय महाजन, स्वाती उखले, तृप्ति नागर, जनजातीय कलाकार दिनेश भारवे और अग्नेश केरकेट्टा सहित दो सौ से भी ज़्यादा कलाकार शरीक हुए।

विश्वरंग की सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ इस सच के पास ले जाती हैं कि साहित्य और कलाओं के अन्तर्सबंधों की बुनियाद में सदा से एक सृजनात्मक बेचैनी रही है। वो अकुलाहट जो नया, अनूठा और बहुरंगी रचना चाहती है। हमारा समूचा सांस्कृतिक परिवेश इसी कलात्मक विविधता, सौन्दर्य बोध और अपार आनंद से सराबोर है। जरा गौर से पड़ताल करें तो एक विधा से दूसरी विधा गुपचुप संवाद करती प्रतीत होती है। कहीं कोई कविता, कोई छंद, सुर–ताल से हमजोली कर रहा है, कहीं देह की भाषा उसके मर्म को नृत्य में अभिव्यक्त कर रही है, कहीं कोई कथा–उपन्यास और नाटक रंगमंच पर अभिनय की छवियों में साकार हो रहे हैं तो रंग–रेखाओं और मूर्ति–शिल्पों में कोई भावमय लगन जीवन के देखे–अनदेखे दृश्यों को उकेर रही है। खेत–खलिहानों से लेकर गाँव की चौपाल और छोटे कस्बों और शहरों से लेकर राजधानियों और महानगरों तक कलात्मक कौतुहल की ये बानगियाँ देखी जा सकती हैं। आपाधापी भरी बोझिल और बेस्वाद होती जा रही दुनिया आखिर थक–हार कर संस्कृति की छाँव में ही सुस्तानी चाहती है।

रंगों में रमती आवाज़

कला के केनवॉस पर नई उद्भावनाएँ, नए मानस का सृजन करती हैं। जान-अनजानी छवियाँ, सुनी-अनसुनी आवाज़ों के रुपक रचकर कोई सर्जक इस तरह पेश आता है, गोया हमारी ही सोई-खोई धड़कनों का संगीत समेट लाया हो। लीलाधर मंडलोई 'ब्रीदिंग स्टोन्स' में इसी लीलाभाव के साथ प्रवेश करते हैं। शब्द, स्वर और रंगों के प्रति उनका सृजनात्मक अनुराग इस श्रृंखला में सिरजी गयी कलाकृतियों में रहस्य के अनेक आयाम खोलता है। 'विश्वरंग' के परिसर में उनकी कलाकृतियों की नुमाईश रुचि और जिज्ञासा के ऐसे ही पहलू संजोती रही।

ब्रीदिंग स्टोन्स

मंडलोई इन कलाकृतियों की भूमि खुलासा करते हुए कहते हैं- ''मेरे लिए यह चित्र मौन के साथ सामंजस्य हैं जहाँ संसार और शब्द मुझे कहीं बीच में आ कर मिलते हैं। इन अनुभवों, भावों और संरचनाओं से गुजरते हुए कुछ ऐसा निकल कर आता है जो उससे मेल खाता है जो हम पहले से जानते हैं। लेकिन उसे याद करके पुनर्जीवित करना है। वह अपनी ताज़गी भरी और अप्रत्याशित बनावट से अद्भुत खुलासे करता है। काव्य और चित्रकला के बीच कलात्मक तालमेल मेरे नए नज़रिये के जरिये एक रूपक की तरह उभरता है। मंडलाई के लिए ये कृतियाँ रंगों की स्वर-रचना की तरह है जो विभिन्न तस्वीरों, रचनाओं, और उनके संसार की अनजानी, अनसुनी आवाजों का एक साथ मिलकर एक ऑर्केस्ट्रा का निर्माण कर रही हैं।

ग़ौर करने की बात ये है कि आधुनिक कला की भाषा में ये चित्र अमूर्तन की दुनिया रचते हैं लेकिन चित्रकार और कला आलोचक अशोक भौमिक एक नया विमर्श प्रस्तुत करते हैं- ''हम अक्सर चित्रकला के प्रति अपने असामान्य नजरिये के चलते उस पर 'एब्सट्रैक्ट' का ठप्पा लगा देते हैं। हालांकि जब हम किसी पेंटिंग में किसी अर्थ या संदेश को खोजने लगते हैं तब वह अपने अस्तित्व का उद्देश्य खो देती है।'' वे टैगोर का कथन उद्घृत करते हुए कहते हैं कि 'चित्रकला को समझा नहीं महसूस किया जाता है। और यह भी कि चित्र सिर्फ बयां कर सकते हैं, समझा नहीं सकते।'

लीलाधर मंडलोई के चित्रों को देखते हुए टैगोर के यह शब्द रह-रह कर हमें याद आते हैं। 'ब्रीदिंग स्टोन्स' प्रदर्शनी में लगे चित्र अपने भेष में किसी भी तरह की कोई परत या कोई दार्शनिक संदेश नहीं लिए है जो विद्वान दर्शकों द्वारा खोजा जाना है, बल्कि वह दर्शकों को सिर्फ प्रकृति के कुछ अनछुए पहलुओं से मुलाकात करवाते हैं। एक कवि, एक लेखक, एक फिल्मकार और संपादक होने के नाते, लीलाधर मंडलोई भाषा, शब्द और उनके आशय के समंदर में गहरे उतरते रहे हैं। लेकिन वर्तमान में एक एब्सट्रैक्ट पेंटिंग बनाने वाले के रुप में वह अर्थ और व्याख्याओं की बेड़ियों के मुक्त होने का अनोखा स्वभाव व्यक्त करते हैं। उनके अंदर का पुकारता हुआ कवि, उन्हें बार-बार अनूठे रूप ढूंढने पर मजबूर करता है, जो शायद उन्हें अपने प्रिय लेखक जैसे टी 'एस' एलियट, शमशेर, गजानन माधव मुक्तिबोध या कभी अपनी रचित किसी पंक्ति या छंद की याद दिलाते हैं।

'विश्वरंग' में दुनियाभर से आए कलाप्रेमियों के लिए यह प्रदर्शनी इस मायने में अनूठी थी जहाँ तकनीक और काव्य संवेदना एक साथ मिलकर एक ऐसे आधार की नीव रखते हैं जहाँ कला अपनी सांस भर आज़ाद उड़ान भर सके। 'ब्रीदिंग स्टोन्स' में एक कवि और कलाकार के आत्म संवेदन का रचनात्मक उद्घाटन है। – **प्रेक्षक**

लिखे-कहे हुए शब्द और विचार को कहानी, डायलॉग, स्क्रिप्ट, गीत, अभिनय, दृश्य आदि में जिस तरह से पिरोया जाता है वह कितना साहित्य है और कितनी कला और कितना पेशेगत हुनरय इन्हीं सवाल-जवाबों के आसपास यह सत्र सम्पन्न हुआ। सिनेमा की जादुई दुनिया से हर कोई जुड़ना चाहता है। पहले सिनेमा हॉल, फिर टेलिविजन और अब मोबाइल के कारण शायद ही ऐसा कोई हो जो फिल्मों की चकाचौंध और उसके जादू से बच पाया हो।

समाज, कला, हुनर और **वक्त की पड़ताल**

सुदीप सोहनी

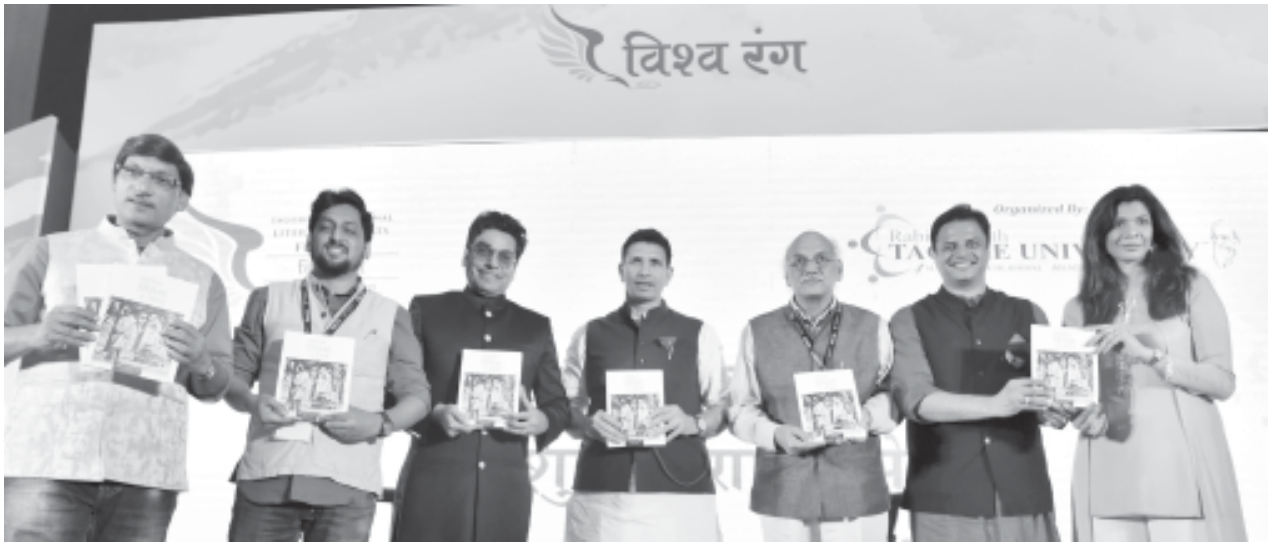

लोकार्पण : '**साहित्य, सिनेमा और समय**'.... सिने अभिनेता आशुतोष राणा, विश्वरंग के निदेशक संतोष चौबे, पूर्व मंत्री जीतू पटवारी, पुस्तक के लेखक सुदीप सोहनी, आईसेक्ट के निदेशक सिद्धार्थ चतुर्वेदी, पल्लवी राव चतुर्वेदी और टैगोर कला केन्द्र के निदेशक विनय उपाध्याय

भोपाल के मिंटो हाल के भव्य परिसर में 'विश्वरंग' का आख़िरी दिन, आख़िरी शाम और ये आख़िरी सत्र। कला, साहित्य और संस्कृति से जुड़े रचनात्मक सरोकारों से इतर तमाम विषयों को समेटने का यह अंतिम मौका है। सिनेमा के कद्रदानों और देश-विदेश से पधारे मेहमान-रसिकों और श्रोताओं को 'साहित्य और सिनेमा' संवाद का इंतज़ार है। एक ओर विभिन्न सभागारों में चल रहे समानान्तर सत्रों को समय पर शुरू और खत्म करने का दबाव तो दूसरी ओर श्रोताओं के अपनी पसंद के सत्रों में सहभागिता की रूचि। मैं मिंटो हाल के निराला सभागार में चल रहे 'साहित्य: दृश्य-श्रव्य माध्यम एवं सोशल मीडिया' के सत्र में बतौर प्रतिभागी मौजूद हूँ मगर घड़ी की सुइयों पर बराबर नज़र बनी है। साथ ही एक बेचैनी भी कि सिनेमा के जिस सत्र का इंतज़ार मैं पिछले दो-तीन महीने से कर रहा था वह अबसे कुछ मिनटों मे शुरू होने वाला है। सिनेमा और साहित्य की कड़ी के सवाल-जवाब कुछ और दिलचस्प हो इसलिए मेरे साथ 'विश्वरंग' के कला समन्वयक विनय उपाध्याय भी मौजूद हैं।

मेरे मन में सवाल भी बहुत से हैं और सत्र के ठीक-ठाक सम्पन्न हो जाने की मंशा भी। मैं दोपहर 3 से शुरू हो कर लगभग 4.40 पर समाप्त हुए 'साहित्य: दृश्य-श्रव्य माध्यम एवं सोशल मीडिया' के सत्र से लगभग दौड़ता हुआ महादेवी सभागार पहुंचता हूँ। चूंकि इस सत्र का मोडरेशन मुझे करना है तो मैं तय वक्त से पहले सारे प्रतिभागियों के साथ बातचीत कर लेना चाहता हूँ। इस सभागार में पहले से चल रहा सत्र समाप्त नहीं हुआ है मगर देखता हूँ कि बहुत सारे युवा साथी और कई अन्य श्रोता 'सिनेमा और साहित्य' के इस सत्र को देखने-सुनने पहले से ही सभागार के बाहर मौजूद हैं। गुजरात से आए एक दंपत्ति ने 8 नवंबर को लोकार्पित हुई पुस्तक 'साहित्य सिनेमा और समय' में मौजूद एक टिप्पणी को पढ़ कर मुझसे संपर्क किया। वे गुजरात से खासतौर से 'विश्वरंग' को देखने के लिए भोपाल आए हैं। उन्होंने ख्यात गुजराती फिल्म समीक्षक बकुल टेलर के जिक्र और उनकी टिप्पणी को पुस्तक में पढ़कर मुझसे बात की। मैं इस जल्दबाजी के बीच विस्मय और खुशी से भरा भी हूँ कि सिनेमा की पहुँच एक आम दर्शक तक कितनी आसान और गहरी भी है। थोड़ी ही देर में कोलकाता से पधारी विदुषी रंगकर्मी उषा गांगुली और लंदन से पधारे पत्रकार-लेखक ललित मोहन जोशी भी दर्शक दीर्घा में मुझे दिखाई देते हैं और सत्र की शुरुआत में हो रहे विलंब के लिए मुझसे पूछ रहे हैं। हम सब कुछ ही पलों में 'सिनेमा में साहित्य और कला' विषय पर बातचीत करेंगे। जैसे ही पहला सत्र समाप्त होता है उसके कुछ ही मिनटों में सभागार की कुर्सियाँ युवा कलाकारों, दर्शकों से भर जाती हैं। सत्र में शामिल होने के लिए आए हिन्दी सिनेमा के ख्यात गीतकार, अभिनेता स्वानन्द किरकिरे, युवा फिल्म लेखिका और स्क्रीनराइटर्स एसोसिएशन की वाइस प्रेसिडेंट ज्योति कपूर तथा जाने-माने कला निर्देशक जयंत देशमुख को देखने-सुनने की गरज सभी को इस सभागार तक खींच लाई है।

अपने गीतों 'बंदे में था दम' (फिल्म : लगे रहो मुन्नाभाई) और 'बहती हवा सा था वो' (फिल्म : 3 इडियट्स) के लिए दो बार के राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार से नवाजे गए तथा चमेली, परिणीता, 3 इडियट्स, लगे रहो मुन्नाभाई, पीपली लाइव, बर्फी आदि फिल्मों के लिए गीत लिख चुके स्वानन्द किरकिरे हिन्दी फिल्म इंडस्ट्री के नामचीन गीतकार हैं। मराठी फिल्म 'चुंबक' के लिए इस वर्ष उन्हें सहायक अभिनेता का राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार भी घोषित हुआ है। यशराज

प्रोडक्शन्स की दावत-ए-इश्क सहित पिछले साल आयुष्मान खुराना-नीना गुप्ता अभिनीत सफल फिल्म 'बधाई हो' जैसी फिल्मों की लेखिका ज्योति कपूर विशेष रूप से इस सत्र में उपस्थित रहेंगी। खास यह भी कि फिल्मों में लेखकों के अधिकारों के लिए काम करने वाली संस्था स्क्रीनराइटर्स असोसियेशन की वे वाइस प्रेसिडेंट भी हैं। इसके साथ ही ज्योति देश-विदेश के कई प्रमुख फिल्म संस्थानों में बतौर फेकल्टी पढ़ाती भी हैं। बवंडर, मकबूल, दीवार, आँखें, राजनीति जैसी 50 से भी अधिक फिल्मों सहित तारक मेहता का उल्टा चश्मा, ये रिश्ता क्या कहलाता है, बिदाई जैसे अनेक धारावाहिकों के कला निर्देशक रहे चुके जयंत हिन्दी फिल्म इंडस्ट्री में जाना-पहचाना नाम हैं। एक ही मंच पर गीतकार, पटकथा लेखक और कला निर्देशक से उनके अनुभवों को सुनना-सहेजना निश्चित ही दर्शकों के लिए इस सत्र के मुख्य आकर्षणों में से एक होगा। हम उन्हें बताते हैं कि स्वानन्द किरकिरे की मुंबई से आने वाली फ्लाइट रद्द हो गई है और वे नहीं आ पाये हैं। मगर उन्होंने आज की इस बातचीत के लिए अपने अंदाज में 3 वीडियो संदेश मुझे सुबह भेजे थे। मैंने वो संदेश दर्शकों के लिए चलवाये और इसके बाद बच्चों के प्रसिद्ध कार्टून 'ढब्बू जी' सहित राज कपूर और अन्य कई निर्देशकों की फिल्मों की पटकथा लिख चुके देश के ख्यात लेकहक-कार्टूनिस्ट आबिद सूरती और अपनी तरह के अनूठे फिल्म समीक्षक अनिल चौबे ज्योति और जयंत जी के साथ मंच पर मौजूद हैं।

अपनी भव्यता में भी रचनात्मकता के सूत्र तलाशने की 'विश्वरंग' की इस बार की पहल में सिनेमा बनने का सफ़र एक खास सत्र के रूप में शामिल हुआ। विचार, लेखन और परिकल्पना में फिल्मों के सोचने-बनने, साहित्य और कला के दायरों को तलाशने और उसके पेशे के हुनर को समझने का यह ख़ास मौका था।

इस सत्र का औपचारिक संचालन युवा पत्रकार प्रिंस गाबा कर रहे हैं। और पहले सवाल जिसमें साहित्य और सिनेमा के संबंधों को अपने नजरिये से देखने का आग्रह है एक-एक करके सभी अपनी बात रखते हैं। 'बधाई हो' और 'गुड न्यूज' (तब यह फिल्म आगामी दिसंबर महीने में रीलीज होने वाली थी) जैसी फिल्मों की लेखिका ज्योति कपूर सिनेमा की कहानियों को साहित्यिक के बजाए सामाजिक ज्यादा कहती हैं। वे बाकायदा कला और कमर्शियल फिल्मों के अंतर को स्पष्ट करते हुए स्क्रिप्ट की तकनीक मगर उससे जुड़े अहसासों को जोड़ती हैं। वहीं, विशाल भारद्वाज की 'मकबूल', सहित लगभग सैकड़े की तादाद में फिल्म और टीवी के लिए कला निर्देशन कर चुके जयंत 'मकबूल' के उदाहरण से साहित्य और उसके सिनेमाई रूपान्तरण की बारीकियों को अपने नजरिये से खोलते हुए कहते हैं कि साहित्यिक कहानियों के रूपान्तरण में निर्देशक की सोच माने रखती है। लेकिन बतौर कला निर्देशक वे सिनेमाई कहानी के अनुसार ही सेट या अन्य महत्वपूर्ण चीजों का चुनाव या निर्माण करते हैं। इसके लिए आपकी आँख में कैमरा फ्रेम और फिल्म का ओवरऑल लुक पहले से होना तय होता है। साथ ही वे कलात्मक छूट के बदले तर्क संगत बदलाव और उनके क्रियान्वयन की बात करते हैं। आबिद सूरती इस बातचीत में अपनी पचास सालों की यात्रा और विभिन्न निर्देशकों के साथ हुई बैठकों, लिखी हुई पटकथाओं को याद करते हैं। उनमें अब भी वही उत्साह है और बात-बात पर बच्चों-सी बाल सुलभ जिज्ञासा भी। मगर अनिल चौबे थोड़े विश्लेषणात्मक हैं। उनके लिए सिनेमा और साहित्य की जुगलबंदी की बहस के पहले सिनेमाई इतिहास को जान लेने का आग्रह भी है। सत्यजित राय और गुरुदत्त से लेकर बिमल रॉय और अनुराग कश्यप तक आज के सिनेमाई इतिहास को वो संक्षेप में इस बातचीत के दौरान रखते हैं। यह बातचीत जवाबों के बीच से निकल आए सवालों से अपने अंजाम पर पहुँचती है। दर्शक शुरू से ही इस बातचीत का जैसे हिस्सा रहे हैं। मंच और श्रोताओं के बीच जैसे कुछ भी दूरी नहीं थी इसलिए हर जवाब के साथ एक सहमति या जिज्ञासा दर्शकों से भी आती जा रही थी।

इस सत्र और प्रतिभागियों के साथ निष्कर्ष यही निकला कि साहित्य और कलाओं के आसपास सिनेमा को देखना हमेशा से ही फिल्मकारों और सिनेमाप्रेमियों के लिए उत्सुकता का विषय रहा है। कला और साहित्य के साथ बाजार का रिश्ता भी सिनेमा को दर्शकों तक पहुंचाने में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाता है। सिनेमा में बाजार का यही हस्तक्षेप उसे उद्योग का दर्जा देते हुए इसे 'कमर्शियल आर्ट' की श्रेणी में खड़ा करता है। मगर, इन सबके बीच विचार और कला के रूप में उसकी उपस्थिति को नकारा नहीं जा सकता।

लिखे हुए और कहे हुए शब्द और विचार को कहानी, डायलॉग, स्क्रिप्ट, गीत, अभिनय, दृश्य आदि में जिस तरह से पिरोया जाता है वह कितना साहित्य है और कितनी कला और कितना पेशेगत हुनर इन्हीं सवाल-जवाबों के आसपास यह सत्र सम्पन्न हुआ। सिनेमा की जादुई दुनिया से हर कोई जुड़ना चाहता है। अपनी भव्यता में भी रचनात्मकता के सूत्र तलाशने की 'विश्वरंग' की इस बार की पहल में सिनेमा बनने का सफर एक खास सत्र के रूप में शामिल हुआ। विचार, लेखन और परिकल्पना में फिल्मों के सोचने-बनने, साहित्य और कला के दायरों को तलाशने और उसके पेशे के हुनर को समझने का यह ख़ास मौका था।

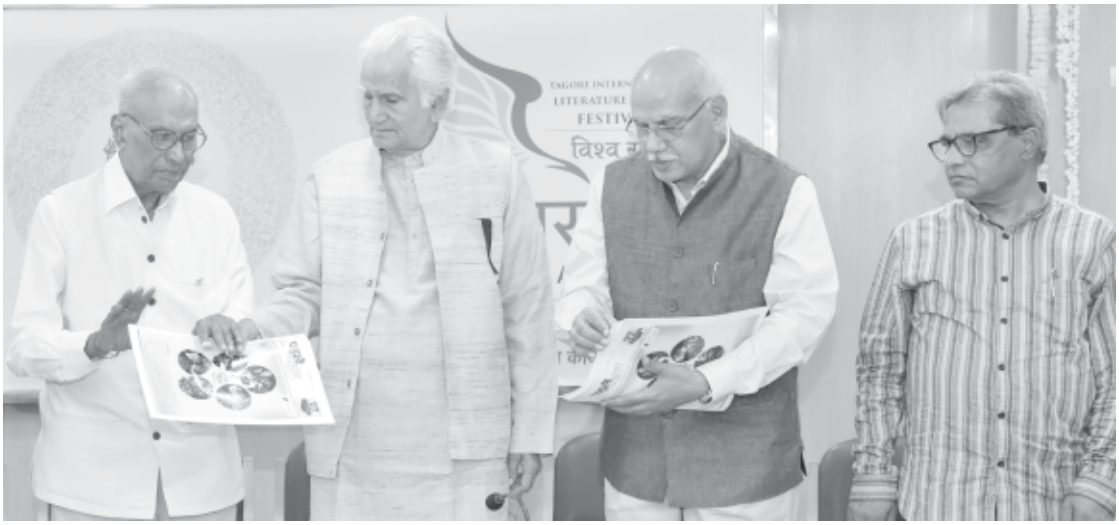

आरम्भ

साहित्य का रास्ता प्रेम से होकर गुज़रता है

'विश्वरंग' की पूर्वपीठिका के तहत दिल्ली के साहित्य अकादमी सभागार में 'आरम्भ' का सारस्वत आयोजन एक नए सांस्कृतिक आत्म विश्वास और रचनात्मक परस्परता का प्रतीक बना। साहित्य के अनेक मूर्धन्य अध्येता, कवि-कथाकार, संपादक तथा साहित्यिक संस्थाओं से संबद्ध रचनाकार बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। उद्‌गारों में यह आवाज़ उभर आयी कि साहित्य का रास्ता प्रेम से होकर गुज़रता है।

कार्यक्रम की शुरूआत 'विश्वरंग' समारोह पर आधारित एक लघु फिल्म के प्रदर्शन के साथ हुई। स्वागत वक्तव्य देते हुए सन्तोष चौबे निदेशक, टैगोर अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव और कुलाधिपति, रबीन्द्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय ने समारोह की अवधारणा और जरुरत को रेखांकित किया।

बताया कि इस महोत्सव के माध्यम से हम हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रोत्साहित करना चाहते हैं। ऐसा हम हिन्दी साहित्य, कला और संस्कृति में संलग्न प्रत्येक व्यक्ति के लिए चर्चा, सहभागिता और विमर्श का मंच प्रदान करने के माध्यम से करना चाहते हैं। इसके लिए हमने ऐसे प्रतिष्ठित अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों और संगठनों के साथ साझेदारी की है जिनका ध्यान भारतीय भाषाओं की साहित्यिक समृद्धि और महत्व के संबंध में केन्द्रित है। हमारी कोशिश है कि गद्य, कविता, चित्रकला, संगीत, लोककला और लोकसंगीत समेत सभी ललित कलाओं के बीच एक सकारात्मक पुल का निर्माण किया जाए। इस अवसर पर भोपाल से प्रकाशित पाक्षिक समाचार पत्र 'पहले पहल' के 'पुस्तक यात्रा' विशेषांक और 'विश्वरंग' के पोस्टर का लोकार्पण किया गया।

प्रथम सत्र में 'टैगोर और गांधी: वैचारिक संघर्ष और सहमति' विषय पर प्रो. इन्द्र नाथ चौधरी ने विस्तृत व्याख्यान दिया। उन्होंने रवीन्द्रनाथ टैगोर के अन्तर्राष्ट्रीयतावाद और गांधी के चरखे के दर्शन पर ऐतिहासिक प्रमाणों के साथ व्यापक विचार सामने रखे। स्वाधीनता आन्दोलन के समय की जटिलताओं तथा तत्कालीन सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों के आलोक में गांधी और टैगोर के विचारों के सारतत्व को प्रस्तुत करते हुए प्रो. चौधरी ने अनेक देशी-विदेशी स्रोतों का हवाला दिया और अपने गम्भीर विश्लेषणात्मक अध्ययन से ऐतिहासिक तत्वों को उद्‌घृत किया।

शान्तिनिकेतन से आए रवीन्द्र-साहित्य और रवीन्द्र-संगीत के मर्मज्ञ सौरव गांगुली ने अपने संबोधन में रवीन्द्रनाथ टैगोर की व्यापक और अग्रगामी सोच तथा इस चिन्तन की बारीकियों पर प्रकाश डाला। ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता

वरिष्ठ साहित्यकार रघुवीर चौधरी ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में पूरे विश्व के साहित्य को सामने लाने वाले इस कार्यक्रम को 'एक शानदार और मजबूत कोशिश' का नाम दिया। उन्होंने महात्मा गांधी और टैगोर के साहित्य के कुछ रोचक और प्रामाणिक उदाहरण भी प्रस्तुत किए। सत्र का संचालन कवि–आलोचक जितेन्द्र श्रीवास्तव ने किया। सन्तोष चौबे ने कार्यक्रम में आए अतिथियों को 'विश्वरंग' के स्मृति–चिह्न भेंट किए। धन्यवाद ज्ञापन के साथ ही लीलाधर मंडलोई ने कविता, कहानी और आलोचना विधाओं में राष्ट्रीय स्तर पर प्रदान किए जाने वाले प्रतिष्ठित वनमाली सम्मानों की घोषणा भी की।

दूसरे सत्र के प्रारम्भ से पहले पुस्तक यात्रा से जुड़ी एक फिल्म दिखायी गई। सन्तोष चौबे ने बताया कि समाज को पुस्तकों से जोड़ने की अपनी कोशिश में हमने लगभग 55 यात्राएँ सम्पन्न की हैं। इन यात्राओं में स्कूली बच्चों से लेकर वृद्धों और महिलाओं तक सबने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया है। इससे हमें बहुत कीमती अनुभव प्राप्त हुए हैं। दूरदराज़ के इलाकों में लोग न सिर्फ पुस्तकें पढ़ते हैं, बल्कि खूब पढ़ते हैं। यह बहुत सकारात्मक बात है और हम सबका यह दायित्व है कि बेहतरीन पुस्तकों को आमजन तक पहुँचाया जाए।

'आरम्भ' का दूसरा सत्र विश्व–कविता के अनुवाद पर केन्द्रित था। विशिष्ट अतिथियों में रघुवीर चौधरी, सुरेश सलिल, नरेश सक्सेना थे। इस मौके पर अनुवाद की बेहद महत्वपूर्ण कृति 'कविता का विश्व रंग' का लोकार्पण किया गया। इस कृति में पूरी धरती के सभी महाद्वीपों के प्रतिनिधि कवियों की कविताओं के मर्मस्पर्शी अनुवाद हैं। इसका सम्पादन वरिष्ठ लेखक और अनुवादक यादवेन्द्र और राकी गर्ग ने किया है। इस अनुवाद कृति में रबीन्द्रनाथ टैगोर (अनुवाद –कुमार मकुल और सुलोचना), नाइजीरिया के कवि वोल सोयिंका (अनुवाद– विजय कुमार), अरब कवि महमूद दरवेश (अनुवाद –अशोक कुमार पाण्डेय और यादवेन्द्र), चीन के कवि बेई दाओ (अनुवाद –गीत चतुर्वेदी), ईरान की कवयित्री सिमीं बेहबहानी (अनुवाद –यादवेन्द्र), तुर्की कवि नाजिम हिकमत (अनुवाद – सुरेश सलिल), आस्ट्रेलियाई कवि लेस मरे (अनुवाद– अनामिका), कैरीबियाई कवि डेरेक वालकॉट (अनुवाद– प्रांजल धर), पोलैण्ड की कवयित्री विस्लावा शिम्बोर्स्का (अनुवाद –राजीव कुमार शुक्ल), स्वीडिश कवि टॉमस ट्रांसट्रोमर (अनुवाद – मोनिका कुमार), उत्तरी अमरीकी कवयित्री माया एंजेलो (अनुवाद – अनुराधा सिंह), उत्तरी अमरीकी कवि डब्ल्यू. एस. मेरविन (अनुवाद – यादवेन्द्र), दक्षिणी अमरीकी कवयित्री गैब्रिएला मिस्त्राल (अनुवाद– राकी गर्ग) और दक्षिण अमरीकी कवि पाब्लो नेरुदा (अनुवाद –मंगलेश डबराल) की महत्वपूर्ण और कालजयी कविताएँ शामिल हैं। दूसरे सत्र का मुख्य आकर्षण था कविता पाठ। भारत के जिन प्रतिष्ठित कवि–आलोचकों ने

रचना पाठ

जब दृश्य और ध्वनियों ने हमें इस कदर घेर लिया है कि जीवन को सम्बल प्रदान करने वाली महीन आवाज़ों को सुन पाना असम्भव-सा लगता है और जब मनुष्य के सामने भविष्य का कोई स्वप्न ठीक-ठीक आकार लेता नहीं दिखता, तब कविता एक सुखद बयार की तरह हमारे जीवन में प्रवेश करती है। एक दिशा-सूचक की तरह हमें याद दिलाती है कि सभ्यता का सही रास्ता क्या है और क्या होना चाहिए।

इन विश्वस्तरीय कवियों की कविताओं का अनुवाद किया है, उन कवि-आलोचकों ने इन अनूदित कविताओं का पाठ किया। प्रतिष्ठित साहित्यकार रघुवीर चौधरी ने विश्व-कविता के इन अनेक रंगों को एक पुस्तिका के रूप में अनूदित और संकलित करने के लिए सभी अनुवादक कवि-आलोचकों और सम्पादकद्वय (यादवेन्द्र और राकी गर्ग) को बधाइयाँ दीं। वरिष्ठ कवि नरेश सक्सेना ने कहा कि अनुवाद करने में आमतौर पर मूल भाषा में व्याप्त संगीत गायब-सा हो जाया करता है लेकिन आज यहाँ यह संगीत सुनने को मिला। उन्होंने शैलेन्द्र, अज्ञेय, जयशंकर प्रसाद और रबीन्द्रनाथ टैगोर की कविताओं में व्याप्त संगीत पर प्रकाश डाला।

कवि बलराम गुमास्ता और लीलाधर मंडलोई ने काव्य-पाठ करने वाले इन सभी कवि-आलोचकों को गुलदस्ते और स्मृति चिह्न भेंट किए। धन्यवाद ज्ञापन संतोष चौबे ने किया। अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा कि, आज जब जीवन की गति इतनी तेज़ हो गयी है कि चीज़ों को जानना-पहचानना मुश्किल होता जा रहा है, जब दृश्य और ध्वनियों ने हमें इस कदर घेर लिया है कि जीवन को सम्बल प्रदान करने वाली महीन आवाज़ों को सुन पाना असम्भव-सा लगता है और जब मनुष्य के सामने भविष्य का कोई स्वप्न ठीक-ठीक आकार लेता नहीं दिखता, तब कविता एक सुखद बयार की तरह हमारे जीवन में प्रवेश करती है, किसी वृक्ष की घनी छाँव की तरह आश्रय स्थल बन जाना चाहती है, एक दिशा-सूचक की तरह हमें याद दिलाती है कि सभ्यता का सही रास्ता क्या है और क्या होना चाहिए। टैगोर, और कमोबेश उनके साथ के सारे कवि, हमें याद दिलाते हैं कि साहित्य का रास्ता प्रेम से होकर जाता है।

संतोष चौबे ने भोपाल में आयोजित किए जाने वाले टैगोर अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव विश्वरंग (07 से 10 नवम्बर, 2019) में सबको आमन्त्रित किया। सन्तोष चौबे ने इसके लिए समर्थन और प्रेरणा प्रदान करने हेतु सभी भाषाओं के साहित्य-जगत के प्रत्येक व्यक्ति का आभार प्रकट किया। इस दूसरे सत्र का संचालन कवि-आलोचक प्रांजल धर ने किया।

'आरम्भ' में पाँच विश्वविद्यालयों के कुलपतियों, विभिन्न विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों, वरिष्ठ अधिकारियों और प्रशासकों के अतिरिक्त हिन्दी और अन्य भाषाओं के साहित्य की जानी-मानी हस्तियाँ उपस्थित थीं इनमें भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक मधुसूदन आनन्द, 'बनास जन' के सम्पादक पल्लव, 'आजकल' के वरिष्ठ सम्पादक राकेशरेणु, 'प्रवासी साहित्य' के सम्पादक राकेश पाण्डेय, वरिष्ठ कवि उपेन्द्र कुमार, कथाकार मुकेश वर्मा, प्रेम जनमेजय, भगवानदास मोरवाल, अच्युतानन्द मिश्र, सुमन केशरी, भण्डारा से आयीं मीनाक्षी जोशी, भोपाल से आए टैगोर विश्व कला एवम् संस्कृति केन्द्र के निदेशक तथा कला समीक्षक विनय उपाध्याय, सामयिक प्रकाशन के महेश भारद्वाज, विजया बुक्स के राजीव शर्मा और साहित्य-जगत के अनेक लेखक, अध्येता और पाठक शामिल थे।

- विक्रांत भट्ट

...क्या छोड़ूं, क्या समेटूँ! आदि और अन्त, सब कुछ इतना कल्पनातीत कि आज भी उसकी खुमारी दिलो-दिमाग पर छायी हुई है! मन इतना चंचल कि क्या बयान करूं, क्या छोड़ूं! ऐसा क्या घटित हुआ जो मन को अन्दर तक भिगो गया, दिमाग पर पूरी तरह आच्छादित हो गया! एक लंबे अरसे तक न भुलाया जा सका। दूर होने पर भी कुछ-कुछ स्पंदित करता रहा। आनन्द देता रहा।

सपना, जो सच हुआ...

वंदना चतुर्वेदी

चारों ओर हर्ष उल्लास, खुशी, सृजनात्मकता अप्रतिम सुन्दरता, बहुरंगी चहल-पहल, जनमानस का सैलाब, गत्यात्मकता, उत्साह, अपनापन, लहरों सी चंचलता, किनारों सा ठहराव, भव्यता...

वह था 'विश्वरंग'। वह था 'विश्वरंग' में समाया हुआ 'विश्व'। वह था साहित्य, कला, संगीत, चित्रकला की वीथियों से गुजरता हुआ एक अद्भुत समारोह जिसने न केवल भोपाल वासियों का मान-सम्मान बढ़ाया बल्कि पूरे देश तथा विश्व प्रतिभागिता का साक्षी बना। संतोष चौबे का विस्तृत विज़न, विस्तारित फ़लक, दूरगामी सोच, अथक प्रयास, अद्भुत टीम वर्क, सुसंगठित संयोजन का परिणाम था 'विश्वरंग'। कहीं कोई त्रुटि नहीं, कहीं कोई हड़बड़ी नहीं, कहीं कोई दिखावा नहीं, सब कुछ संतुलित, गतिमय, अनुशासित, प्रवाहमय।

निर्झर... कल-कल निनाद करता झरना कहूं या गुनगुन करता गीत, बिंदु व वृत को घेरे हुए परिधि, समानान्तर रेखाओं की समान दूरी, भावप्रवण वातावरण। आदि से अन्त तक लगातार रवीन्द्र संगीत की धुनें कानों में गूंजती रहीं। यह एहसास तब द्विगुणित हो गया जब पहुंच पाने मैं असमर्थ लोगों ने यह कहा कि काश, हम भी वहां होते! सोशल मीडिया से ही उसकी भव्यता का अंदाज़ हो गया।

कार्यक्रम के लिखित स्वरूप से घटित होने वाली वास्तविकता का अनुभव करना थोड़ा मुश्किल था। उस लिखित पुस्तिका के शब्द कार्यक्रम के समय का ही बोध करा रहे थे। उनका वास्तविक बोध तो उनमें उपस्थिति दर्ज़ करा के ही किया गया। यदि कार्यक्रम की रूपरेखा अनुसार स्मृति पटल पर 'विश्वरंग' को उकेरा जाये जो चित्र कुछ इस प्रकार बनेगा। सप्तदिवसीय 'विश्वरंग' महोत्सव का केन्द्र बिन्दु साहित्य कला, संस्कृति का समागम व वैचारिक स्तर पर पूरे विश्व को संगठित व समेकित करना था अत: उसका उचित विभाजन संयोजन के लिये आवश्यक था। सब सातों दिवसों की यह विशेष बात थी कि 'मंगलाचरण' से ही दिवस की यात्रा प्रारंभ की गयी थी। जैसा कि हिन्दु धर्म व संस्कृति में मंगलाचरण द्वारा मंगल कामना लिए ही यात्रा प्रारंभ करने की प्रथा रही है। यहाँ भी प्रत्येक दिन की यात्रा में एक शुभ संदेश था।

शुभव्रत सेन के रवीन्द्र संगीत से पूरा रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय गुंजायमान हो गया। आर्टिस्ट मीट में चित्रकला प्रदर्शनी, प्रेजेंटेशन चित्रकार-चिंतक अशोक भौमिक द्वारा किया गया। रवीन्द्र भवन में गुदुम बाजा, कबीर गायन, चित्र प्रदर्शनी, टैगोर की पेंटिंग का लोकार्पण, टैगोर की कविताओं पर आधारित संगीत-नृत्य रूपक, सुन्दर व अभिभूत करने वाली प्रस्तुतियाँ थीं। शुभारंभ सत्र के प्रमुख अतिथि म.प्र. के राज्यपाल माननीय लालजी टंडन थे। उषा गांगुलीजी, विश्वविद्यालय के चांसलर संतोष चौबे, लीलाधर मंडलोई, मुकेश वर्मा, सिद्धार्थ चतुर्वेदी, डॉ. अशोक कुमार ग्वाल अन्य सम्मानित व्यक्ति भी उपस्थित थे।

द्वितीय दिवस का मंगलाचरण आमीर खान के सरोद वादन की प्रस्तुति से संपन्न हुआ तथा कला प्रदर्शनी, सेमिनार ऑफ आर्ट्स इन इंडिया, भारतीय चित्रकला के लिये समर्पित था। देश-विदेश से आये चित्रकारों, इतिहासकारों ने रवीन्द्रनाथ टैगोर की चित्रकला तथा भारत के महान चित्रकला इतिहास पर सार्थक चर्चा की। द्वितीय दिवस के कार्यक्रम की समाप्ति रवीन्द्र संगीत, पीलू भट्टाचार्य और साथी द्वारा रवीन्द्र संगीत तथा हिन्दुस्तानी फिल्म संगीत पर आधारित गीत एवं नृत्य प्रदर्शन से हुई। यह कार्यक्रम आज भी दिलो दिमाग पर छाया है।

6 नवंबर का मंगलाचरण वायोलीन वादक अमित मलिक के वायोलीन वादन से संपन्न हुआ। हिंदी कवियों का कविता पाठ तथा 'रंगमंच और नेपथ्य' क्रमश: संपन्न होने वाले अगले वैचारिक सत्र थे। नया थियेटर का रंग संगीत नगीन तनवीर ने पेश किया। दिवस का अन्त 'चाण्डालिका' टैगोर की बंगला नाट्य कृति का हिंदी नाट्य प्रयोग के मंचन से हुआ। क्या ही भव्य मंचन, अभिनय व निर्देशन था!

अगला दिन संपूर्ण रूप से, संपूर्ण रूप से कहें तो अपनी पूर्ण समग्रता के साथ 'विश्वरंग' में रंगा हुआ था। आर्मी बैंड द्वारा वृन्द संगीत, शहनाई वादन, सुन्दरी वादन से समारोह परवान चढ़ा। पुस्तक प्रदर्शनी, जलियांबाग प्रदर्शनी चित्रकला प्रदर्शनी, मुखौटा प्रदर्शनी से गुज़रता हुआ 'विश्वरंग' के साहित्य उत्सव की ओर अग्रसित हुआ। शंखनाद, स्वस्तिगान ध्रुपद गायक पद्मश्री गुंदेचा बंधु द्वारा, हिन्दी कहानी के दस्तावेज़ी संग्रह 'कथादेश' का लोकार्पण आदि विशेष आकर्षण का केन्द्र रहे। विदेशी प्रवासी कला साहित्य के लिये समर्पित कथाकारों, साहित्यकारों-कवियों का विशेष आकर्षण उत्सव की शोभा बढ़ाता रहा। वहीं राष्ट्रीय स्तर के ख्याति प्राप्त व लब्ध प्रतिष्ठित कहानीकारों व कथाकारों ने शिरकत कर विश्वरंग उत्सव का रंग द्विगुणित किया। दिवस का अवसान आदिवासी नृत्य करमा से हुआ।

आठ और नौ नवंबर समानान्तर सत्रों में विभाजित विमर्श, व्याख्यान, लेखक से मिलिए, पुस्तक चर्चा, बाल साहित्य, प्रवासी कवियों के काव्य पाठ, उपन्यास लेखन व अंशों का वाचन, कहानी वाचन, हिन्दी की नई आवाज़ अर्थात् युवा लेखन, कथा लेखन के मूल्यांकन की चुनौतियों, पर्यावरण संतुलन नागरिकता और विस्थापन की चुनौतियाँ जैसे विविध क्षेत्रों का संतुलित व संयोजित संचालन। समानान्तर सभी सत्रों में दर्शक अपनी अभिरूचि व समयानुसार आते जाते रहे तथा विभिन्न विषयों के ज्ञान भंडार से ज्ञान संचित करते रहे। दिवस का अवसान सरगर्मी से भरी शाम के साथ हुआ जहाँ पहले आशुतोष राणा से एक मुलाकात थी वहीं रात्रि अन्तर्राष्ट्रीय मुशायरे के लिये समर्पित थी।

नौ नवंबर प्रात: 10 बजे से रात्रि 10 बजे तक का समय साहित्य, कला कविता पाठ, लोक कवियाँ का रचना पाठ, बाल साहित्य मीडिया का समकालीन चरित्र, युवा कविता पाठ, व्यंग रचना पाठ तथा थर्ड जेंडर के कवियों का रचना पाठ, नृत्य, भाषण, गांधी-टैगोर विरासत और लोकतरंग के लिए समर्पित था। दिन का प्रारंभ संतूर बांसुरी जुगल बंदी से हुआ जिसकी स्वर लहरियों से मंगलाचरण हुआ। संध्या वंदन इरशाद कामिल के इंक बैंड से हुआ वहीं समापन उर्दू शायरी की महफिल से हुआ।

अनूठा ही रहा विश्वरंग महोत्सव का समापन। प्रात: शहनाई वादन तथा हार्मनी ग्रुप द्वारा हिंदी कविताओं के वृन्द गान से हुई वहीं क्रमश: दोपहर वनमाली कथा सम्मान, वनमाली जी के पोर्ट्रेट का लोकार्पण, स्मारिका का लोकार्पण, गोल्डन ट्रेज़री का लोकार्पण हुआ। कथाकारों का सम्मान समारोह इस कार्यक्रम का विशिष्ट अंग था। आगे के सत्रों में हिन्दी पाठ्यक्रम में एकरूपता की चुनौतियां, दृश्य श्रव्य माध्यम एवं सोशल मीडिया, विश्व कविता सत्र, लोक का उत्तर आधुनिक पक्ष, विश्व में हिन्दी शिक्षण की स्थिति, टेक्नालॉजी और हिन्दी विश्व कविता सत्र, सिनेमा में साहित्य और कला तथा लेखक से मिलिये कार्यक्रम प्रमुख रूप से विश्व रंग को सराबोर कर रहे थे।

शाम के सत्र का ओजपूर्ण समापन छात्रों की उत्साहपूर्ण ओजपूर्ण हर्षध्वनि और उल्लासपूर्ण वातावरण का में हुआ। रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के छात्रों का उत्साह देखते ही बनता था। परिसर में रंग बिरंगी पोशाकों से सजे उज्जैन से आए तृप्ति नागर के समूह के राजस्थानी कलाकारों, मध्यप्रदेश के लोक गायक व लोक कलाकारों की प्रस्तुतियाँ सभी का मन मोह रही थीं। रात्रि को मिंटो हाल परिसर में ही युवा छात्रों तथा अतिथियों के मनोरंजन हेतु रघु दीक्षित प्रोजेक्ट, बैंड का आयोजन किया गया। सपने सा लगता है 'विश्वरंग'। सपना, जो सच हुआ!

गीतांजलि : टैगोर के गीतों पर आधारित दृश्य-श्रव्य प्रस्तुति में नौनिहाल कलाकार

सुनहरा अध्याय

रेखा राजवंशी

नज़रिया

प्रवासी साहित्यकार होने के नाते यही कहूँगी कि इस महोत्सव ने वैश्विक स्थल पर न सिर्फ साहित्यकारों को जोड़ा बल्कि उन्हें भारत के दिग्गज रचनाकारों से जुड़ने का अवसर भी दिया। विश्व रंग महोत्सव ने भारतीय कला और साहित्य के इतिहास में सुनहरे अक्षरों में एक ऐसा पृष्ठ जोड़ दिया है, जिसे भविष्य की अनेक पीढ़ियां याद रखेंगी। इस महोत्सव ने प्रवासी रचनाकारों को एक नई ऊर्जा व स्फूर्ति से भर दिया, इस बात में संदेह नहीं कि उनके लेखन में इस उत्सव के कारण नए आयाम जुड़ेंगे और इस साहित्य मंथन से कुछ ऐसा महत्वपूर्ण संदेश निकलेगा जो सबको अमरत्व प्रदान करेगा।

'विश्वरंग' यह ऐसा उत्सव था, जिसने मुझे विश्व भर के लेखकों, कवियों, कलाकारों से जुड़ने का अवसर तो प्रदान किया ही बल्कि, भारतीय संगीत, चित्र कला और शिल्प को देखने व अनुभव मौका भी दिया। प्रवासी कवियों के आने जाने, उनको एयरपोर्ट से होटल तक लाने, छोड़ने की व्यवस्था से लेकर खान-पान और मनोरंजन तक सबका पूरा ध्यान रखा गया था। पूरे कार्यक्रम की विशेषता थी कि समस्त कार्यकर्त्ता विनम्र और शालीन थे।

छह नवम्बर की रात जब हम भोपाल हवाई अड्डे से बाहर निकले तो खूबसूरत गुलाब से सबका स्वागत किया गया। भोपाल के ताल तो मशहूर हैं ही परन्तु वहां के लोगों का सभ्यता और संस्कृति के प्रति रुझान भी काबिले-तारीफ है। होटल की लॉबी में गेंदे के फूलों से सजे दीपदान की शोभा ने बरबस अपनी ओर खींच लिया। विश्व रंग का बैनर भी आकर्षक लगा।

सात नवम्बर को सभी प्रवासी साहित्यकारों को कुलपति संतोष चौबे ने रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्व विद्यालय आमंत्रित किया। यह विश्वविद्यालय वर्तमान में करीब पांच हजार विद्यार्थियों को अपने सपने साकार करने का अवसर दे रहा है। विश्वविद्यालय में नौ विभाग हैं जिनमे एग्रीकल्चर, कंप्यूटर व आईटी, कानूनी अध्ययन, कॉमर्स, इंजीनियरिंग, कला, एजुकेशन, मीडिया, फारमेडिकल, साइंस और नर्सिंग शामिल हैं। विद्यार्थियों के लिए आवास की व्यवस्था भी है। परिसर में अनेक आधुनिक सुविधाएं भी उपलब्ध हैं।

विश्व मानवता के लिए शुभकामना का उजास बिखरेती टैगोर की कविता का मंचन

अपराह्न कार्यक्रम स्थल मिंटो भवन पहुंची तो दूर से शहनाई वादन की मधुर ध्वनि ने मन को उल्लास से भर दिया, मिंटो भवन के सजे हुए दालान में पहुँच कर ऐसा लगा कि सरस्वती स्वयं वहां विराज गई हों। एक तरफ पुस्तकों का पिरामिड सबको लुभा रहा था तो दूसरी तरफआर्मी बैंड द्वारा समूह गान के अलावा जालियां वाला बाग प्रदर्शनी का भी उद्घाटन हो रहा था। स्वस्ति गान और दीप प्रज्वलन के बाद कथादेश का लोकार्पण हुआ। 18 खंडों में प्रकाशित कथा देश दो सौ वर्षों की कथा परंपरा एवं लगभग 600 रचनाकारों को समेटे हैं।

अगले दिन के कार्यक्रम में लोकप्रिय गायक गुंदेचा ब्रदर्स के ध्रुपद गायन ने मन मुग्ध कर लिया। मिंटो भवन के प्रांगण में मध्य प्रदेश के पारम्परिक नृत्य संगीत की छटा बिखरी हुई थी। कहीं मुखौटा प्रदर्शनी चल रही थी तो कहीं चित्र प्रदर्शनी के रंग सबको आकर्षित कर रहे थे। मिंटो भवन के भीतर कला व साहित्य प्रेमियों का जमघट था, जो बड़े मनोयोग से आयोजित कार्यक्रमों का रसास्वादन कर रहा था। शाम को आयोजित कवि सम्मेलन का भी सबने भरपूर आनंद उठाया। प्रवासी कहानी और उपन्यास लेखन के विविध पहलुओं पर चर्चा की गई थी। प्रवासी कवियों के कवि सम्मलेन का भी एक सत्र था, जिसमें श्रोताओं ने यूरोप, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया के कवियों की कविताओं का रसास्वादन किया।

नौ नवम्बर को भी अनेक विचार परक सत्र आयोजित किये गए थे, जिनमें थर्ड जेंडर की कविताओं ने मन मोह लिया। इसी दिन दोपहर पब्लिक रिलेशन्स सोसाइटी भोपाल द्वारा प्रवासी साहित्यकारों के सम्मान का आयोजन था। इस कार्यक्रम में मेरे साथ दो अन्य साहित्यकार भावना कुंवर तथा संजय अग्निहोत्री भी आमंत्रित थे। सभी के साथ मुझे भी पुष्पगुच्छ, शॉल, नारियल व ट्रॉफी देकर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर मध्य प्रदेश के सांसद व मंत्री बृजेंद्र सिंह राठौर द्वारा पांच पुस्तकों का विमोचन भी किया गया, जिनमें मेरे संपादन में प्रकाशित ऑस्ट्रेलिया के चालीस हिंदी कवियों के काव्य संकलन 'बूमरैंग-2, ऑस्ट्रेलिया से कविताएँ' भी सम्मिलित थी।

मिंटो हॉल के एक कोने में विविध प्रकाशकों और पत्रिकाओं के स्टाल भी थे, यहाँ हिंदी के प्रति निष्ठा और कर्मठता के प्रतीक दो व्यक्तियों से मैं पूर्व परिचित थी। पहला गर्भनाल के सम्पादक आत्माराम जी का स्टाल, जो गर्भनाल को टेक्नोलॉजी से जोड़कर अनेक नए प्रयोग कर रहे हैं और दूसरे जवाहर कर्नावट जी, जिन्होंने बड़ी लगन से विश्वभर का अनेक वर्षों का हिंदी साहित्य सहेजा है। दिन में चलने वाले कार्यक्रमों के बाद होटल पलाश में देर रात जागकर अन्य प्रवासी साहित्यकारों के साथ विचारों का आदान-प्रदान करना और कविता और गानों द्वारा मनोरंजन करना भी अविस्मरणीय रहेगा।

आनंद की स्वर लहरी : रघु दीक्षित संगीत बैंड

शहर में दुनिया कहाँ समाती है? लेकिन ये भी हुआ। मेरी खुशकिस्मती कि जागी आंखों के इस ख्वाब के गवाह हम भी हुए। देश-दुनिया के साहित्यकारों का जमावड़ा। साहित्य के उन पुरोधाओं के रुबरु होना जिन्हें शब्दों से जाना है, समझा है। कला-संस्कृति के मनीषी भी आए, लेकिन निजी तौर पर मेरे लिए विश्व रंग का जो तजुर्बा उम्र भर की धरोहर है वो अनुभव है दुनिया भर में हिंदी लिख, पढ़ रहे, बोल रहे और हिंदी की चिंता कर रहे हिंदी सेवियों से साक्षात्कार।

शहर के दरवाज़े दुनिया की दस्तक

शिफाली

जिस शहर में पटियों पर जमती हों अदब की मेहफिलें। जिस शहर की फिज़ाओं में शायरी घुली हो। झील किनारे इत्मीनान में बैठे उस शहर में चढ़ते जाड़े के दिनों पूरी दुनिया मेहमान हुई थी। सात दिन, सात रंग। कला और संस्कृति। धाराओं, वादों, विवादों में बँटा साहित्य एक साथ हुआ था। नई-पुरानी ही नहीं, सरहद के पार की भी हिंदी नई धज के साथ आई थी। विश्वरंग के आंगन में बिखरी रौनकें थी सारी।

यूं देखिए तो दिल्ली को दरिकनार कर भोपाल जैसे शहर में साहित्य-कला और संस्कृति के आयोजन के साथ दुनिया की मेज़बानी जोख़िम था। बड़ा जोख़िम। दुनिया तक पहुंचने की हसरत होती है अमूमन लेकिन दुनिया को अपने दरवाज़े ले आने का जोख़िम कौन उठाता है? रवीन्द्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय (भोपाल) के कुलपति संतोष चौबे ने ये जोख़िम उठा लिया। इस सपने को ज़मीन पर लाना बिल्कुल वैसा था कि ग्लोबल को लोकल कनेक्ट दिया जाए। शहर में दुनिया कहां समाती है? लेकिन ये भी हुआ। मेरी खुशकिस्मती कि जागी आंखों के इस ख्वाब के गवाह

हम भी हुए। देश–दुनिया के साहित्यकारों का जमावड़ा। साहित्य के उन पुरोधाओं से रुबरु होना जिन्हें शब्दों से जाना है, समझा है। कला–संस्कृति के मनीषी भी आए, लेकिन निजी तौर पर मेरे लिए विश्व रंग का जो तजुर्बा उम्र भर की धरोहर है वो अनुभव है दुनिया भर में हिंदी लिख, पढ़ रहे, बोल रहे और हिंदी की चिंता कर रहे हिंदी सेवियों से साक्षात्कार। दक्षिण अफ्रीका, फिलीपींस, बर्मा, श्रीलंका, रुस... इन देशों से आए प्रतिनिधियों की जुबान पर उतरते हिंदी के अल्फाज़। विश्व रंग के जरिए ये आईना भी था कि देखिए तो ज़रा आपके अपने मुल्क में अंग्रेजी के आगे जो संकोच की ज़ुबान है, वो हिंदी देश के कितने हिस्सों में आत्मीय बनी हुई है। दूसरा तजुर्बा नई वाली हिंदी का। विश्व रंग के आयोजन की बड़ी सफलता ये भी कि उदार मन से इस आंगन में हर एक का स्वागत था। उस नई वाली हिंदी का भी, जिसने कई सारे अवरोध तोड़े हैं। जिसकी शर्त है कि हिंदी पुल बनें। पहुंचे नई पीढ़ी तक। भले नई पौध के अंदाज़ उनकी ज़ुबान में पहुंचे। लिहाजा देश के वरिष्ठ रचनाकारों–साहित्यकर्मियों के साथ वो युवा लेखक भी विश्वरंग के फ़लक का सितारा बनें। साहित्य से इतर सिनेमा, मीडिया, सोशल मीडिया, पर हिंदी के बदलते तेवर और इनके बीच नई कोंपल की तरह थर्ड जेंडर कवि....जिन्हें भाषा से नहीं, भाव से सुना गया।

... सात दिन भोपाल कविता में आंखें खोलता....चढ़ती दोपहर में नज़्मों–गज़लों के संग दौड़ लगाता.....ढलती सांझ सरहद पार से आए हमज़ुबानों से बतियाता....और कहानियों की थपकी लिए सो जाता। वो सात दिन ये हौसला देकर गए हैं कि दुनिया को समेटे साहित्य–कला के जलसे अब दिल्ली की सरहद पार कर चुके हैं। कहिए आमीन....विश्व रंग की दूसरी किस्त के लिए.....

धरती उतरा
एक सतरंगी सपना

समय के सफ़े पर जब तारीख़ें अपने गहरे दस्तख़त करती है तो यक़ीनन यादों के मायनें कुछ अलहदा से हो जाते है। विश्वरंग की स्मृतियों के रंग भी कुछ ऐसे ही जुदा थे। गाढ़े। उजले। प्रेम रंगों में भीगे। गुज़रे बरस (2019) 4 से 10 नवंबर के दरमियां इस उत्सव के आंगन में शब्दों का सैलाब था। रंगों और आवाज़ों का हुजूम था। गीत–संगीत की स्वर लहरियाँ थी तो साहित्य, संस्कृति, शिक्षा, भाषा, पर्यावरण, विज्ञान, अध्यात्म, मीडिया, समाज और उद्यमिता जैसे अहम विषयों और मुद्दों पर खुले संवाद और हस्तक्षेप के ज़रिये देश–देशांतर के गुणी और नामचीन विद्वानों ने दस्तकें दीं। साठ से ज़्यादा सत्र, दो दर्ज़न से ज़्यादा सांस्कृतिक सभाएँ, पाँच सौ से ज़्यादा वक्ता और हज़ारों की तादाद में नौनिहाल, युवा, प्रौढ़ और बुजुर्गों की रोज़ाना आमद। सोचने, याद करने, कहने और बताने को कितना कुछ! म.प्र. के तत्कालीन गवर्नर लालजी टंडन ने विश्वरंग की सरहद में क़दम रखते हुए मुग्ध भाव से कहा– ''यह एशिया का सबसे बड़ा उत्सव है''। निश्चय ही रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्व विद्यालय देश का पहला और अकेला ऐसा शिक्षण, संस्थान है जिसकी मेज़बानी में 'विश्वरंग' मुमकिन हुआ।

विनय उपाध्याय के साथ विश्वरंग की गतिविधियों का यह लंबा रिपोर्ताज समीर चौधरी, विक्रांत भट्ट, संजय सिंह राठौर, विकास तिवारी, प्रवीण पाण्डेय, राजेश गाबा, हितेश शर्मा, शिफाली और रुचि दीक्षित ने मिलकर तैयार किया।

आरंभ : 4 नवंबर (पहला दिन)

एशिया का पहला विराट सांस्कृतिक महोत्सव : राज्यपाल

विश्व में अनेक विद्वान हुए हैं लेकिन इतनी सारी विधाओं का ज्ञान दुर्लभ है। एक व्यक्ति में इतनी प्रतिभाएं हों और समाज को देने के लिए इतने विषयों का ज्ञान भी हो, यह दुर्लभ है। कौन सी संस्कृति की विधा है जो गुरूदेव ने समाज को नहीं दी। यदि भारत कभी विश्व गुरू रहा है तो आज के युग के भारत के गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर है। विश्वरंग महोत्सव भारत ही नहीं, पूरे एशिया का पहला बड़ा सांस्कृतिक आयोजन है। गुरूदेव को इससे बड़ी श्रद्धांजलि नहीं हो सकती।

मध्यप्रदेश के माननीय राज्यपाल लालजी टंडन ने अभिभूत होकर ये उद्‌गार 'विश्वरंग' के मंच पर व्यक्त किए। रवीन्द्र भवन, भोपाल में आयोजित गरिमामय समारोह में सात दिवसीय 'विश्वरंग' के शुभारंभ मुहूर्त के साक्षी बनने प्रसन्न मन से उपस्थित हुए। अपने उद्‌बोधन में उन्होंने कहा कि ऐसे आयोजन अब तक भारत ही नहीं पूरे एशिया में नहीं हुए जो मध्यप्रदेश के भोपाल में हो रहा है। उन्होंने रबीन्द्रनाथ विश्वविद्यालय परिवार को शुभकामनाएं दी। इस मौके पर विश्वरंग के निदेशक और रबीन्द्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे ने राज्यपाल का आत्मीय स्वागत करते हुए उनकी शुभकामना और अपेक्षा के अनुरुप 'विश्वरंग' के संयोजन का विश्वास जताया। उन्होंने कहा हिन्दी और भारतीय भाषाओं के साथ बोलियों के संरक्षण को लेकर भी महत्वपूर्ण पहल संभव हो रही है। इस मौके पर कोलकाता से आई प्रसिद्ध रंगकर्मी और कला विदूषी उषा गांगुली, टैगोर विवि के कुलपति डॉ. ए.के. ग्वाल, कथाकार मुकेश वर्मा तथा आईसेक्ट के निदेशक और विश्वरंग के सह निदेशक सिद्धार्थ चतुर्वेदी ने भी संबोधित किया। राज्यपाल ने विश्वरंग के निमित्त आयोजित चित्रकला प्रतियोगिता के विजेताओं को प्रमाण पत्र तथा सम्मान निधि भेंट कर सम्मानित किया। गरिमामय समारोह का संचालन टैगोर कला केन्द्र के निदेशक विनय उपाध्याय ने किया।

गीतांजलिः गीत-संगीत और नृत्य में टैगोर की विरासत

'विश्वरंग' की शुभारंभ संध्या रबीन्द्रनाथ टैगोर की कविताओं पर आधारित नृत्य-संगीत रूपक 'गीतांजलि' की दृश्य छवियों का साक्षी बनना कलाप्रेमियों के लिए अनूठा अनुभव रहा। प्रतिभाशाली नृत्यांगनाओं श्वेता देवेन्द्र और क्षमा मालवीय की परिकल्पना और निर्देशन में लगभग सौ नौनिहाल और युवा कलाकारों ने मिलकर टैगोर की सांस्कृतिक विरासत को मन छूती सुंदर अभिव्यक्ति प्रदान की।

शुरूआत मंगलाचरण से हुई, जिसमें सब के सुखी और आनंदमय होने की कामना थी। दूसरी प्रस्तुति थी- 'आनंद धारा बहे रे जग में'। टैगोर की ही जीवन, प्रकृति और प्रेम से सराबोर अन्य कविताओं के बाद महान जीवन संदेश देती रचना- 'एकला चलो रे' की लय-ताल पर दर्शकों ने भी अपनी थिरकन की मोहर लगायी। भरत नाट्यम और कथक शैलियों के साथ ही 'गीतांजलि' में भारतीय लोक नृत्य और आधुनिक नृत्य शैली का समावेश उसे सुंदर छवि प्रदान करता रहा। प्रकाश परिकल्पना अनूप जोशी बंटी की रही। 'गीतांजलि' की विषय-वस्तु को

गुदुम बाजा और कबीर गायन

'विश्वरंग' की छलकती उमंगों में सुर, ताल और लयकारी का अनोखा सम्मोहन जगाने आदिवासी और लोक कलाकारों ने दस्तक दी। पूर्वरंग में रवीन्द्र भवन के प्रांगण में मध्यप्रदेश के गौंड आदिवासी कलाकारों ने अपने समुदाय में प्रचलित वाद्य 'गुदुम बाजा' के सामूहिक नाद से महोत्सव का उद्घोष किया। दरअसल गुदुम बाजा एक ताल वाद्य है जो बैल के चमड़े को एक खोल पर चढ़ाकर छड़ी से आघात किया जाता है। इसके साथ ही मालवा की लोक संस्कृति से जुड़ी वाचिक परंपरा की अलख जगाने वाले लोक कलाकार दयाराम सारोलिया ने कबीर के निर्गुण भक्ति पदों का गायन किया। समता, ममता और बंधुता के पैगाम देती कबीर की कविता का शाश्वत स्वर आध्यात्मिक अनुभूति जगाता रहा।

रोचकता के साथ सूत्रबद्ध प्रस्तुत किया कला समीक्षक विनय उपाध्याय ने। दरअसल 'गीतांजलि' की प्रस्तुति टैगोर के कृती-व्यक्तित्व को विनम्र प्रणाम है। गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर एक महासागर है जिसमें स्वर शब्दों की अनन्त लहरें हिलोरे लेती रहती हैं। वह कवि, गीतकार, कथाकार, निबन्धकार, नाटककार, संगीतकार, चित्रकार सभी कुछ एक साथ हैं। टैगोर के शब्दों ने भारत की भावधारा रची। हमारी संस्कृति का श्रेष्ठतम पुनर्मूल्यांकन हुआ था। उनकी कविता प्रकृति की सरसराहट में विराट की आहट सुनती है, प्रकृति के विभिन्न रंगों से सजती-सँवरती जीवन-पर्व के दरवाज़े पर दस्तक देती है और कभी गहन संवेदनाओं से भरकर मानवता को पुकार उठती है। उनके शब्द मोती हैं, राग-रागिनियों ने उन्हें गूँथकर जो गीतों की माला पिरोई तो अपनी पहचान छोड़ उनके ही रंगों में रंग गयी। 'रवीन्द्र संगीत' का उजास मिल गया। इस आलोक में वो झिलमिलाती रही। अपनी इस नयी पहचान को गुनगुनाती रही। टैगोर विश्व-संगीत की मंगल-ध्वनि हैं, जो प्रेम, करुणा और मानवता की ज़मीन से उठती हैं और पूरी दुनिया में फैल जाती है।

टैगोर की कला पर विमर्श

सुबह हरी-भरी पहाड़ियों से घिरे टैगोर विश्वविद्यालय की खुली वादियों में देशभर से आए कलाकारों ने अपनी आमद दर्ज़ की। वरिष्ठ चित्रकार प्रभाकर कोलते सहित अशोक भौमिक, विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे, विश्व रंग के सह निदेशक लीलाधर मंडलोई और अनेक चित्रकार-संस्कृतिकर्मियों ने टैगोर की प्रतिमा पर पुष्पांजलि दी। कोलकाता से आये कलाकार शुभव्रत सेन और मानस सरकार ने दो तारा पर रवीन्द्र संगीत की धुनें बजाकर माहौल को सुरीला बना दिया। चित्रों की प्रदर्शनी का लोकार्पण विश्वविद्यालय के शारदा सभागार में हुआ। विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं ने अपने एंथम गीत की प्रस्तुति भी दी। इसके बाद टैगोर के बनाये हुए चित्रों पर जाने-माने चित्रकार अशोक भौमिक ने अतिथियों और प्रतिभागियों से चर्चा की। भौमिक ने बताया कि टैगोर दृश्य नहीं, बल्कि स्मृति चित्रण करते थे। टैगोर का मानना था कि रेखाओं और रंगों की कोई भाषा नहीं होती, वो शब्दों को काटकर चित्र का निर्माण किया करते थे। भौमिक ने कहा कि गौरतलब है कि टैगोर के चित्रों को पहली दफा किसी कार्यक्रम में प्रदर्शित किया गया है। प्रभाकर कोल्टे ने कहा कि टैगोर दिल से चित्रकारी करते थे, जो उनके चित्रों से साफ झलकता है।

विश्व रंग के पहले दिन हुई इस आर्टिस्ट मीट में शामिल होने आए चित्रकार लोकेश जैन, राजन श्रीपद फुलारी और सुप्रिया अंबर को स्मृति चिन्ह भेंट कर सम्मानित किया गया। चित्रकारों ने कहा कि विश्व रंग देशभर के कलाकारों के लिए बड़ा मंच है। हमारा सौभाग्य है कि हम विश्वरंग का हिस्सा बन सके। इस दौरान सभागार में मौजूद छात्र-छात्राओं के प्रश्न अतिथियों ने अपने मन्तव्य प्रकट कर उनका समाधान किया। जाने-माने चित्रकार प्रभु जोशी ने स्वयं द्वारा चित्रित वनमालीजी का पोर्ट्रेट और युवा चित्रकार निकिता ने रवीन्द्र नाथ टैगोर के

पोर्ट्रेट संतोष चौबे को भेंट किया। विद्यार्थियों ने विश्वविद्यालय परिसर में रैली के माध्यम से विश्व रंग का परिचय दिया। रैली में कार्यक्रम के अतिथि एवं आमंत्रित कलाकार भी शामिल हुए।

टैगोर विश्वविद्यालय में विश्वरंग की थीम पर सेल्फी प्वाइंट का निर्माण भी किया गया जो युवाओं के लिए कार्यक्रम के दौरान मुख्य आकर्षण का केंद्र बना रहा। इस सेल्फी प्वाइंट को इंद्रधनुषी रंगों से सजाया गया। छात्र-छात्राओं के साथ देशभर से आए प्रतिनिधियों और अतिथियों ने भी सेल्फी प्वाइंट पर तसवीरें लीं।

विश्वरंग के सह निदेशक लीलाधर मंडलोई ने कला सत्र को संबोधित करते हुए कहा कि विश्वरंग टैगोर के स्वप्न को समायोजित करने वाला आयोजन। जिसमें देश के सभी क्षेत्रों से कलाकारों को आमंत्रित किया गया है। मंडलोई ने भारत भवन में राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी का ज़िक्र भी किया, जिसमें भारत के विभिन्न क्षेत्रों के कलाकारों द्वारा बनाए गए चित्रों को प्रदर्शित किया गया। इस प्रदर्शनी के लिए एक हजार से अधिक प्रविष्टियां आई थीं जिनमें से कुल 158 प्रविष्टियों को चयनित किया गया। वहीं सबसे उत्कृष्ट पांच प्रविष्टियों को विश्वविद्यालय द्वारा 50 हजार रुपए की प्रोत्साहन राशि भी प्रदान की गयी। कार्यक्रम का संचालन टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र के निदेशक विनय उपाध्याय ने और आईसेक्ट विश्वविद्यालय के निदेशक सिद्धार्थ चौबे ने आभार व्यक्त किया।

दूसरा दिन : 5 नवंबर

वृन्दगान और रिफ्लेक्शन

कला साहित्य और संस्कृति के महाकुम्भ विश्वरंग की दूसरी शाम सुप्रसिद्ध म्यूज़िक कंपोजर, कोरियोग्राफर और डायरेक्टर पीलू भट्टाचार्य शामिल होने भोपाल पहुंचे। हिन्दी फिल्मों में रवीन्द्र संगीत पर आधारित लगभग दो घंटे की दृश्य श्रव्य-रिफ्लेक्शन की प्रस्तुति दी। इस दौरान विशेष बातचीत में पीलू भट्टाचार्य ने कहा कि हिंदी फिल्म और हिंदी सीरियल्स के लिए रवीन्द्र संगीत इंस्पिरेशन है। हम टैगोर और उनकी रचनाओं से प्रेरित नृत्य नाटिका के अनेक प्रदर्शन देशभर में करेंगे, इसकी शुरुआत भोपाल में विश्वरंग से हुई है। भट्टचार्य ने कहा कि रवीन्द्र संगीत केवल गीत नहीं, अपने आप में एक संस्कृति है। पीलू भट्टचार्य बंग्ला की 22 फिल्मों के लिए संगीत भी दे चुके हैं।

पूर्वरंग में रीना सिन्हा और उनके समूह रेनी वृन्द ने रवीन्द्र संगीत की सुरमई प्रस्तुति दी। तबला, इलेक्ट्रिक ड्रम, गिटार, कीबोर्ड, सिंथेसाइजर के साथ बीस कलाकरों ने सुरों की माला में पिरोए हुए एक के बाद एक टैगोर के 12 गीतों को अल्हदा सी धुनों में गाया। इस श्रृंखला में पगली हवा बदराया दिन, एकला चलो रे जैसे सुप्रसिद्ध गीतों को सुनना बहुत प्रीतिकर था। रेनीवृन्द की संयोजक रंगकर्मी रीना सिन्हा ने कहा कि बचपन से ही रवीन्द्र संगीत मेरी रगों में बसा हुआ है, जिसे अपने गुरु पंडित ओमप्रकाश चौरसिया के मार्गदर्शन में विकसित किया। पंद्रह वर्षों से वृन्द संगीत की यात्रा जारी है। मुझे गर्व है कि इस विश्व स्तरीय कार्यक्रम का मैं और मेरी टीम हिस्सा बन सकें।

तीसरा दिन : 6 नवंबर

वायोलिन पर भक्ति संगीत

विश्व रंग के कविता पाठ की शुरुआत सुबह भारत भवन में मंगला चरण से हुई। इस सत्र में युवा वायोलिन वादक अमित मलिक ने भक्ति गीतों की सुंदर प्रस्तुति से सभागार में मौजूद श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। अमित ने राम का गुणगान करिए.., बाजे मुरलिया.., श्रीरामचंद्र कृपालु भजन..., ठुमक चलत रामचंद्र, वैष्णव जन को तेने कहिये जैसे भक्ति गीतों से वातावरण को संगीतमय बना दिया। अमित के साथ नईम अल्लाहवाले ने तबले पर संगत दी। संतोष चौबे ने स्मृति चिह्न भेंटकर अमित को सम्मानित किया।

अंतरंग में कविता की सुबह

कलाओं के घर भारत भवन में यह दिन कविता की सुबह के साथ शुरू हुआ। 'कविता पाठ' के पहले सत्र में देश भर से आये कवियों ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। अध्यक्षता हिंदी के ज्येष्ठ कवि ऋतुराज ने की। कवि-वृंद में संतोष चौबे, जितेंद्र श्रीवास्तव, मोहन सगोरिया, महेंद्र गगन और कुमार अनुपम शामिल थे। यह सत्र इस बात की भी गवाही बना कि बेहतर रचना और उसका बेहतर पाठ काव्य विनोद को एक रोचक धरातल पर प्रतिष्ठित करते है। जितेंद्र श्रीवास्तव ने प्रेम की कविता पढ़ी। महेंद्र गगन ने भी प्रेम से महकती कविताओं का पाठ करते हुए अंतरंग को गुलाबी उष्मा से भर दिया। युवा कवि मोहन सगोरिया की ग़ज़ल के तेवर कुछ अलहदा नजर आए- ''इश्क-विश्क तलवार जुबानें ये सब अपनी म्यान में रखना''। संवेदना और भाषा के नए अनुभवों को लेकर कविता में प्रवेश करते हुए संतोष चौबे ने शिरकत की। 'छोड़ो यार', 'थोड़ा अंदर हूँ, थोड़ा बाहर' और 'अम्मा का रेडियो' जैसी उनकी चर्चित कविताओं को श्रोताओं ने भरपूर दाद दी। सत्र की अध्यक्षता कर रहे ऋतुराज ने राजनीति पर कटाक्ष करती अपनी रचना 'तंदूर' और 'मुर्दाबाद' का पाठ किया। इससे पहले मुक्तिबोध की कविताओं पर आधारित लघु फिल्म 'आत्मसंभवा' का प्रदर्शन हुआ। फिल्म की परिकल्पना और निर्देशन कवि लीलाधर मंडलोई ने किया है।

कविता पाठ के दूसरे सत्र का आगाज़ कवि प्रांजल धर ने अपनी कविता 'वरना ना आना' के पाठ से किया। पंखुरी सिन्हा ने जीवन के मुख़्तलिक रंगों की रचना सुनाई। आरती ने 'एक अच्छी लड़की' रचना का पाठ किया। आर. चेतन क्रांति ने 'पॉवर' शीर्षक रचना में वर्तमान समय में शक्ति की भूमिका उजागर की। प्रेमशंकर शुक्ल ने पानी और प्रेम पर केन्द्रित कविताओं की सौगात सौंपते हुए जीवन, प्रकृति और संस्कृति की रचनात्मक आपसदारी का परिचय दिया। निरंजन श्रोत्रिय ने रचना 'गुरुत्व' से दर्शकों को अभिभूत किया। बलराम गुमास्ता ने अपने कविता संग्रह 'कवि कपूत' से 'गिद्ध कवि' का पाठ किया। अध्यक्षता कर रहे लीलाधर मंडलोई ने अपनी विचार प्रवण रचनाएं पेश कीं।

'शब्द, ध्वनि और दृश्य' का विमोचन : वरिष्ठ कवि, कथाकार संतोष चौबे द्वारा संपादित 'शब्द, ध्वनि और दृश्य' पुस्तक का लोकार्पण भी इस सत्र में हुआ। इस संग्रह में 11 रचनाकारों के साक्षात्कारों को पढ़ना एक दिलचस्प अनुभव है। वरिष्ठ आलोचक डॉ. धनंजय वर्मा, कवि राजेश जोशी, संपादक विभूति नारायण राय, कथाकार चित्रा मुद्गल, रवींद्र कालिया, ममता कालिया, संतोष चौबे, भगवान दास मोरवाल के साथ शशांक, महेन्द्र गगन, मुकेश वर्मा, बलराम गुमास्ता, उर्मिला शिरीष, रेखा कस्तवार, विनय उपाध्याय आदि के सवाल-जवाब अपनी विरासत और वक्ती दौर को नए वैचारिक उद्वेलन के साथ उजागर करते है।

चंडालिका : स्त्री की पुकार

विश्वरंग की तीसरे दिन की शाम समर्पित रही मूर्धन्य रंगकर्मी उषा गांगुली द्वारा निर्देशित नाटक 'चंडालिका' के नाम। टैगोर के बहुचर्चित नाटकों में शुमार 'चंडालिका' का नवीन रूपांतरण कोलकाता के रंगकर्मी समूह द्वारा प्रदर्शित किया गया। इस नाटक के मूल रूप को कुछ परिवर्तनों के साथ प्रस्तुत किया गया। छुआछूत आडंबर, प्रेम की सहजता, मानवीय मन की आकांक्षा और दुविधा टैगोर के कथात्मक ताने-बाने में किरदारों की आवाज़ बनकर उभरे हैं। उषा गांगुली जी ने संवादों के साथ ही कलाकारों की वेशभूषा, क्राफ्ट आदि के उत्कृष्ट समन्वय से दर्शकों के मन पर अमिट छाप छोड़ी। मध्य प्रदेश शासन के जनजातीय कार्यविभाग मंत्री ओमकार सिंह मरकाम भी दर्शकों के बीच बने रहे। विश्व विद्यालय के कुलसचिव विजय सिंह ने स्मृति चिह्न और गुलदस्ता भेंट कर अतिथियों का स्वागत किया।

चंडालिका को नए प्रयोगों के साथ दर्शकों के बीच पेश करते हुए निर्देशक उषा गांगुली ने बताया कि नाटक में मौजूदा हालातों के मद्दे नज़र कुछ परिवर्तन किए गए हैं, लिहाजा इस प्रस्तुति ने दर्शकों के लिए इसे और अधिक रोचक बना दिया है। 'चंडालिका' के प्रदर्शन का आधार जीवन का चक्र है जिसमें प्रकृति के साथ हो रहे दुर्व्यवहार को भी सम्मिलित किया गया है। इस नाटक में माँ और बेटी के संबंधों पर गंभीर विमर्श के सूत्र खुलते हैं। एक सामूहिक ऊर्जा के बीच नाटक दर्शकों को उस मुकाम पर ले जाता है जहाँ स्वप्न और यथार्थ के बीच कुछ टकराहटें है, संघर्ष है और जीवन को समग्रता में देखने-समझने के कुछ सूत्र भी खुलते है।

चोलामाटी और ससुराल गेंदा फूल

सायंकालीन सभा के पूर्वरंग में मशहूर रंगकर्मी हबीब तनवीर की बेटी गायिका नगीन तनवीर द्वारा दी गई रंग संगीत की प्रस्तुति ने एक अलग ही महक फिज़ाओं में बिखेरी। मटियारे संगीत की बावरी बयार पर सबका मन रीझ उठा। जीवन दर्शन पर आधारित 'दुश्मन' नाटक के गाने 'नाव भी है तैयार' से प्रस्तुति से उन्होंने महफ़िल का आगाज़ किया। नगीन ने 'राजा से हो गए मोला बैर', मशहूर गज़ल 'गए दिनों का सुराग लेकर' और 'चोलामाटी' के साथ-साथ 'ससुराल गेंदा फूल' जैसे लोकप्रिय तराने गुनगुनाते हुए मिट्टी के सौंधे अहसासों की सैर कराई। ये तमाम गीत हबीब तनवीर के नाटकों से वाबस्ता रहे है। तबले पर रवींद्र राव, हारमोनियम पर रविलाल सांगढ़े, ढोलक पर प्रशांत श्रीवास्तव, मरकस पर सोनिका यादव ने संगत करते हुए लय-ताल का सुंदर ताना-बाना तैयार किया।

संवाद : रंगमंच का नेपथ्य

इस शाम 'रंगमंच के नेपथ्य' पर संवाद हुआ। प्रतिभागी वक्ताओं में कोलकाता से आईं प्रख्यात रंगकर्मी उषा गांगुली, प्रकाश परिकल्पक और कला निर्देशक अनूप जोशी 'बंटी', वरिष्ठ रंगकर्मी के.जी. त्रिवेदी, विश्व रंग के सांस्कृतिक समन्वयक-कला समीक्षक विनय उपाध्याय तथा युवा लेखक-सिनेकर्मी सुदीप सोहनी शामिल थे। उषा जी ने कहा कि बैक स्टेज के लोगों को पहले मंच पर बुलाने की भी जहमत नहीं की जाती थी लेकिन अब थियेटर बदल रहा है और इनके बिना थियेटर की कल्पना भी सम्भव नहीं है। उन्होंने विश्वरंग में नाटक विशेषकर इस विधा के नेपथ्य पर संवाद सत्र के लिए आयोजकों को साधुवाद दिया। अनूप जोशी ने कहा कि नेपथ्य किसी भी नाटक की रीढ़ है। उन्होंने कुछ लोकप्रिय नाटकों के उदाहरण देते हुए उन पहलूओं की चर्चा की जिनके बगैर शायद वे नाटक सफल नहीं होते। केजी त्रिवेदी ने कहा कि मंच पर किरदार निभाने वाले कलाकार से बड़ा नेपथ्य कर्मी होता है। यह दुर्भाग्य ही है कि अक्सर ये अदृश्य कलाकार अनदेखी या उपेक्षा के शिकार होते रहे है।

विनय उपाध्याय ने कहा कि मंच पर जो कहा या प्रस्तुत किया जाता है उसके सूत्र नेपथ्य में ही अपनी ताक़त अर्जित करते हैं। रचनात्मकता की तमाम गुंजाइशें समेटे होता है नेपथ्य। श्रोताओं के बीच उपस्थित युवा रंगकर्मी सरफराज हसन ने अपनी टिप्पणी में कहा कि हर कलाकार को मंच पर अपने किरदार को जीवंत करने की कला के साथ-साथ नेपथ्य की भूमिक को भी जानना जरुरी है, इसी से उसकी कला में निखार आता है। सुदीप सोहनी ने नई पीढ़ी को नाट्य विधा को समग्रता में जानने-समझने का मशविरा दिया। इसी दौरान एक सवाल के जवाब में उषा गांगुली ने बताया कि मैंने कभी थियेटर की पढ़ाई नहीं की लेकिन मेरा ज़ोर हमेशा से ही नेपथ्य पर अधिक रहा है। मैंने कई बड़े संस्थानों में बेक स्टेज की शिक्षा भी दी। विडम्बना है कि नेपथ्य को हमेशा रंगमंच से छोटा दर्शाया जाता है। आने वाली पीढ़ी को नेपथ्य के बारे में शिक्षित करना आवश्यक है।

मध्य : 7 नवंबर

भाषा, साहित्य और संस्कृति का अनुराग

हिंदी का विश्व और 'कथादेश'

जीवन की नवीनता की तलाश का बेहतर रास्ता साहित्य और कला के पास ही है, विज्ञान के उपकरण उसका विकल्प नहीं बन सकते। इस सूत्र के साथ 'विश्वरंग' के चौथे दिन का उद्घोष संतोष चौबे ने किया। अग्रणी ध्रुपद गायक गुंदेचा बंधुओं के स्वस्ति गान से शुरु हुई सुबह की सभा बहुरंगी गतिविधियों के साथ अपने सिलसिले में आगे बढ़ती रही। वैचारिक सत्रों में हिंदी का विश्व अपनी उल्लेखनीय रचनात्मकता के नए क्षितिजों की तलाश करता रहा। इस मौके पर दो सौ वर्षों की हिंदी कहानी की स्वर्णिम यात्रा के विभिन्न पडावों को संजोता 630 कहानियों का संकलन 'कथादेश' का विमोचन हुआ। तीन हज़ार कहानियों के अध्ययन, परीक्षण के बाद अट्ठारह खण्डों के इस अनूठे संग्रह को मंचासीन विभूतियों ने लोकार्पित किया। इस अवसर पर 'कविता का विश्वरंग' दस्तावेज़ भी लोकार्पित हुआ। इसका संपादन यादवेन्द्र और राकी गर्ग ने किया है। टैगोर की चित्रकला के मर्म और उनकी कलाकृतियों पर एकाग्र रबींद्र कैटलॉग का प्रकाशन भी कलाप्रेमियों के लिए महत्वपूर्ण सौगात बना। वरिष्ठ कथाकार रमेश चंद शाह ने अपने उद्बोधन में कहा कि विश्वरंग में हिंदी का अनूठा विश्व खुल रहा है। मध्यप्रदेश के संस्कृति महकमे की मंत्री विजय लक्ष्मी साधौ विशेष तौर पर इस सत्र में मौजूद रही। साहित्य अकादमी से सम्मानित मृदुला गर्ग, शीनकाफ निज़ाम, चित्रा मुद्गल, आलोचक धनंजय वर्मा, फिल्म अभिनेता रजत कपूर, अमेरिका से आईं प्रवासी हिंदी लेखिका सुषम बेदी, रूस से आमंत्रित प्राध्यापक प्रतिनिधि लुडमिला खोखोलोवा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र की प्रमुख मौली कौशल, विश्वरंग के निदेशक संतोष चौबे, कथाकार मुकेश वर्मा, विश्वरंग के सह निदेशक लीलाधर मंडलोई, सिद्धार्थ चतुर्वेदी, टैगोर विश्वविद्यालय के कुलपति ए.के. ग्वाल, राष्ट्रीय वनमाली कथा सम्मान से सम्मानित प्रियवंद की उपस्थिति ने साहित्य उत्सव को गौरवान्वित किया। इस उत्सवधर्मी गरिमा से भरे सत्र का संचालन टैगोर विश्वकला एवं संस्कृति केंद्र के निदेशक विनय उपाध्याय ने किया।

कथाकार प्रियंवद हुए सम्मानित

वनमाली सृजन पीठ द्वारा प्रत्येक दो वर्षों में दिए जाने वाले प्रतिष्ठित राष्ट्रीय वनमाली कथा सम्मान से लोकप्रिय और चर्चित कथाकार प्रियंवद को विश्वरंग के मुख्य समारोह में सम्मानित किया गया। इस दौरान उन्हें प्रशस्ति पत्र, शॉल, प्रतीक चिह्न और एक लाख रुपए की राशि भेंट की गई। इससे पूर्व वनमाली कथा सम्मान पर निर्मित फिल्म का प्रदर्शन भी किया गया। कथाकार प्रियंवद का चयन कहानी में उनके सरस कथन और विरल क्राफ्ट को दृष्टिगत करते हुए किया गया। वे प्रेम के अद्वितीय चितेरे हैं। उनकी भाषा ठेठ गद्य की भाषा है और सूक्ष्म अन्वेषण के चलते वे कथा को अधिक प्रभावी तथा विश्वसनीय बनाते हैं। गौरतलब है कि कथा सम्मान की स्थापना कथाकार जगन्नाथ प्रसाद चौबे वनमाली की स्मृति में 1993 में की गई थी। प्रियवंद ने अभिभूत होकर कहा कि परास्नातक की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के बाद पहली बार गुरु ने चाय पिलाकर पुरस्कृत किया था। उस दिन मैं बहुत खुश हुआ था और आज इस पुरस्कार से अलंकृत होकर ठीक उसी आनंद की अनुभूति हो रही है।

प्रियंवद

जलियांवाला बाग की यादें

विश्वरंग परिसर में जलियांवाला बाग नरसंहार पर पार्टीशन म्यूजियम द्वारा प्रदर्शनी लगाई गई। यहाँ नरसंहार के दौरान की तस्वीरों और संबंधित सूचनाओं को साझा किया गया। प्रदर्शनी की परिकल्पना करने वाली लेखिका किश्वर देसाई ने कहा कि यह एक दिन का हादसा नहीं था। अंग्रेज सरकार कई दिनों से इसकी योजना बना रही थी। देसाई ने बताया कि जनरल डायर की गोलियों से डरकर कोई भी भारतीय कुंए में नहीं कूदा था बल्कि भगदड़ में कुछ लोग गिर गए थे। अंग्रेज़ लेखकों ने जलियांवाला बाग नरसंहार की घटना का सही वर्णन नहीं किया। नरसंहार हमारी आज़ादी की लड़ाई का टर्निंग पॉइंट है। मुख्य अतिथि के रूप में कार्यक्रम में शामिल हुए तात्कालीन पूर्व मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि जलियांवाला बाग प्रदर्शनी से आज़ादी के संघर्ष का पता चलता है। अंग्रेजों ने हमें चांदी की थाली में परोसकर आजादी नहीं दी थी। इसके लिए हजारों लोगों ने जान तक गंवाई है। इस बात का ज्ञान भावी पीढ़ी को होना चाहिए। संतोष चौबे ने अपने वक्तव्य में 'विश्वरंग' के विभिन्न रचनात्मक आयामों की जानकारी दी। इस अवसर पर कविता संग्रह 'कविता का विश्वरंग' और विश्वरंग के किटबैग का लोकार्पण भी हुआ। इंडियन आर्मी बैंड ने देशभक्ति गीतों की सुरमय प्रस्तुति दी।

सिने अभिनेता-निर्देशक रजत ने की शिरकत

जाने-माने सिने अभिनेता, लेखक व फिल्म निर्माता रजत कपूर भी विश्वरंग में शामिल हुए। उपस्थित जनसमुदाय से मुख़ातिब होते हुए उन्होंने कहा कि आज का सिनेमा बदलाव के लिए नहीं बल्कि पैसे कमाने के लिए फिल्में बना रहा है। हमारा सिनेमा समाज को रिफ्लेक्ट करता है तो हमें जरुरत है कि हम अपने सिनेमा के जरिए आम जीवन को दर्शकों तक पहुंचाएँ। रजत ने कहा कि टैगोर पूरे भारत की मानसिकता में आज भी ज़िंदा हैं। गौरतलब है कि लगभग तीन दशकों से हिंदी सिनेमा में सक्रिय रजत कपूर कलात्मक और व्यावसायिक फिल्म निर्माण तथा निर्देशन के क्षेत्र में अपनी विचारावान उपस्थिति बनाए हुए है। ख्याल गाथा तथा मानसून वेडिंग सहित कई चर्चित फिल्मों में उनके हुनर को देखा-परखा जा सकता है। विश्वरंग में युवा पीढ़ी की उत्साहजनक उपस्थिति को रजत ने विशेष रुप से लक्ष्य किया।

रजत कपूर

जनजातीय और लोक नृत्यों की गंदुमी शाम

विश्वरंग के आँगन में ढलती शाम का गोधुलि मुहूर्त नृत्य-संगीत के आदिम रंगों को समेट लाया। एक ओर लय-ताल पर अलमस्त उड़ाने भरता करमा नृत्य तो दूसरी ओर मरुभूमि राजस्थान और मालवांचल की लहक-महक से लुभाते लोक नृत्यों ने जलसे के मिज़ाज को अनूठी रंगत में ढाल दिया। छत्तीसगढ़ के जशपुर जिले से आए आदिवासी कलाकारों ने करमा-सैला नृत्य की मनोरम प्रस्तुति दी। मांदल, ढोल, नगाड़ा जैसे पारंपरिक वाद्यों की लय-ताल पर करमा-सैला को परवान चढ़ते देखना अनूठी अनुभूति थी। प्रस्तुति देने आईं अग्नेश केरकेट्टा और गीता नाग ने बताया कि करमा एक पेड़ का नाम है जिसकी आराध्य के रूप में पूजा की जाती है। इस पेड़ को सदियों से छत्तीसगढ़ के उरांव आदिवासी अंचल के लोग पूजते आ रहे हैं। कुंवारी लड़कियां अच्छे वर की प्राप्ति और खेतों में अच्छी फसल की कामना करते हुए करमा नृत्य करती हैं। सैला नृत्य शरद ऋतु की चाँदनी रातों में किया जाने वाला उल्लास का नृत्य है।

वनवासियों की उत्सवधर्मिता से सराबोर नृत्यों की उमंग-तरंग के बीच मालवा से पधारी तृप्ति नागर और उनके कलादल की दस्तक भी अनूठी थी। उज्जैन की सुपरिचित लोक कलाकार तृप्ति नागर ने लोक गुंजन संस्था के पारंपरिक कलाकारों के साथ राजस्थानी लोक नृत्य और मालवी लोक संगीत की प्रस्तुति दी। मालवा की वाचिक परंपरा के गीतों की सुरमयी श्रृंखला के साथ पेश आई तृप्ति ने लोक संस्कृति के उदात्त भाव संगीत को पूरी शिद्दत के साथ श्रोताओं तक पहुँचाया।

पाँचवा दिन : 8 नवंबर

अभिव्यक्ति के अलहदा आयाम

टैगोर के लिए प्रेम ही स्वर्ग-सुख

विश्वरंग का पाँचवा दिन यादों-बातों और मुलाकातों की गहमा-गहमी से भरा रहा। विभिन्न सत्रों में समसामयिक व ज्वलंत मुद्दों पर वक्ताओं ने अपने विचार प्रकट किए। युवा लेखकों की दस्तक अलग से ध्यान खिंचती रही। टैगोर, इक़बाल और फैज़ के योगदान पर गंभीर विमर्श हुआ वहीं आशुतोष राणा से सिद्धार्थ चतुर्वेदी की बातचीत और अंतरराष्ट्रीय मुशायरे का लुत्फ लेने बड़ी संख्या में कद्रदान उमड़े।

शुरुआत टैगोर, फैज़ और इक़बाल विषय पर व्याख्यान से हुई। वक्ताओं ने भारतीय साहित्य को सही दिशा देने में इन विभूतियों के योगदान को स्पष्ट किया। इसी सत्र में '21वीं सदी में विश्व साहित्य' पर चर्चा करते हुये वक्ताओं ने विश्व साहित्य की पूर्व अवधारणाओं से परिचित कराया। वर्तमान में उसमें आये बदलाव की भी चर्चा की। साहित्यकार इंद्रनाथ चौधरी ने कहा कि अल्लामा इक़बाल कहते थे कि ''खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तक़दीर से पहले ख़ुदा बन्दे से पूछे बता तेरी रज़ा क्या है?'' यानी वही शायर रह जाता है जो दिलों की धड़कन पकड़ता है। वहीं टैगोर की विरासत को याद करते हुए चौधरी ने कहा कि टैगोर प्रेम को सबसे बड़ा स्वर्ग सुख मानते हैं। फैज़ की शायरी आज भी रौशन अलाव की तरह है जो कि हम सभी से सवाल पूछती हैं। लेखिका मृदुला गर्ग इकबाल और टैगोर को एक ही मानती हैं क्योंकि दोनों धर्म मज़हब का अलगाव नहीं मानते थे। वहीं, इकबाल हिंदुस्तान और पाकिस्तान के बीच कोई फ़र्क नहीं मानते थे। आलोचक डॉ. धनंजय वर्मा ने बताया कि टैगोर सभ्यताओं के संघर्ष में विश्वास नहीं करते थे। फैज़ के बारे में उन्होंने कहा कि वो एक कौम, एक समय के ही शायर नहीं थे।

एक अन्य सत्र में 21वीं सदी के साहित्य पर चर्चा की गई जिसमें प्रभु जोशी की अध्यक्षता में गीत चतुर्वेदी, विजय शर्मा आदि ने बहुत बेबाकी से समकालीन साहित्य की विचार भंगिमाओं पर अपने मन्तव्य प्रकट किए। फिलीपींस से आईं साहित्यकार लेबो मशीले ने कहा कि विश्वरंग में आना मेरे लिए गर्व की बात है। भारत के पास विलक्षण प्रतिभा के धनी लोग हैं, इसलिए यहां का साहित्य समृद्ध है। डिजिटल मीडिया के जरिये अब भाषा की सीमाएं खत्म हो गयी हैं। प्रभु जोशी ने कहा कि दुनिया में अब जो बदलाव आने वाला है वो सांस्कृतिक उद्यमों से आएगा। संस्कृति में परिवर्तन से अब हमारा परिवार और समाज भी बदल रहा है। विजय शर्मा ने भारत की साहित्यिक विरासत की महिमा रेखांकित करते हुए कहा कि साहित्य एक सतत प्रक्रिया है और हम साहित्य की विरासत को कभी नकार नहीं सकते। इस सदी के साहित्य में दलित साहित्य, स्त्री साहित्य, समलैंगिक साहित्य की मुखर आवाज़ सुनाई पड़ती है, जो इस विश्व साहित्य की सबसे बड़ी उपलब्धि है। शर्मा ने कहा कि विश्वरंग जैसा समारोह अब तक नहीं देखा, यह एक महायज्ञ है। इस सत्र के समन्वयक यादवेंद्र थे। सत्रों का संचालन क्रमशः विनय उपाध्याय और संगीता पाठक ने किया।

कथाकार-आलोचक किरण सिंह सम्मानित

हिंदी की बहुचर्चित लेखिका, आलोचक, कथाकार, अनुवादक किरण सिंह को वनमाली विशिष्ट युवा पुरस्कार से सम्मानित किया गया। विश्वरंग के निदेशक संतोष चौबे ने उन्हें शॉल, श्रीफल, प्रशस्तिपत्र, स्मृति चिन्ह के साथ एक लाख रुपए की सम्मान निधि भेंट की। सम्मान के उपरांत सुश्री किरण ने घोषणा करते हुए कहा कि विश्वरंग से मिली सम्मान राशि को वे लेखन की प्रगतिशील लेखन संस्था को देंगी ताकि पठन-पाठन की गतिविधियों को और बढ़ावा मिल सके।

ध्रुपद की आध्यात्मिक अनुगूँज

ध्रुपद गुरुकुल संस्थान भोपाल के कलाकारों द्वारा भक्ति पदों के मंगलाचरण से निनादित हुआ मिंटो हॉल शाम-रात तक साहित्य, संस्कृति और कलाओं के बीच अंतरसंवाद के अनूठे आयाम तय करता परवान चढ़ा। करीब 50 ध्रुपद कलाकारों के समूह में भारतीय संगीतकारों के साथ कनाडा, इटली, लंदन, फ्रांस आदि देशों के संगीतकार भी शामिल हुए। महाकाल की वंदना-शंकर गिरिजापति से लेकर कबीर के निरगुण भक्तिपद तक ध्रुपद की आध्यात्मिक स्वर लहरियों ने वातावरण को सात्विक गरिमा प्रदान की। इस दौरान ध्रुपद गुरुकुल के संस्थापक गुंदेचा बंधु भी उपस्थित थे। संतोष चौबे ने इन बंधुओं को स्मृति चिन्ह भेंटकर सम्मानित किया।

हक़ीकत और अफ़साने बयाँ करती कहानियां

वनमाली गोष्ठी कक्ष में आयोजित एक अन्य सत्र में साहित्य की विभिन्न विधाओं कविता, कहानी सहित अन्य मुद्दों पर प्रवासी लेखकों से साहित्य प्रेमियों ने चर्चा की। इस दौरान खासकर युवाओं ने कहानी व कविता लिखने के गुर सीखे और अपनी जिज्ञासाओं का समाधान भी हासिल किया। कवियों ने रचना पाठ किया तो कहानीकारों ने अपने लेखन की चर्चा की। प्रवासी साहित्यकारों की शिरकत रौचक रही। युवा कहानीकार दिव्या विजय ने अपनी कहानी का पाठ किया। कथाकार इंदिरा दांगी, राहुल सिंह, आशुतोष, मनोष पाण्डेय अपने-अपने अभिमतों के साथ उपस्थित रहे। सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ कहानीकार, आलोचक चंद्रकांता ने की। उन्होंने कहा कि आज का युवा कहानीकार मुख्य धारा से जुड़ गया है। कथाकार मुकेश वर्मा ने प्रतिभागी रचनाकारों को स्मृति चिन्ह भेंटकर सम्मानित किया।

प्रवासी भारतीय कवियों ने पढ़ी रचनाएँ

महादेवी सभाकक्ष में प्रवासी भारतीय कवियों ने रचनाओं का पाठ किया। इस सत्र में आठ कवि शामिल हुए। अमेरिका से आईं कवयित्री रेखा मैत्र ने अपने काव्यपाठ में चाबी वाली गुड़िया, कल रात चांद मेरे पास खिड़की से आया, जुड़वां, तिरेंगे से बातचीत जैसी कवितायें सुनाकर श्रोताओं को प्रभावित किया। उन्होंने कहा कि विश्वरंग हिंदी का सबसे बड़ा यज्ञ है लेकिन इसका व्यवहार उतना ही सरल है। पुष्पिता अवस्थी ने काव्यपाठ के लिए 'पृथ्वी' शीर्षक कविता का चयन किया। उन्होंने औरत को पृथ्वी की संज्ञा देते हुए स्त्रियों के खिलाफ होने वाले अपराधों पर गहरी चोट की। नीदरलैंड से आये कवि रामा तक्षक ने विश्वरंग को ऐतिहासिक आयोजन बताया। उन्होंने अपनी कविता 'मौन' का पाठ किया।

न्यूयार्क से विश्वरंग का हिस्सा बने कवि अशोक सिंह ने अपनी नज़्म 'रात बाकी है' सुनाई। प्रेम पर आधारित इस नज़्म पर युवा श्रोताओं ने उन्हें भरपूर दाद दी। सिडनी ऑस्ट्रेलिया से आईं कवयित्री भावना कुंवर के साथ ही संजय अग्निहोत्री, उमेश ताम्बी, रमेश जोशी ने भी रचना पाठ किया। संचालन रेखा राजवंशी ने किया।

पर्यावरण संतुलन, नागरिकता और विस्थापन

अपनी चर्चित पुस्तकों के संदर्भ में भी संवाद के लिए कुछ लेखक प्रस्तुत हुए। संदीप नय्यर ने अपनी पुस्तक के बारे में बताते हुए कहा कि यह महाभारत युग के बाद के वैदिक काल की कथा है। वह समय परिवर्तनों का युग था, जिसमे ऋग्वेद काल की उदारवादी नीतियां रूढ़िवादी हो रही थीं। इस पुस्तक में लिखी गयी कहानी काल्पनिक हैं। उन्होंने बताया कि कोसल राज्य पर राम ने राज्य किया जिसके बाद इसे उन्होंने अपने पुत्रों लव और कुश में विभाजित किया और किस प्रकार उन्होंने इसका विकास किया।

विश्वरंग में नौनिहाल और तरुणों का रेला

विश्वरंग में कला के विविध रूप देखने के लिए भोपाल के करीब 20 स्कूलों के एक हज़ार से ज्यादा विद्यार्थी मिंटो हॉल पहुंचे। उन्होंने जलियांवालाबाग प्रदर्शनी, पुस्तक प्रदर्शनी, मुखौटा प्रदर्शनी देखने के साथ विभिन्न गतिविधियों में भी हिस्सेदारी की। उन्होंने देश-विदेश से पधारे रचनाकारों से भी मुलाकात और बात की। इसी बीच कला, रंगमंच, संस्कृति और साहित्य से नौनिहालों को जोड़ने के उद्देश्य से विश्वरंग के एक सुंदर पांडाल में नाट्य कार्यशाला भी आयोजित हुईं। भोपाल के प्रसिद्ध रंग निर्देशक मनोज नायर, के.जी. त्रिवेदी, नीति श्रीवास्तव, प्रेम गुप्ता, सिद्धार्थ वाडे, आकांक्षा ओझा, हेमंत देवलेकर और अन्य ने छात्रों को रंगमंच की बारीकियों के कई गुर सिखाए। इस दौरान माइम, संगीत, नेपथ्य, क्राफ्ट के बेहतर उपयोग और रंगमंच पर प्रस्तुति देने के सलीकों से अवगत कराया।

'हिंदी की नई आवाज़' सत्र के दौरान वनमाली सभागार में सत्या व्यास, दिव्य प्रकाश दुबे और नितीन वत्स वक्ता बतौर शामिल हुए। वक्ताओं से साहित्य प्रेमियों ने कहानी और कविता लिखने की प्रक्रिया भी जानी। सत्या व्यास ने बताया कि जितना पढ़ेंगे, उतनी ही लेखनी मजबूत होगी। दुबे ने कहा दुनिया में कोई भी बिना पढ़े राइटर तो नहीं बना। मुझे लगता था कि जिस कहानी को जीना चाहिए, मैं उस कहानी को लिख रहा हूं। अगली कड़ी में सत्या व्यास ने कहानी 'बागी बलिया' के कुछ अंश सुनाए। संचालन सुदीप सोहनी ने किया।

उधर महादेवी सभागार में 'प्रवासी भारतीय कथा लेखन और मूल्यांकन की चुनौतियों' पर चर्चा हुई। सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ आलोचक कमल किशोर गोयनका ने की। संचालन अनिल शर्मा ने किया। उषा राजे सक्सेना ने अपने उदबोधन में कहा कि प्रवासी भारतीय लेखन के लिए हिंदी साहित्य में हमेशा से बंटवारा होता रहा है। पूरे साहित्य को एक ही दृष्टि से देखा जाना चाहिए। ब्रिटेन से आई साहित्यकार जया वर्मा ने कहा कि मनुष्य के जन्म के साथ ही कहानी का भी जन्म हुआ है। प्रवासी भारतीय जब भी कहानियां लिखते हैं तो भारतीयता का भाव उसमें रहता है। दिव्या माथुर ने कहा कि प्रवासी लेखक दो सतहों पर रहते हैं, हमारा तन विदेश और मन भारत में रहता है। प्रवासी लेखक के साहित्य पर उनके देश की राजनैतिक, भौगोलिक, घटनाओं, लोगों के व्यवहार, संस्कृति का गहरा असर पड़ता है। सिंगापुर से आईं संध्या सिंह ने अपने उदबोधन में कहा कि भारत का साहित्य बहुत व्यापक और विशाल है। विश्व की संस्कृतियों को समझने के लिए वहां के साहित्य को पढ़ना बहुत आवश्यक है। इंटरनेट के आने से अब प्रवासी साहित्यकारों को भी आसानी से पढ़ा जा सकता है।

उधर एक अन्य सत्र में प्रसिद्ध लेखिका नासिरा शर्मा की अध्यक्षीय उपस्थिति में वक्ताओं ने प्रवासी लेखन की दशा-दिशा पर अपने नज़रिये पेश किए। तेजेन्द्र शर्मा ने अपने उदबोधन में कहा कि कम्प्यूटर के आने से काफी मदद मिली, यूनिकोड के आने से मुश्किलें और कम हुई। अब बड़ी समस्या प्रवासी भारतीयों की दूसरी पीढ़ी तैयार करने की है, अब तक केवल भारत से जाकर विदेशों में बसे लोग ही साहित्य लेखन का काम कर रहे हैं पर वहीं जन्मे प्रवासी भारतीय लेखन क्षेत्र में काफी कम हैं। साहित्यकार राकेश पाण्डेय ने भी संबोधित किया। अनूप भार्गव ने चर्चा का संचालन किया। इस सत्र में डेनमार्क की प्रसिद्ध लेखिका अर्चना पैन्युली ने अपने लेखन में आने वाली चुनौतियों के बारे में बात की। अमेरिका से सुषम बेदी, बर्मिंगम से वंदना मुकेश भी चर्चा में शामिल रहीं।

पढ़े बिना मुमकिन नहीं लिखना

लेखक से मिलिए श्रृंखला में प्रियंवद, राकेश मिश्र, संतोष चौबे ने कहानियों पर बात की। चौबे ने कहा- जीवन सत्य और प्रेम है। रचनाकर्म में यह झलकता ही है। कहानीकार प्रियवंद ने कहा कि कोई भी लेखक किसी सत्ता के साथ खड़ा नहीं हो सकता। पंकज मित्र और जयनंदन ने अपनी कहानी के बारे में चर्चा के दौरान कहा कि शब्द चयन से ही बंधते हैं पाठक। पंकज मित्र ने अपनी 'कफ़न रिमिक्स' नामक कहानी के बारे में उपस्थितजनों से बातचीत की। युवाओं को यह संदेश दिया कि अगर आप कहानी लिखना चाहते हैं तो आप को पढ़ना पड़ेगा। कार्यक्रम में महाराज कृष्ण संतोषी अनंतनाग से शामिल हुए तो पुलवामा से निदा नवाज़। संतोषी ने कहा कि हम कश्मीर से हैं जहाँ आतंकवाद ने कश्मीर को ध्वस्त कर दिया है। सत्रों का संचालन प्रांजल धर, प्रीति खरे, बद्र वास्ती और स्वातिका चक्रवर्ती ने किया।

पानी और पर्यावरण

पानी और पर्यावरण विषय पर आधारित परिचर्चा में अभय मिश्र द्वारा रचित पुस्तक 'माटी मानस चून' पर भी चर्चा की गई। लेखिका ऋतुप्रिया खरे, मौली और गौरी शंकर रैना ने संवाद में भाग लिया। लेखक अभय मिश्र ने कहा कि पुस्तक में सन् 2075 में हमारे समाज की स्थिति को दर्शाया गया है कि यदि समाज और सरकारें इसी प्रकार विकास के नाम पर योजनाओं का क्रियान्वयन करती रही तो भविष्य में क्या स्थिति होगी। उन्होंने कहा कि नदियां केवल एक धन अर्जन का स्रोत बना दी गई हैं। कवयित्री ऋतुप्रिया खरे ने 'एक गीत गंगे नमामि-नमामि' से अपने वक्तव्य से शुरुआत की। उन्होंने कहा कि नदियां किसी भी सभ्यता के उद्गम और विकास का मुख्य कारण है। प्रो मौली कौशल ने कहा कि समाज के लोग ये कहकर के हमारा नदियों से सीधा कोई सम्बन्ध नहीं है उनकी दयनीय स्थिति से मुंह नहीं फेर सकते। गौरी शंकर रैना ने बताया कि पूर्व वर्ष में संस्थान द्वारा 8 फिल्मों का निर्माण किया गया जिनमें प्रमुखता से इस विषय पर बात की गयी है। संचालन मनोज त्रिपाठी ने किया।

छटवाँ दिन : 9 नवंबर

अदब का सम्मान और सूफ़ियाना मौसिक़ी

विश्वरंग की सतरंगी आभा में छटवाँ दिन सुबह से रात तक अदब की दुनिया में उठ रही इंसानी आवाज़ों और मौसिक़ी की रंगों-महक से तारी रहा। सुबह के मंगलाचरण को संतूर और बांसुरी की जुगलबंदी ने भक्ति के पवित्र भावों से सराबोर किया, वहीं ढलती शाम के साए 'सुखन' के फ़नकारों की संगत में सूफ़ियाना संगीत की सौगात समेट लाया। उधर मिंटो हॉल के अंतरंग में संवाद, मुलाकात और रचना पाठ की गहमा-गहमी बनी रही।

पब्लिक रिलेशंस सोसायटी द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की सेवा और प्रचार-प्रसार के लिए पूरे विश्व में कार्य कर रहे अप्रवासी भारतीय साहित्यकारों का सम्मान किया गया। म.प्र. के तात्कालिन जनसंपर्क मंत्री पी.सी. शर्मा ने शब्द-शिल्पियों के सम्मान में ख़ासतौर पर शरीक हुए। उन्होंने कहा कि जब कोई व्यक्ति विदेश जाता है तो अपनी संस्कृति भी साथ लेकर जाता है। अप्रवासी भारतीय साहित्यकारों ने भी सांस्कृतिक आदान-प्रदान की आदर्श मिसाल कायम की है। वाणिज्य कर मंत्री ब्रजेन्द्र सिंह, समाजवादी चिंतक रघु ठाकुर, साहित्यकार कमल किशोर गोयनका तथा अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय के कुलपति रामदेव भारद्वाज ने भी समारोह को संबोधित किया। चिंतक रघु ठाकुर ने कहा कि अंतर्राष्ट्रीय हिंदी साहित्यकार विदेशों में भारतीय संस्कृति के राजदूत होते हैं। यही लोग अन्य देशों में भारतीय मूल्यों की पहचान स्थापित करते हैं।

टैगोर विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे ने कहा कि इस तरह के आयोजन का हमारा मकसद यह भी है पूरे विश्व में हिंदी का प्रचार-प्रसार हो और डिजिटल क्रांति के दौर में भी सांस्कृतिक मूल्य बने रहे। हमें इस बात की प्रसन्नता है कि विश्वरंग के इस पहले आयोजन में प्रवासी और अप्रवासी दोनों ही कोटियों के विद्वान लेखकों का सानिध्य और मार्गदर्शन हमें मिल सका है।

सम्मानित होने वाले विद्वानों में तेजेन्द्र शर्मा, इंग्लैण्ड, रेखा मैत्र, अमेरिका, दिव्या माथुर, इंग्लैण्ड, प्रो. (डॉ.) पुष्पिता अवस्थी, नीदरलैण्ड, डॉ. रामा तक्षक, नीदरलैण्ड, अशोक सिंह, अमेरिका, डॉ. भावना कुँअर, ऑस्ट्रेलिया, ललित मोहन जोशी, इंग्लैण्ड, अनूप भार्गव, न्यूजर्सी, संजय अग्निहोत्री 'क्षितिज',ऑस्ट्रेलिया, उमेश ताँबी, अमेरिका, रेखा राजवंशी, ऑस्ट्रेलिया, उषा राजे सक्सेना, इंग्लैण्ड, डॉ. कविता वाचक्नवी, अमेरिका, डॉ. संध्या सिंह, सिंगापुर, श्रीमती जय वर्मा, ब्रिटेन, अनिल शर्मा, भारत, डॉ सुषम बेदी, अमेरिका, अर्चना पैन्यूली, डेनमार्क, डॉ. वंदना मुकेश, इंग्लैण्ड, रमेश जोशी, अमेरिका, धर्मपाल महेन्द्र जैन, कनाडा, रमेश दवे, भारत, डॉ. कमल किशोर गोयनका, भारत, नासिरा शर्मा, भारत, वैभव सिंह, भारत और आत्माराम शर्मा, भारत शामिल थे।

इस अवसर पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का विमोचन भी किया गया, जिनमें अमेरिका के कवि उमेश ताँबी का कविता संग्रह 'शब्दों की ओट में', प्रसिद्ध व्यंग्य लेखक और 'विश्व', अंतर्राष्ट्रीय हिंदी समिति, अमेरिका के संपादक रोमेश जोशी का व्यंग्य आलेख संग्रह 'लीला का लायसेंस', न्यूयॉर्क के प्रख्यात प्रवासी साहित्यकार व लेखक अशोक सिंह का ग़ज़ल संग्रह 'ख्वाब कोई बिखर गया', ऑस्ट्रेलिया की रेखा राजवंशी द्वारा संपादित व विश्व हिंदी साहित्य परिषद, दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'बूमरैंग-2 कविताएँ ऑस्ट्रेलिया से' (छह शहरों के चालीस कवियों की कविताओं का संकलन) और मनोज कुमार द्वारा संपादित 'बा और बापू' के 150 वर्ष पर केंद्रित 'समागम' (रिसर्च जर्नल) का विशेष अंक शामिल हैं।

अहसासों को गुनगुनाती रही सुरमई शाम

सुरमई पंखों पर सवार होकर आई शाम सुखन बैंड के जवां फ़नकारों की पेशकश से और भी हसीन हो उठी। इस महफ़िल ने माहौल को सूफियाना बना दिया। ग़ालिब, फैज़ अहमद फैज़, निदा फाज़ली, जॉन एलिया, नुसरत फतेह अली खान और अन्य प्रसिद्ध उर्दू लेखकों की ग़ज़ल, नज़्म, कव्वाली, शायरी और दास्तानगोई पेश कर फ़नकारों ने श्रोताओं को सम्मोहित कर दिया। 'ए मोहब्बत तेरे अंजाम पर रोना आया' के साथ महफ़िल का आगाज़ हुआ। अंत्याक्षरी की तर्ज पर बैतबाज़ी में एक से बढ़कर एक नग़में प्रस्तुत किए। इस दौरान कव्वाली है 'कहां का इरादा तुम्हारा सनम..' की प्रस्तुति पर श्रोता थिरक उठे। गौरतलब है कि ओम भूतकर और नचिकेत देवस्थले सुखन के समन्वयक है जिन्होंने चार बरस पहले नुसरत फतह अली खाँ को अपना आदर्श मानते हुए सुरों का सफ़र तय किया है।

'सुखन' के पहले सिने गीतकार और गायक इरशाद कामिल अपने बैंड 'द इंक' के साथ श्रोताओं से मुख़ातिब हुए। देश का पहला पोएट्री बैंड 'द इंक' कविताओं के जरिए दिलों की बातें करता है, जिसका मकसद गीतों और कविताओं के साथ संगीत का मिश्रण और उसमें सही तालमेल बैठाकर दर्शकों तक पहुंचाना है। इरशाद कामिल ने बताया कि मेरा मकसद युवाओं के दिल की बात को कहना है। मैं उनके ही एहसासों को लिखता हूं।

बाल साहित्य : सरोकार और चुनौतियाँ

नौनिहालों के पक्ष में साहित्य की जरुरत और उसकी पहुंच की चिंताओं को लेकर विश्वरंग में एक महत्वपूर्ण सत्र हुआ। 'बाल साहित्य: सरोकार और चुनौतियाँ' विषय पर वक्ताओं ने अपने विचार साझा किए। सत्र के अध्यक्ष वरिष्ठ बाल साहित्यकार दिविक रमेश थे। अन्य वक्ताओं में नई दिल्ली से आई वरिष्ठ रंगकर्मी त्रिपुरारी शर्मा, कवि बलराम गुमास्ता, कला समीक्षक विनय उपाध्याय, कवि एवं रंगकर्मी हेमंत देवलेकर शरीक हुए। विषय की भूमिका स्पष्ट करते हुए विनय उपाध्याय ने कहा कि आज की नौनिहाल पीढ़ी दुर्भाग्य से ऐसे समय से गुजर रही है जब उसके चारों ओर बदहवासी और बेचैनियों का मंजर है। तकनीक से वह आक्रांत है। प्रकृति से उसका फासला है इसलिए संस्कृति और उसके नैतिक मूल्य भी उसकी शख्सियत और अनुभव का हिस्सा पूरी तरह नहीं बन रहे हैं। दोष बच्चों का नहीं है, हमारे दुराग्रहों ने उन्हें उनके नैसर्गिक अधिकारों से दूर कर दिया है। दिविक रमेश ने विनय के विचारों से सहमत होते हुए जोड़ा कि निश्चय ही बाल मस्तिष्क पर तकनीकी ने कब्ज़ा कर लिया है, इससे उनकी मासूमियत ख़तरे में पड़ गई है। उन्हें साहित्य की तरफ मोड़कर उनकी बाल सुलभ सहजता लौटा होगा। बच्चे वही सीखते हैं जो हम करते हैं। बलराम गुमास्ता ने कहा कि कई दुर्भाग्यपूर्ण चीजें हमारे आस-पास चल रही हैं जो बच्चों के पक्ष में नहीं हैं। बरसों पहले, बच्चे दादी-नानी से कहानियाँ सुनते थे लेकिन अब इस चीज़ को बदल दिया गया है इसलिए अच्छे बाल साहित्य की जरूरत बढ़ गई है। कविता और रंगकर्म के ज़रिये बच्चों से नियमित संवाद रखने वाले हेमंत देवलेकर ने कुछ बाल कविताओं का पाठ करते हुए कहा कि बच्चों के साथ काम करते हुए मासूमियत और सहजता को अपनाना आवश्यक है। सत्र में उपस्थित वरिष्ठ रंगकर्मी शोभा चटर्जी ने अतिथियों का स्वागत किया। संचालन बाल साहित्यकार प्रीति खरे ने किया।

हाशिये बने भी, टूटे भी

निराला सभागार में दोपहर 'केंद्रीय परिदृश्य में हाशिये के स्वर' पर संवाद हुआ। लक्ष्मण गायकवाड़, जयप्रकाश कर्दम, अजीज हाजिनी, ए. अरविंदाक्षन आदि वक्ताओं ने संबोधित किया। कार्यक्रम के समन्वयक महेश दर्पण थे। इस दौरान जितेंद्र जितांशु की पुस्तक 'गांधी आज भी खरे' का विमोचन हुआ। महेश दर्पण ने कहा कि आज सब ने अपने हाशिये बना रखे हैं और उसके लिए स्वर निर्धारित कर रहे हैं। आज दलित साहित्य, अल्पसंख्यक साहित्य और नई अस्मिताओं के स्वर हाशिये से निकलकर मुख्यधारा में स्थापित हो चुके हैं। इधर अजीज हाजिनी ने कहा कि कश्मीर की सुंदरता के अलावा बहुत से ऐसे मुद्दे हैं जो आज हाशिए पर हैं और उनके स्वर पूरे विश्व को अपनी आवाज से परिचित करा रहे हैं। संचालन डॉ. प्रीति खरे ने किया।

उधर प्रेमचंद सभागार में भारतीय भाषाओं में युवा लेखन पर चर्चा हुई। सत्र की अध्यक्षता जानकी प्रसाद शर्मा ने की तो संचालन कुमार अनुपम ने किया। इस दौरान अन्वेषा अरुण सिम्बाल ने कोंकणी भाषा में रची अपनी रचनाओं का पाठ किया और उनका हिंदी अनुवाद भी सुनाया। हिंदी भाषा के कवि अमेयकांत ने अपनी बहुचर्चित कविता 'घाट' का पाठ किया-''नदी से सटकर बहता है समय जिसमें धीरे धीरे बहते रहते हैं घाट।'' बलराम ने ''मैं, तुम और रामप्रसाद तथा 'पहाड़ों का शहर' रचना का पाठ किया। वहीं पीयूष ठक्कर ने गुजराती में कविताएं पढ़ी। संस्कृत और फारसी में कवि बलराम शुक्ल अपनी रचनाओं के साथ पेश आए। निरंजन श्रोत्रिय ने रचना पाठ का विश्लेषण किया। वरिष्ठ साहित्यकार जानकी प्रसाद शर्मा ने अपने अध्यक्षीय उदबोधन में कहा कि हम उत्तर भारत के रहने वालों को दक्षिण भारतीय लिपि को भी सीखना समझना चाहिए ताकि वहां के लेखकों की रचनाओं का अनुवाद कर सकें। रवि कराड़े ने भी चुनिंदा कविताएँ सुनाईं।

व्यंग्य पाठ और 'अट्टाहास' का लोकार्पण

महादेवी सभागार में व्यंग्य रचना पाठ हुआ। इस सत्र में प्रख्यात व्यंग्यकार ज्ञान चतुर्वेदी, प्रेम जनमेजय, शांतिलाल जैन, ईश्वर शर्मा, इंद्रजीत कौर, ने शिरकत की। आलोक पौराणिक ने समन्वय किया। रचना पाठ के साथ ही विश्वरंग पर केंद्रित चंद्रकांत द्वारा संपादित 'अमृत दर्पण' पत्रिका, मप्र के व्यंग्यकारों पर आधारित अश्वनी दुबे द्वारा संपादित- 'अट्टहास' पत्रिका के विशेषांकों सहित कुछ पुस्तकों का विमोचन भी किया गया। व्यंग्यकारों ने समग्रत: कहा कि व्यंग्य रचनाएँ मस्तिष्क का आहार है। यह उर्वर मस्तिष्क का काम करती हैं।

बोलियों का सोंधापन

विश्वरंग की समग्रता में बोलियों के साहित्य न केवल आवश्यक विमर्श हुआ बल्कि लोक कविताओं की मटियारी महक ने सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकारों का बहुरंगीय फ़लक रचा। इस सत्र की अध्यक्षता ललित निबंधकार-नवगीत गीतकार श्रीराम परिहार ने की। समन्वयक अनुराग सौरभ थे। इस समागम में देश के लोकप्रिय कवि सोम ठाकुर की उपस्थिति निश्चय ही मान और गौरव का प्रतीक बनी। बुंदेली कवि महेश कटारे सुगम की पुस्तक 'कछु तो गड़बड़ है' का विमोचन भी हुआ। बाबूलाल दाहिया, कुंवर उदय सिंह अनुज, दीपक पगारे मोहना, शैलेन्द्र शुक्ल, शिव चौरसिया और सरोज सिंह ने बुंदेली, ब्रज, बघेली, अवधी, मालवी, निमाड़ी और भोजपुरी में अपनी रचनाओं का पाठ किया। धारणा साफ हुई कि हिंदी का विश्व बोलियो से मिलकर ही संपूर्ण है।

पत्रकारिता का चरित्र बदल गया

महादेवी सभागार में 'मीडिया का समकालीन चरित्र' पर रोचक संवाद हुआ प्रकाश दुबे, मधुसूदन आनंद, शाहिद लतीफ, उमेश त्रिवेदी, राजेश बादल जैसे मेधावी पत्रकारों ने अपने वक्ती दौर की पत्रकारिता के तेवरों और उसकी नई दिशाओं पर बेबाकी से अपने विचार व्यक्त किए। सत्र का समन्वयन प्रियदर्शन ने किया। प्रियदर्शन ने कहा कि भारत की पत्रकारिता जेलों में पली है। आज के पत्रकारों का चरित्र बदल गया है। पत्रकारिता पहले कमजोर आदमी की आवाज़ थी। आज पत्रकारिता मजबूत आदमी का बयान है। राजेश बादल ने कहा मीडिया का समकालीन चरित्र एक द्वंद्व से लड़ रहा है कि हम सच बोल नहीं पा रहे और झूठ हमें बोलना नहीं है। बेशक हम बाज़ार में हैं, कारोबार हमें डील कर रहा है लेकिन इसका मतलब ये नहीं कि हमने सब कुछ गिरवी रख दिया है। शाहिद लतीफका कहना था कि आज पत्रकारों के दिल में आग ही नहीं है। उधर सोशल मीडिया में फेक न्यूज का अम्बार लगा हुआ है। वरिष्ठ पत्रकार उमेश त्रिवेदी ने पत्रकारिता के साथ जुड़ी चुनौतियों और असमतियों का खुलास किया। इलेक्ट्रानिक मीडिया की विश्वसनियता पर भी चर्चा हुई। संचालन युवा पत्रकार राजेश गाबा ने किया।

कहानी, कविता और लोकरंजन

व्याख्यान, संवाद और विमर्श के सिलसिले में कविता, कहानी का पाठ और लोक नृत्य संगीत की लय-ताल पर थिरकती उमंगों ने नया रस घोला। प्रेमचंद्र सभागार में भारतीय भाषाओं का कविता पाठ हुआ। इस सत्र की अध्यक्षता ए. अरविंदाक्षन ने की और संचालन उत्पल बैनर्जी ने किया। सत्र की शुरुआत बंगला की कवयित्री मंदाक्रांता सेन की कविताओं के हिंदी अनुवाद के पाठ से हुई। इसके बाद उन्होंने अपनी मूल रचनाओं को पढ़ा। असम से आई कवयित्री तुलिका चेतिया, जयंत परमार और प्रवासिनी महाकुंठ ने भी अपनी रचनाओं का पाठ किया।

उधर 'लेखक से मिलिए' कार्यक्रम में ममता कालिया, चित्रा मुद्गल, सूर्यबाला, गीतांजलिश्री, उर्मिला शिरीष, रेखा कस्तवार शरीक हुए। इन तमाम लेखिकाओं ने अपने रचनात्मक अनुभवों के हवाले से लेखक के मनोविज्ञान से जुड़ी महत्वपूर्ण बातें साझा की। सवाल-जवाब के रौचक प्रवाह में श्रोताओं की हिस्सेदारी भी उत्साहजनक रही। इस दौरान रेखा सेठी की पुस्तक 'स्त्री कविता' का विमोचन भी हुआ। संचालन युवा शायर बद्र वास्ती ने किया।

युवा कवियों के रचना पाठ को सुनना भी प्रीतिकर भी अनुभव रहा। अदनान काफिल दर्वेश, विजया सिंह, पूनम अरोड़ा, रश्मि भारदाज, रंजना मिश्रा, सुजाता सिंह, राकी गर्ग, प्रमोद तिवारी और उपासना झा ने मौजूदा हालात और दिली जज़्बात से जुड़ी कविताएँ सुनाईं। भाषा, शिल्प, विषय और पाठ प्रस्तुति के लिहाज़ से युवा कवियों की शिरकत रुचि और जिज्ञासा से भरी रही। संचालन बसंत त्रिपाठी ने किया।

मिंटो सभागार की खुली वादियों में अपनी लोकरंगी चहक-महक के साथ मध्यप्रदेश के निमाड़ अंचल के चिर-परिचित कलाकार संजय महाजन अनुष्ठानिक नृत्य गणगौर की प्रस्तुति लिए नमूदार हुए, वहीं रवींद्रनाथ टैगोर विवि के छात्रों ने बुंदेलीखंड अंचल के पारंपरिक बरेदी नृत्य की मनमोहक छवियाँ उकेरी।

आत्मा जीती रही, मैं मरती रही... !

ट्रांसजेंडर कवियों की संगत

भगवान भी भगवान ही है, न तो पुरुष है और न तो स्त्री... मैं क्या ख़ुद एक कविता हूँ, मेरा जीवन कठिन सा... आत्मा जीती रही, मैं मरती रही... अपनी रचनाओं में ऐसे अनेक धूप-छाँही अहसासों के साथ विश्वरंग के मंच पर ट्रांसजेंडर कवि हस्ताक्षर मुखर हुए तो मिंटो सभागार एक अनूठी चेतना से भर उठा। यह वर्जना टूटती नज़र आई कि अमूमन मुख्यधारा से वंचित किया गया एक वर्ग अपने रचनात्मक सरोकारों के निर्वाह में पिछड़ा है। बल्कि उनकी संवेदनाएँ भी इंसानियत के पक्ष में अपनी आवाज़ उठा सकती है।

यकीनन इन आमंत्रित रचनाकारों ने सामाजिक विसंगतियों और अपनी निजी बेचैनियों तथा आत्मविश्वास को बख़ूबी अभिव्यक्त किया। विप्लव घोष, धनंजय सिंह चौहान, मानबी बंदोपाध्याय, देबज्योति भट्टाचार्य, आलिया शेख इस सिलसिले में अपने-अपने तेवरों के साथ पेश आए। सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ कथाकार और साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित चित्रा मुद्गल ने की। अपने संबोधन में उन्होंने कहा कि लिंग से वंचित को भी हाशिए पर नहीं छोड़ना चाहिए। मनुष्य पहले आया और धर्म बाद में।

शास्त्रीय नृत्यांगना ट्रांसजेंडर विप्लव घोष ने महाभारत के चरित्र अम्बा पर अपनी एक कविता की नृत्यमय प्रस्तुत दी। रशियन, फ्रेंच व कम्प्यूटर विज्ञान में डिप्लोमाधारी और कनाडाई वाणिज्य दूतावास, ब्रिटिश और भारत सरकार के साथ मानवाधिकार कार्यकर्ता के रूप में काम करने वाले धनंजयसिंह चौहान ने 'मैं एक औरत नहीं, एक गौरवान्वित महिला हूँ' कहकर आत्मस्वाभिमान से भरा वक्तव्य दिया। विश्वरंग की आमंत्रण का धन्यवाद करते हुए कहा उन्होंने कहा- ''तीसरे लिंग का संघर्ष जन्म से शुरू होता है। समाज लिंग तय करता है, बाकी सब कुछ जैविक है और बच्चे के पास सब कुछ होकर भी उसका अपना कुछ भी नहीं है।'' धनंजय ने समाज में उनके संघर्ष, उत्पीड़न और दुर्व्यवहार के बारे में बताते हुए कहा कि आत्मा जीती रही और मैं मरती रही। उन्होंने परिवार की खातिर अपनी पहचान छिपाकर अपनी शिक्षा में उत्कृष्टता हासिल की। ग़ौरतलब है कि धनंजय ने 2016 में पंजाब विश्वविद्यालय में अपनी शिक्षा के दौरान एक भेदभाव रहित वातावरण के लिए शैक्षणिक संस्थान में अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया। इस तारतम्य में धनंजय ने एक आत्म संवादी कविता और अमीर ख़ुसरो की कुछ काव्य पंक्तियों के साथ अपनी बात को विस्तार दिया।

पश्चिम बंगाल से आई डॉ. मानबी बंदोपध्याय ने टैगोर की 'एकला चलो रे' कविता से संवाद की शुरूआत की। वे देश की पहली पीएचडी ट्रांसजेंडर हैं। उन्होंने 'मैं क्या खुद एक कविता हूँ, मेरा जीवन कठिन सा' और 'मैं तृतीया' जैसी कविताओं का पाठ किया। इस क्रम में प्रोफेसर देबज्योति भट्टाचार्य ने आदिकवि वाल्मीकि के पहले दोहे के साथ अपनी प्रस्तुति की शुरूआत की। उनकी कविता- ''भगवान भी भगवान ही है वो ना तो पुरूष है, और न स्त्री ने श्रोताओं को ख़ासा प्रभावित किया। एलबीजीटी समुदाय की काउंसलर आलिया शेख ने अपनी कविता 'प्रकृति कन्या, मैं हूँ प्रकृति कन्या, मैं हूं एक नारी' का पाठ कर प्रकृति और मनुष्य के आपसदारी रेखांकित की। पश्चिम बंगाल में अध्यापिका प्रफुल्लिता सुगंधा ने विश्वरंग में ट्रांसजेंडर रचनाकारों की आमंत्रण को अहम बताया। ट्रांसजेंडर समुदाय के साथ काम करने वाले पार्थसारथी मजूमदार ने कविता 'प्राकृत' का पाठ किया। टैगोर के रचनाकर्म पर शोध करने वाले रिंटू दास ने भी कविता के साथ इस सत्र में दस्तक दी।

समाहार : 10 नवंबर (अंतिम दिन)

अलंकरण, विमोचन.... और अलविदा !

साहित्य और संस्कृति के मुख़्तलिफ़ रंगों से गुलज़ार विश्वरंग का जलसा जब अपनी समापन की ओर बढ़ा तो सृजन के सम्मान की महक और सुर, ताल और लय के ललित रंगों ने मिलकर एक बार फिर माहौल में नई रौनक घोल दी। मिलन, आत्मीयता और विश्वास के ताने-बाने के बीच बीते सात दिनों के आख़िरी छोर पर अलविदा कहने के यह भाव-भीने लम्हे थे। .... फिर मिलने के वादे के साथ मधुर स्मृतियों को समेटे अतिथियों ने विदा ली और विश्वरंग के आयोजक परिवार ने विनत होकर सबकी आमद और सहभागिता का आभार जताया।

सातवें व अंतिम दिन कथा साहित्य तथा आलोचना और संपादन के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए वनमाली कथा सम्मान से रचनाकारों को सम्मानित किया गया। तरुण भटनागर, भगवानदास मोरवाल, रणेन्द्र, गौरव सोलंकी, मनोज पाण्डेय, विनोद शाही, राहुल सिंह, उपासना, किरण सिंह जैसे सृजनधर्मियों को सम्मान पत्र और सम्मान निधि भेंट कर अलंकृत किया गया। गौरतलब है कि साहित्य पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' को वनमाली साहित्यिक पत्रिका सम्मान के लिए चुना गया। सम्मानितों की ओर से संबोधित करते हुए उपान्यासकार भगवानदास मोरवाल ने कहा कि पुरस्कार किसी भी लेखक के लिए प्रेरणा का काम करते हैं।

कार्यक्रम में विशेष रुप से उपस्थित हिंदी की अग्रणी कहानीकार ममता कालिया ने कहा कि इस कठिन समय में साहित्य आशा है। यह परिदृश्य को बदलने और समझने की शक्ति देता है। दिविक रमेश ने कहा कि साहित्य हमें भीतर देखने की शक्ति देता है। आरंभ में वनमाली सृजन पीठ के अध्यक्ष संतोष चौबे ने सम्मान की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए इसे हिंदी के समकालीन परिदृश्य का प्रतिष्ठा उपक्रम बताया। समारोह का संचालन तथा प्रशस्ति पाठ टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केंद्र के निदेशक विनय उपाध्याय तथा संगीता पाठक ने किया। इस मौके पर पूर्व राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी की शुभकामना संदेश का प्रसारण भी किया गया। उल्लेखनीय है कि वनमाली कथा सम्मान जनतांत्रिक एवं मानवीय मूल्यों की तलाश में लगे कथा साहित्य की पुनर्प्रतिष्ठा और उसे सम्मान प्रदान करने के उद्देश्य से स्थापित हुआ द्विवार्षिक पुरस्कार है। वनमाली कथा सम्मान सुप्रतिष्ठित कथाकार, शिक्षाविद् तथा विचारक स्व. जगन्नाथ प्रसाद चौबे वनमालीजी के रचनात्मक योगदान और स्मृति को समर्पित है। समग्र योगदान के लिए पुरस्कार राशि रु.51,000/- तथा युवा रचनाकारों के लिए रु. 31,000/- निर्धारित है।

विज्ञान लेखकों को पुरस्कार

विश्वरंग के अंतर्गत डॉ. सी.वी. रामन विश्वविद्यालय में आयोजित विज्ञान कथा प्रतियोगिता के विजेताओं को भी सम्मानित किया गया। बाल कीर्ति को प्रथम पुरस्कार स्वरुप 31,000 रुपए, द्वितीय स्थान पर रहे अरविंद दुबे को 21,000 रुपए वहीं तीसरे स्थान पर रही वंदना शुक्ला को 11,000 रुपए की प्रोत्साहन राशि, प्रमाण पत्र भेंटकर पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर म.प्र. के तत्कालीन स्कूल शिक्षा मंत्री प्रभुराम चौधरी अतिथि बतौर उपस्थित थे। विज्ञान लेखन की मौजूदा स्थिति पर रौशनी डालते हुए संतोष चौबे ने कहा कि हिंदी में वैज्ञानिक चिंतन, शोध और नए आविष्कारों पर एकाग्र लेखन कि विपुल संभावनाएँ रही हैं। आईसेक्ट संस्थान द्वारा विगत 30 वर्षों से भी ज्यादा अवधि से प्रकाशित हो रही पुरस्कृत पत्रिका 'इलेक्ट्रॉनिक आपके लिए' की मिसाल देते हुए उन्होंने कहा कि इस पत्रिका ने विज्ञान और तकनीक से जुड़े नवाचारों पर दस्तावेज़ी अंकों का प्रकाशन किया है। नई पीढ़ी के रचनाकारों को विज्ञान लेखन के लिए प्रोत्साहित करने की कोशिशें लगातार जारी है।

वनमाली सम्मान से अलंकृत कथाकार, आलोचक और साहित्य संपादक

किताबें और पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांक

विश्वरंग में उमड़ती आवाज़ों के आसपास रची-बसी रचनात्मकता पर केन्द्रित विभिन्न किताबों, स्मारिकाओं और पत्र-पत्रिकाओं का विमोचन समापन दिवस की एक अलग हलचल बना। इस सिलसिले में चित्रकार प्रभु जोशी निर्मित वनमालीजी के पोट्रेट, वनमाली कथा सम्मान स्मारिका, भारत के चयनित हिंदी कथा लेखकों के अंग्रेजी अनुवाद गोल्डन ट्रेजरी (अनुवाद-पुनर्वसु जोशी), टैगोर के चित्रों पर आधारित कैटलॉग, पुस्तक यात्रा के विभिन्न सोपानो को समेटती स्मारिका, टैगोर की सांस्कृतिक विरासत पर केंद्रित 'नया ज्ञानोदय' का विशेषांक साहित्य प्रेमियों के बीच चर्चित रहे।

फिर मिलेंगे ... अलविदा विश्वरंग!

सात दिनों से मिंटो हॉल में चल रहे टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य और कला महोत्सव विश्वरंग का रंगारंग समापन हुआ। समापन अवसर पर ग्रैंड फिनाले के रूप में विद्यार्थियों ने रंग-बिरंगे झंडे और फिर मिलने का संकल्प लेकर इस विराट उत्सव को अलविदा कहा। खुली वादियों में देसी साज़-बाज़ की उठती-गिरती स्वर लहरियों और रघु दीक्षित प्रोजेक्ट बैंड की ताल पर ताल देती दस्तक से उमंग भरे पाँव थिरक उठे। आसमान पर आतिशबाज़ी ने सतरंगी रौशनी का आलम रच दिया। विश्वरंग ज़िंदाबाद के सामूहिक उद्घोष से वातावरण गूँज उठा। एक ऐसा दिलकश मंज़र सामने था जहाँ गोशे-गोशे पर मोहब्बत का पैगाम लिखा था। इंसानियत के नाम भाईचारे का यक़ीन था। अदब और तहज़ीब से जुड़ी अमन की आरज़ुएँ थी। भावाकुल मन लिए विश्वरंग के निदेशक संतोष चौबे अपनी पूरी आयोजकीय टीम के साथ एक बार फिर सबके रुबरु हुए। उन्होंने कहा- गोया कि हम सब ने मिलकर एक विशाल सपना देखा। सपने को सच होते देखा। इस मुकाम पर सारी दुनिया हमारे साथ चली आई, निश्चय ही हम सब के लिए यह ख़ुशी और गौरव की वजह बना। इतना बड़ा आयोजन कहीं नहीं हुआ। चौबे ने उम्मीद से भरकर कहा कि विश्वरंग बार-बार आएगा, और भी गहरे छलकते रंगों के साथ आएगा। उन्होंने जोड़ा- हमारा शहर, हमारा प्रदेश, हमारा देश और सारी दुनियाँ इसी तरह सौहार्द, उल्लास और उमंग के साथ रहे, ऐसी मेरी कामना है।

यादों में महकता रहेगा 'विश्वरंग'

विश्वरंग की आत्मा समावेशी है

टैगोर अन्तरराष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव विश्वरंग का आमंत्रण मिला लेकिन दुर्भाग्य से शामिल नहीं हो सका। अपना शुभकामना संदेश प्रेषित करते हुए मुझे हर्ष है। हमारी कला-संस्कृति हज़ारों वर्ष से चली आ रही है। इसकी जो आभा है वो शताब्दी दर शताब्दी कायम है। विश्वरंग में भारतीय भाषाओं को प्रोत्साहित करने के लिए जो कार्य हो रहा है, मैं उसका स्वागत करता हूँ। विश्वरंग का विस्तृत कार्यक्रम देखकर मन को हर्ष हुआ कि इसमें बहुत सारे नृत्य भी हैं, संगीत भी है। आपने गुरुदेव के नाम पर विश्वविद्यालय बनाया है। वो एक महान साहित्यकार थे, महान विचारक थे। उनकी ख्याति केवल भारत तक सीमित नहीं है। वे विश्वविख्यात है। मुझे उम्मीद है कि विश्वरंग अपने उद्देश्य में सफल रहेगा। टैगोर की स्मृति के साथ ही अपने समय में कला, साहित्य और संस्कृति के प्रति आप गहरी संलग्नता से काम करते रहेंगे, विश्वरंग इस बात का विश्वास देता है।

-**कर्णसिंह,** राजनेता-चिंतक

व्यापक स्तर पर इस ढंग से एक वृहद् उत्सव मनाना, जहाँ लेखक, साहित्यकार, रंगकर्मी, चित्रकार.... सारे लोग मौजूद हों, अपने आप में विलक्षण है यह सब! इसकी जो भव्यता है दिल को छूने वाली है। माइण्ड यहाँ ब्लोइंग होता है और ये सब मुझे अनुभव हो रहा है।

-**इन्द्रनाथ चौधरी,** साहित्यकार

मैं बहुत खुश हूँ कि भारत का 'विश्वरंग' मेरी आँखों और मन में गहरे उतर रहा है। मैं हर बार यहाँ आना चाहूँगी। मैं कज़ाकिस्तान की जनता की ओर से विश्वरंग में शामिल हुए सभी भारतीय लेखक-कलाकारों को शुभकामनाएँ देती हूँ।

-**डेरिगा कोरेयेव,** शोधार्थी, कज़ास्तान

विश्वरंग में ऐसा लगा मानों 'बरसाने की होली' हो रही है। पहली पायदान पर ही सब कुछ इतना भव्य! सचमुच किसी सुंदर सपने को साकार करने जैसा है। ये बहुत जल्दी सालाना समारोह बनें।

-**दिव्या माथुर,** लेखिका

मैं पंजाब यूनिवर्सिटी की पहली ट्रांसजेण्डर स्टूडेण्ट हूँ और अभी मैं पीएच.डी. कर रही हूँ। मैं मंगलमुखी ट्रांसजेण्डर डेवलप सोसायटी की जनरल सेक्रेटरी हूँ। हर साल वहाँ 'गर्व उत्सव' मनाया जाता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर यूनिवर्सिटी, भोपाल ने 'विश्वरंग' का बहुत ही विलक्षण आयोजन किया। मैं पूरी दुनिया में और भारत में भी हर जगह जाती हूँ। कई उत्सव मैंने देखे। वहाँ टॉक शो होते हैं, और भी बहुत कुछ। लेकिन 'विश्वरंग' में अद्भुत क़िस्म की विविधता और रोचकता है। लोगों ने जिस तरह का यहाँ पर रिस्पॉन्स दिया वो हमारा बड़ा हासिल है। भारत ही नहीं, पूरी दुनिया में हों ऐसे आयोजन।

-**धनंजय चौहान,** लेखक-सामाजिक कार्यकर्ता

मेरा सौभाग्य है कि 'विश्वरंग' में मुझे अवार्ड मिला है प्रिंट मेकिंग के लिए। उसके लिए तो खुश हूँ ही। दूसरी बड़ी उपलब्धि यहाँ देश-दुनिया के गुणी और नामचीन कलाकारों से मिलना और संवाद करना है। कई कलाकारों का बहुत अच्छा वर्क देखने को मिला। सेमिनार्स से बहुत कुछ सीखने को मिला।

-**अनुपमा डे,** चित्रकार

टैगोर यूनिवर्सिटी को थैंक्स कहना चाहूँगी कि उन्होंने हम लोगों को 'विश्वरंग' में इतनी बड़ी अपॉर्च्युनिटी दी। अपनी भावनाओं को हम अपनी लेखनी में अभिव्यक्त करते हैं लेकिन यह अभिव्यक्ति जब 'विश्वरंग' जैसे विशाल मंच का हिस्सा बनती है तो इसका दायरा बढ़ जाता है।

-**आलिया शेख,** लेखिका

'थर्ड जेण्डर मीट' में आमंत्रित होकर गर्व हुआ। रिसाइटेशन के लिए इनवाइट किया– दिस इज़ ए ग्रेट अर्पोच्युनिटी टु अस। क्योंकि ये जो ट्रांसजेण्डर सोसायटी है, ये इण्डिया में बहुत दिनों तक हमारी सोसायटी में निग्लेक्ट रहा, लेकिन जो ट्रांसजेण्डर इंसान हैं, वो भी टेलेण्टेड हैं, वो भी लिटरेचर के शौकीन हैं। लिखते हैं, गाते हैं, चित्रित करते हैं। थैंक्स टु ऑर्गेनाइजेशन।

–**देवज्योति भट्टाचार्य,** साहित्यकार

मैं इजराइल से इस सांस्कृतिक महोत्सव में आया हूँ। भारत से मेरा सम्पर्क बहुत पुराना है। ये बहुत अच्छी बात है कि हिन्दी को, बड़ा महत्व दिया जा रहा है। भाषा के त्यौहार की खुशी है।

–**गेनाद्य श्लोम्पर,** भाषाविद्, इजराइल

इस अनूठे सांस्कृतिक उत्सव में आकर हार्दिक खुशी है। यह मेरा दूसरा भारत प्रवास है। इस बार अपनी कुछ कविताएँ लेकर आयी हूँ। कितना सुन्दर और सुखद है यहाँ का नज़ारा।

–**इगोर सीड,** कवियित्री, रशिया

'विश्वरंग' के भव्य उद्घाटन का मैं साक्षी रहा। इस महोत्सव के मुख्य सूत्रधार संतोष चौबे को अनूठी परिकल्पना के लिए बधाई। भोपाल तहजीब का शहर है। यहाँ की सरज़मीं पर यह उत्सव बहुत खिल उठा! पूरी आयोजकीय टीम का तालमेल देखते ही बना!

–**जय वर्मा,** लेखक, नॉटिंघम, यू.के.

आई एम पोइट फ्रॉम साउथ अफ्रीका। आई एम ऑल्सो फ़िल्ममेकर, एक्ट्रेस एण्ड प्रोड्यूसर। फर्स्ट टाइम कमिंग इन इण्डिया। आई एम हेप्पी टू कम हियर। 'विश्वरंग' इज़ वैरी स्पेशल। साउथ अफ्रीका हैज़ ए लार्ज इण्डियन कम्युनिटी। सो द कल्चर ऑफइण्डियन एंड लिटरेचयर वेरी क्लोज़ टू मी।

–**लेबो मशीले,** लेखिका, साउथ अफ्रीका

सरकारी समारोह तो बहुत सारे होते देखता रहा हूँ, लेकिन एक प्राइवेट यूनिवर्सिटी ने साहित्य और कला के प्रति इस तरह बहुत बड़े पैमाने पर जो दायित्व निर्वाह विश्वरंग में प्रकट किया है, वह बहुत ही सराहनीय है। दुनियां के अनेक मुल्कों से लेखक, शिक्षाविद्, मीडियाकर्मी ही नहीं बल्कि बड़ी तादाद में विद्यार्थियों का इसमें पूरी रुचि के साथ शरीक होना इस उत्सव की उपलब्धि है। विश्वरंग में प्रवेश नि:शुल्क यह और ख़ास बात।

–**के. श्रीनिवास राव,** सचिव साहित्य अकादेमी, दिल्ली

मैं मास्को विश्वविद्यालय में हिन्दी, पंजाबी और कुछ धार्मिक विषय पढ़ाती हूँ। हमारे विद्यार्थी वहाँ शौक से हिन्दी सीख रहे हैं। भारतीय फिल्मों और कलाओं का वहां विशेष आकर्षण है। यह प्रेम काफी पुराना और गहरा है। 'विश्वरंग' ने भारत और रशिया के बीच एक नए सांस्कृतिक रिश्ते की शुरुआत की है। मुझे निजी तौर पर यहां आकर बहुत लाभ हुआ।

–**लिमियो खोरहोवा,** शोधार्थी, मास्को विवि, रशिया

'विश्वरंग' की परिकल्पना के मूल में जो बात रही वो यह कि कला के क्षेत्र में जो कार्यक्रम नहीं हो रहे हैं तो ऐसा कोई एक विकल्प हम बना सकें, एक स्पेस बना सकें जहाँ जो डिसीजन लिए जाएँगे वो आर्टिस्ट द्वारा लिए जाएँगे। इस बैकग्राउण्ड के साथ हमने काम किया। इस सबमें संतोष चौबे जी की अग्रणी भूमिका थी। उन्होंने यह सोचा 'लेट इट हैप्पन!' हम देखेंगे इसका रिजल्ट कैसा होता है! आप अपने प्लान बनाइये एंड यू डू इट।

मेरी समझ में भारतीय चित्रकला में 'चित्रकला' की जो परिभाषा है उसमें गड़बड़ है, जो बार–बार मैं स्ट्रेस कर रहा हूँ, कि हमारी समझ यह है कि हमने चित्रण को चित्र माना। इलेस्ट्रेशन और पेंटिंग में हम फ़र्क़ नहीं कर पाये। हमारी दिक्कत यह है कि हम हर चीज़ में 'कहानी' ढूँढ़ते हैं। कहानी ढूँढ़ते नहीं हैं, वहाँ ऑलरेडी एक कहानी रहती है। इस चीज़ से बाहर निकलने के लिए एक लम्बी लड़ाई की ज़रूरत है और उस लम्बी लड़ाई को हम यहाँ से शुरू कर रहे हैं और ये हम लोगों की बहुत बड़ी उपलब्धि है। मेरा मानना है कि ख्याल से ये बहुत दूर तक जायेगी और आने वाले दिनों में हम लोग इस मिशन पर काम करेंगे कि छोटे शहर के लोगों का पार्टिसिपेशन हो। महिलाओं का पार्टिसिपेशन हो, जो अपने घर से नहीं निकल पाती हैं। पार्टिसिपेशन कोई मेला नहीं है। पार्टिसिपेशन हो तो एक मकसद के साथ हो कि हम दरअसल कहना क्या चाहते हैं, किस तरह के विचारों से हम जुड़े हुए हैं, हम चित्रकला को किस नज़रिये से देखते हैं।

इस उत्सव में जिस तरह का उत्साह सोशल और कल्चरल प्लेटफार्म पर दिखाई दिया वैसा अमूमन कम ही दिखाई देता है। अभी बहुत दूर का सफर तय करना है और मैं बड़ा आश्वस्त होता हूँ कि मेरे साथ जो साथी आकर जुड़े, यही 'विश्वरंग' विचारधारा के संवाहक होंगे।

–**अशोक भौमिक,** संयोजक–कला प्रदर्शनी विश्वरंग

संस्कृति के ललित आयाम

मेरा चीनी नाम 'चंग सी' है और मेरा हिन्दी नाम 'मयूरी' है। मैं चीन से आई हूँ हिन्दी सीखने के लिए। 'विश्वरंग' में आने का अवसर मिला, शुक्रिया। लेखक-कलाकारों से उनकी कृतियाँ उपहार में मिली, जिन्हें मैं बहुत प्रसन्नता के साथ अपने देश ले जाना चाहूँगी। हिन्दी मेरे लिए केवल एक भाषा नहीं बल्कि चीन और भारत के सम्बन्ध में एक बहुत कारगर संधि है, जिसे हम लिखकर, पढ़कर और अधिक मजबूत करेंगे। 'हिन्दी चीनी भाई-भाई'।

-**चंगी सी (मयूरी),** शोधार्थी, चीन

कला और संस्कृति के क्षेत्र में भोपाल दुनियाभर में मशहूर रहा है। 'विश्वरंग' ने निश्चय ही एक अनूठा अध्याय जोड़ा है। इस मंच पर टैगोर जैसे कला गुरु के संगीत योगदान पर आधारित प्रस्तुति देकर मैं और मेरा समूह ख़ुद को सौभाग्यशाली मान रहे हैं। सचमुच, यह उत्सव एक उत्तेजक अनुभव रहा।

-**पीलू भट्टाचार्य,** संगीतकार-रंगकर्मी

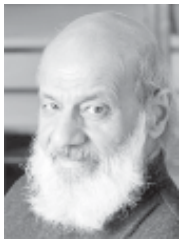

एक नर्तक होने के नाते 'विश्वरंग' की दुनिया के अद्‌भुत नज़ारे को देखकर सुखद अनुभव हुआ। बहुत सारे रंग दिखे यहाँ पर। बहुत सारे लोगों से मुलाकात हुई। बहुत सम्मान मिला। विश्वरंग के विशाल आंगन में घूमकर लगा जैसे ज़र्रे-ज़र्रे से मनुष्यता महक रही है।

-**रिन्टू दास,** नर्तक

'विश्वरंग' में युवाओं को हम सम्बोधित कर रहे हैं और एक संदेश दे रहे हैं कि वो देश की वर्तमान राजनीति को समझें, देश की वर्तमान सामाजिक चेतना को परखें। एक ज़रूरी हस्तक्षेप लगा युवाओं का यहाँ होना। हम जैसे वरिष्ठ कवियों को युवाओं के साथ इन्टरैक्शन का जो अवसर मिला वह दुर्लभ और आत्मीय क्षण रहा। सब तरह के उतार-चढ़ाव मैंने हिन्दी कविता के देखे हैं, लेकिन मैं हमेशा आधुनिक कविता के निकट रहा और तात्कालिक सत्य और यथार्थ को चित्रित करता रहा अपनी कविता में। विश्वरंग में आए युवा रचनाकारों से ऊर्जा मिलती रही मुझे।

-**ऋतुराज,** कवि-चिंतक

मैं ट्रांसजेण्डर हूँ। टैगोर को लेकर जो कुछ काम विश्वरंग के दौरान देखने को मिला, उसका मैं समर्थन करता हूँ। ये फेस्टिवल तो होना ही चाहिए। मेरी सोसायटी के लिए तो बहुत ज़रूरी है यह सब। हमारी लड़ाई और भी स्ट्रॉग होगी।

-**शम्भूनाथ चौधरी,** लेखक

यहाँ पर एक विशेष चीज़ हुई है जिससे मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ, वह यह है कि जो संवाद और विमर्श यहाँ हुए, वो बहुत ही ऊँचे दर्ज़े के और गम्भीर हैं। प्राय: इस तरह के उत्सवों में खानापुर्ती ज़्यादा होती है, तमाशा ज़्यादा होता है।

-**सुधीर चन्द्रा,** इतिहासकार

पहली बार साहित्य संस्कृति की इतनी बड़ी महफिल में भाग लेकर अच्छा लगा। मेरी मातृभाषा तिब्बती है और मैं अंग्रेज़ी में कविता लिखता हूँ। हिन्दी की महफिल में मेरे किये अनुवादों को शामिल किया जाना, महत्वपूर्ण रचनात्मक अवसर रहा। मुशायरा बेमिसाल था।

-**तेंजिम तसन्डू,** अनुवादक, तिब्बत

फेस्टिवल 'विश्वरंग'... इट्स वैरी नाइस एंड वैरी वेल ऑर्गेनाइज़्ड। स्टिल आई डिडन्ट नो मच, बट आई सी इट्स वैरी-वैरी नाइस फेस्टिवल, इन्टेनशियली टु ब्रिंग नो द वर्ल्ड कल्चर विदाउट लिटरेचर, म्यूज़िक एंड आर्ट्स। इट्स वैरी नाइस इनेशिएटिव। होप इट्स कीप्स हैप्पनिंग दिस काइण्ड ऑफइवेण्ट।

- **रिकार्डो,** शोधार्थी, पुर्तगाल

अठारह खंडों में कथा ग्रंथ, हिंदी कहानियों का अंग्रेज़ी में अनुवाद, उत्तेजक विचार-विमर्श और लोक कला के रंग प्रसंग... एक उत्सव में कितना कुछ! संतोष चौबे और उनकी पूरी टीम की ऊर्जा और तेजस्विता के लिए विस्मित सद्भाव से भरी हुई हूँ मैं।

– **ममता कालिया,** कथाकार

'विश्वरंग' के अप्रतिम महोत्सव ने भारतीय संस्कृति से जुड़े विश्व भर के रचनाकारों को समीप लाने और वैश्विक वैचारिकता के लिए काम करने हेतु उन्हें अधिक प्रतिबद्ध बनाया है। राजस्थानी लोक नृत्यों को अपने परिवार के साथ खुले आकाश के नीचे सीढ़ियों पर बैठ कर देखने का आनंद ही कुछ और था। लोक कलाएं निश्चय ही हमारे आदिम अहसासों को छूती है।

–**धर्मपाल महेन्द्र जैन,** साहित्यकार, टोरंटो

'अखिल भारतीय चित्रकला प्रदर्शनी' में एक साथ कला की विविधा को देखना निश्चय ही अद्वितीय अनुभव है। 'विश्वरंग' का यह आयाम, यह सोच उसकी समग्र दृष्टि का ही परिचय देता है। हमारे वक्ती दौर के युवा अपने चित्रों और शिल्पों में जिस नई सोच और कलात्मक ऊर्जा के साथ पेश आ रहे हैं उसे दर्शकों के सामने लाया जाना ज़रूरी है। 'विश्वरंग' का एक हिस्सा इस तरह भारत भवन भी बना, यह शुभ है।

– **देवीलाल पाटीदार,** चित्रकार-शिल्पी

मैंने गीतकार शैलेन्द्र पर कार्य किया जो 'धरती कहे पुकार के' पुस्तक के रूप में 'विश्वरंग' में नमूदार हुई। अपनी बात कहने और दूसरों की सुनने का सुखद अवसर रहा।

–**इन्द्रजीत सिंह,** लेखक

देश-विदेश के रचनाकारों का 'विश्वरंग' में एकत्र होना इस अर्थ में महत्वपूर्ण और जिज्ञासा से भरा रहा कि अपने व्यापक रचनात्मक सरोकारों में लेखक मनुष्यता को किस तरह से रच रहा है। यहाँ आकर शिरकत करना बहुत सुखद रहा।

– **कुमार अनुपम,** कवि

मुझे इस आयोजन की दो चीज़ें बहुत अच्छी लगीं। एक तो यह कि इसमें स्थानीयता भी है, राष्ट्रीयता भी है और अन्तर्राष्ट्रीयता भी है। दूसरी बात यह कि ये आयोजन बहुत समावेषी है। इसमें साहित्य, रंगमंच, कला, लोककलाएँ आदि ऐसी सारी चीज़ें हैं जो अमूमन एक समारोह में देखने को नहीं मिलती हैं। ये अपने तरह का भारत में विशिष्ट आयोजन है।

– **रवीन्द्र त्रिपाठी,** आलोचक

व्यापक और बहुरंगी समारोह इतना व्यवस्थित होगा, इसकी कल्पना करना ही कठिन है। आयोजक टीम के हर कार्यकर्ता को सलाम।

– **चारूदत्त,** सृजनधर्मी

'विश्वरंग' उत्सव का आयोजन कर आपने राष्ट्रदेवता का अभिषेक किया है। यह उत्सव अपने आप में अनूठा और आवश्यक था। यह संस्कृति के सारे ललित आयामों का सम्मान करने वाला था। उनका पुनरावलोकन करने वाला था। उनका व्यावहारिक धरातल पर संस्थापन करने वाला था। आपके सद्प्रयासों से संस्कृति अपने समस्त कलारूपों में पुनर्नवा हुई है। साहित्य अभिनन्दित हुआ है। कला गौरवान्वित हुई है। यह उत्सव अपने समय के आकाश में अनेक मोहक और अमिट रंग छोड़ गया है। इन्हीं से भविष्य की धरती पर सांस्कृतिक विकास के घन घिरेंगे। बरसेंगे। धरती सरसेगी। आपको साधुवाद।

उत्सव में संस्कृति के सर्वांग साकार हुए है। कोई कोना नहीं छूटा है। (निबन्ध, ललित निबन्ध को छोड़कर) आपका व्यवस्थापन और संस्थापन सब कहीं मौन मुखर हो रहा था। साहित्य कला की प्रत्येक प्रस्तुति में सम्मान और गर्व प्राप्त होता अनुभव किया जा सकता था। प्रत्येक विधा का अपेक्षित मान, प्रत्येक रचनाकार का समुचित सम्मान, प्रत्येक कला का उचित आदर, प्रत्येक कलाकार का समुचित सत्कार विश्वरंग उत्सव में हुआ है। यह आपका साहित्य, कला, भाषा और रचनाकार कलाकार के प्रति तरलतापूर्ण कृतज्ञ भाव का प्रमाण है।

सम्पूर्ण विश्वरंग उत्सव में सप्ताह भर के कार्यक्रमों और साहित्य रूपों, कला रूपों के मोतियों की माला में प्रिय विनय उपाध्याय की भूमिका और स्थान माला में रेशमी तागे की रहा है। आप तो उस माला के सुमेरू है। सारे अधिकारी-कर्मचारी पूरी निष्ठा से अपने अपने दायित्व का निर्वाह कर सके, तभी इतना सुन्दर, आवश्यक, संस्कृतिनिष्ठ, विशाल उत्सव पर्व व्यवस्थित तथा सुचारू सम्पन्न हो सका। विद्यार्थियों के अनुशासित आचरण, विनम्र व्यवहार और कार्य दक्षता की तो मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करता हूँ। सम्पूर्ण आयोजन उत्सव में आप श्रीकृष्ण की भूमिका में और विनय उपाध्याय पार्थ की भूमिका रहे हैं। आपने ऐसा साहित्य कला उत्सव कर दिखाया, जिसे बड़े-बड़े स्वनामधन्य संस्थान और सरकारें भी नहीं कर पाती हैं। आपका अभिनन्दन।

वर्तमान तुमुल कोलाहल कलह में आपने जैसे द्वापरी भूमि पर बाँसुरी बजाई है।

– **श्रीराम परिहार,** ललित निबंधकार

बड़ा विज़न और अथक परिश्रम

दिल्ली पहुंचकर 'विश्वरंग' को बहुत बहुत याद किया। गहरी संतुष्टि हुई। अद्भुत महोत्सव संपन्न हुआ। ऊंचाइयों को छूता हुआ। मैं विश्व हिंदी सम्मेलन की कार्यकारिणी और उसके सभी कार्यक्रमों के निर्धारण में सक्रिय रही हूं, 11 वें सम्मेलन तक, लेकिन रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित यह अंतरराष्ट्रीय समारोह, कहने में गुरेज नहीं कि अपने तमाम आयामों और परिणितियों में और तुलना में विशेष रहा। विनय उपाध्याय की उद्घोषणा (आवाज़) जब-जब सुनाई दी, कार्यक्रम में कलात्मक संजीदगी आ गई। उनकी आवाज़ हमेशा कानों में गूंजती और अनेक अर्थ छवियां वाक्यों को खोलती रही। विश्वरंग सब की मेहनत का नतीजा है और संतोष के विजन और अथक परिश्रम का समवेत प्रतिफल।

-**चित्रा मुद्गल,** कथाकार

'विश्व रंग' के बारे में दो बातें कहूँगी। 'विश्व रंग' पहला ऐसा आयोजन है मेरे अनुभव में जहाँ मैं विश्व को एक होते हुए देख रही हूँ। सारे आगंतुकों में उत्साह, स्नेह और खुशी का भाव है। भारत से बाहर रहकर एक कथाकार के रुप में हिन्दी के संसार से जुड़ना एक अलग ही अनुभव है। वनमाली कथा सम्मान समारोह में शामिल होकर मुझे गर्व की अनुभूति हुई।

-**सुषम बेदी,** कथाकार, अमेरिका

जहाँ तक मेरी स्मृति है, कोई चित्रकला प्रदर्शनी टैगोर को लेकर इतने सम्पूर्ण ढंग से इसके पहले नहीं हुई है। 'ब्रिदिंग स्टोन' नाम की भी एक छायाचित्रों की प्रदर्शनी है, जो अमूर्त शिल्प में पहली बार भारत भवन में हुई। मैं मानता हूँ कि इस तरह का ये जो अपूर्व आयोजन है, किसी यूनिवर्सिटी के द्वारा विश्व में पहली बार हो रहा है। यह इतिहास की घटना है, जिसे कि दर्ज किया जाना चाहिए।

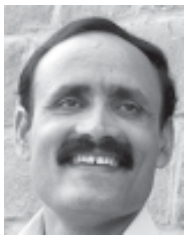

-**लीलाधर मण्डलोई,** कवि-आलोचक तथा सह निदेशक 'विश्वरंग'

मुझे लगता है कि युवाओं से लेकर साहित्य की मशाल को एक बार फिर ले जाने का, उसकी ज्योति को फिर से फैलाने का काम 'विश्वरंग' कर रहा है। यह एक बड़ा सांस्कृतिक अभियान है।

-**पँखुरी सिन्हा,** कवियित्री

कविता और कला के रंगों के बीच सृजन की अलग महक मिली। अलग-अलग स्वादों का, सरोकारों का आनन्द लेने का विरल अवसर। बहुत कुछ सीखने-समझने को भी मिला। टैगोर की एक पूरी विरासत यहाँ उपलब्ध है। सर्जनात्मक वातावरण है। तीस-चालीस देशों से लोग आए हुए हैं। विदेशियों की भी आत्मीयतापूर्ण सहभागिता है। एक विज़नरी काम है ये।

-**प्रांजल धर,** कवि

बहुत खूबसूरत कार्यक्रम है 'विश्वरंग'। विविध कलाओं को इसमें शामिल किया गया है। टैगोर की स्मृति को यह भावभीनी श्रद्धांजलि। मैं रवीन्द्र बाबू के महान सृजन को प्रणति देता हूँ, वीरता और धीरता से भरा व्यक्तित्व था उनका, उसी के अनुरूप यह कार्यक्रम भी है।

-**प्रेमशंकर शुक्ल,** कवि-मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, भारत भवन

अनेक समारोह मैंने देखे और उनका हिस्सा बनने का भी अवसर मिला लेकिन जितना सादगी भरा और जितना खूबसूरत, जितना विशाल रूप 'विश्वरंग' का मेरे सामने है उसे देखकर मैं बहुत अभिभूत हूँ। यहाँ अग्रज गुणी कलाकारों की सोहबत में प्रतिभाशाली युवा कलाकारों को देख मन प्रसन्न हो गया। बहुलता में एकता की भारतीय पहचान यहाँ जीवंत होती नज़र आई।

-**राकेश श्रीवास्तव,** कलाकार

जम्मू से चला, तो अन्दाज़ा नहीं था कि मैं कितने बड़े उत्सव में भाग लेने जा रहा हूँ, लेकिन यहाँ आकर मुझे मालूम पड़ा कि तकरीबन तीस देशों से, पाँच सौ से ज़्यादा साहित्यकार, विद्वान, जुड़े हुए हैं। आयोजकों को मुबारकबाद। यहाँ टैगोर का एक क्लासिक नाटक 'चण्डालिका' देखकर मन प्रसन्न हो गया। कवि, कथाकार, नाटककार, आलोचक और संस्कृतिकर्मियों की एक निराली दुनिया सामने थी।

–**बलजीत सिंह रैना,** साहित्यकार

टैगोर के कलाकर्म का संदर्भ लेते हुए 1942 से 2000 तक की कलायात्रा पर जो व्याख्यान हुए उसे मैं अपने लिए एक कीमती अनुभव मानती हूँ। समकालीन कलाकारों ने इतिहास के बहुत सारे उन अनछुए पहलुओं को जाना जिनके बगैर हमारे वक्त का सांस्कृतिक चेहरा पूरा नहीं होता।

–**सोनल प्रिया सिंह,** कलाकार

भोपाल शहर के लिए एक अनूठी सौगात है 'विश्वरंग'। दुनिया के इतने सारे लोगों को इकट्ठा करना, कला और साहित्य पर लगातार सात दिनों का संवाद करना अपने आप में उपलब्धि है। हमारा जो मुल्क है वह इतना बड़ा है कि इस तरह के आयोजन अगर सौ से भी ज़्यादा हों तब भी कम हैं। और इस तरह के आयोजन यदि व्यक्तिगत तौर पर यूनिवर्सिटी करना शुरू कर रही है तो अन्य संस्थाओं को भी इससे सबक लेकर इस तरह के आयोजन करना चाहिए, जिसमें हमारे देश के कलाकारों और साहित्यकारों का न सिर्फ़ भला होगा बल्कि उनका एक संवाद भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित हो सकेगा।

– **अखिलेश,** चित्रकार

विश्वरंग मेरे लिए न केवल टैगोर बल्कि हिन्दुस्तान की सुंदर संस्कृति को गहराई से जानने का एक ज़रिया बना है। मुझे आश्चर्य होता है कि टैगोर का लिटरेचर सारी दुनिया की मनुष्यता की आवाज़ बन सका है।

– **सेमिदा डेविड,** लेखक, रोमानिया

'विश्वरंग' का माहौल काफी रंगमय है। एक सुबह यहाँ बच्चों की उमड़ती भीड़ को देखकर अच्छा लगा। नई पीढ़ी में कला और संस्कृति का बीजारोपण करने में ऐसे जलसो की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। अच्छा लगा कि 'कथादेश' के अठारह संग्रहों का ऐतिहासिक प्रकाशन हुआ। गर्व कि इस दस्तावेज़ में एक कहानी मेरी भी है।

–**विभा रानी**, कथाकार–रंगकर्मी

देश के महत्वपूर्ण कवियों को एक साथ दो सत्रों में सुनना, ये एक प्रीतिकर अनुभव है। मैं उम्मीद करता हूँ– स्वर, रंग, शब्द इन सभी की जुगलबन्दी निश्चित ही लम्बे समय तक हमें ऊर्जस्वित बनाये रखेगी।

–**निरंजन श्रोत्रिय,** कवि

देशभर के आर्टिस्ट एक प्लेटफॉर्म पर इकट्ठा हुए हैं। यह पहला मौका है जब चित्रकार और शिल्पकार समान मंच पर अपने सृजन और संवाद को लेकर खुले मन से प्रस्तुत हुए है।

–**नीरज अहिरवार,** शिल्पकार

चार नवम्बर से दस नवम्बर 2019 अब वे तिथियाँ हैं जो हिन्दी भाषा की विश्व–प्रतिष्ठा के रूप में सदैव याद की जाएँगी। 'विश्वरंग' ने मध्य प्रदेश ही नहीं बल्कि विश्व–स्तर पर हिन्दी भाषा, साहित्य और सर्जकों का जो सांस्कृतिक, वैचारिक और सर्जनात्मक अनुष्ठान किया, वह संभवतया विश्व में अपने ढंग का प्रथम अनुष्ठान कहा जाएगा और इससे जो तथाकथित लिटरेरी फेस्ट किए जाते हैं, उनके प्रायोजित आयोजनों का अतिक्रमण कर साहित्य और कलाओं की लोक–सार्थकता और लोकप्रियता सिद्ध की है।

'विश्वरंग' भव्यता की झांकी भर न होकर, संवाद, सम्मान और भाषाओं के मध्य पारस्परिक समागम का ऐसा उदाहरण है जिससे उन समस्त संस्थाओं को प्रेरित होना चाहिए, जो हिन्दी को केवल समारोही राजभाष दिवस में सीमित कर, यह भूल जाते हैं कि हिन्दी भाषा ही नहीं, भारतीय लोक–मनीषा की सर्वाधिक सम्पन्न, समृद्ध और सहज भाषा है। इसलिए मैं मानता हूँ कि 'विश्वरंग' हमारी भाषाओं की गरिमामय प्रतिष्ठा का आयोजन रहा है। भारत एक ऐसा भाषावान देश है जहाँ हमारी भाषाएँ जन–समरसता का उत्कृष्ट मानदण्ड बनकर खड़ी हैं। इस कल्पना, संकल्प और क्रियान्वयन के लिए रवीन्द्रनाथ टेगौर विश्वविद्यालय, सी.वी.रमन विश्व विद्यालय आईसेक्ट, वनमाली सृजन पीठ, रवीन्द्रनाथ टेगोर विश्व कला केन्द्र और आपके समस्त समानशील सहयोगी, सहकर्मी और सहधर्मी न केवल बधाई के पात्र हैं बल्कि प्रफुल्ल मन से पूर्ण प्रशस्ति के हकदार हैं।

उम्मीद है कि भविष्य में ऐसे आयोजन से आप भाषा, संस्कृति साहित्य एवं कलाओं का एक नया और अधिक व्यापक विश्वरंग रचेंगे और पूर्वज रचनाकारों के स्मरण के साथ समकालीनों की भूमिका उल्लेखनीय बना सकेंगे।

–**रमेश दवे,** साहित्यकार–शिक्षाविद्

उषाजी का निधन हिन्दी के रंगमहल की एक मेहराब का ज़मींदोज़ हो जाना है। यक़ीनन, औरत की आवाज़ को अपने दर्जनों नाटकों में बुलंद करने वाली एक जांबाज़ क़िरदार को हिन्दुस्तान ने खो दिया है।

बंगभूमि पर हिन्दी की रंग पताका

विनय उपाध्याय

कला की क़ायनात में इंसानी जज़्बातों के बेशुमार रंग भरने वाली उषा गांगुली अब भीनी-सी महक के बीच ठहर गयी याद है। जीवन के रंगमंच पर आख़िरी सांस भरते हुए उन्होंने इस दुनिया-ए-फ़ानी को अलविदा कह दिया है। गये बरस नवंबर में हुआ साहित्य और कलाओं का अंतर्राष्ट्रीय महोत्सव 'विश्वरंग' उनकी रंग यात्रा का अंतिम पड़ाव था, जहाँ वे रंगमंच के नेपथ्य को लेकर अपने बेशकीमती तजुर्बे साझा करने रंग बिरादरी से मुख़ातिब थीं।

स्वाधीन चेतना, जहाँ तयशुदा दायरों और साँचों से बाहर निकलकर अपनी चाहत की दुनिया के द्वार खोले जा सकें...। सपनों और कल्पनाओं के इन्द्रधनुषी रंगों की सोहबत में एक ऐसे सफ़र पर चल पड़ने का जतन हो जिसकी मंज़िलों पर खुद के हस्ताक्षर शाया हों...। उषा गांगुली की कला यात्रा का सच यही था। हमारे वक्ती दौर की एक ऐसी विलक्षण वामा, जिसकी रचनात्मक अभिव्यक्ति में संघर्ष, सुख और आनंद रंगमंच की चौखट पर जाकर जीवन की सार्थकता तलाशते रहे। राजस्थान, उत्तरप्रदेश और बंगाल की आबोहवा का असर उन पर कुछ ऐसा रहा कि नाटक के किताबी सिद्धांतों और कथित रंग-गुरूओं की शरण में जाए बगैर उषा का हुनर अपने संचित संस्कारों और कोशिशों के बीच सँवरता रहा। 'मृच्छकटिकम' से 'मानसी' और 'अन्तर्यात्रा' तक कमोबेश पाँच दशकों में फैला उषा गांगुली का रंगकर्म 'वसंत सेना' के श्रृंगारिक अभिनय से लेकर 'रूदाली' और 'चंडालिका' के विद्रोही स्वरों से बहुत आगे निर्देशकीय कौशल की श्रेष्ठता साबित करता रहा। नाट्य आलेख और अनुवादों की लंबी फेहरिस्त उनके बौद्धिक श्रम और रंग निष्ठा को उजागर करती रही। इसी बीच कोशिशों के पाँव सम्मान और शोहरत के शिखरों तक जा पहुँचे। केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी दिल्ली का पुरस्कार और भोपाल की रवीन्द्रनाथ टैगोर युनिव्हर्सिटी द्वारा डी.लिट की मानद उपाधि का सम्मान उनकी क़ामयाबी पर कुछ ऐसी ही मोहरें थीं। दिलचस्प यह कि हिन्दी रंगकर्म की मशाल उन्होंने सत्तर पार की उम्र में भी रौशन रखी। 'रंगकर्मी' नाम से कला का कुटुंब कोलकाता में उनकी विरासत के भविष्य का विश्वास बनकर उभरा। हार न मानकर, नई रार ठानकर उषा का कारवाँ बदस्तूर जारी रहा। सिने संसार ने भी उन्हें आवाज़ें लगाई, उषाजी ने उन्हें अनसुना भी नहीं किया लेकिन जो

और जितना किया अपनी शर्तों पर किया। गाथा, पार और रेनकोट जैसी फिल्मों से जुड़ते हुए भी वे रंगमंच की चौखट पर अपने कदम साधे रहीं। उनका मानना था कि थियेटर एक सामूहिक कला है। यह माध्यम न तो अकेले डायरेक्टर का और न एक्टर का है। वे कहती– ''मैंने हमेशा नाटक को एक सामूहिक उर्जा के रूप में ही जिया और देखा।''

भोपाल से उनकी गहरी सांस्कृतिक सोहबतें रही। यहाँ की रंग बिरादरी से लेकर साहित्यिक–शैक्षणिक और कई सामाजिक शख्सियतों और संगठनों से उनका दोस्ताना नाता रहा। भारत भवन, म.प्र. नाट्य विद्यालय, जनजातीय संग्रहालय तथा टैगोर विश्व कला संस्कृति केन्द्र के आमंत्रण पर वे राजधानी आती रहीं। टैगोर की जयंती पर आयोजित 'प्रणति पर्व' में वे टैगोर के नाट्य अवदान पर व्याख्यान देने और 'गीतांजलि' नृत्य नाटिका का अवलोकन करने विशेष रूप से उपस्थित रहीं। रंगकर्मी के.जी. त्रिवेदी ने जब महाश्वेता देवी की कृति 'रूदाली' के उषा गांगुली द्वारा हिन्दी में रूपांतरित नाटक का मंचन 'त्रिकर्षी' के लिए किया तो उषाजी इसके प्रभावी मंचन की मन–भर प्रशंसा करती रहीं। कालिदास के 'मेघदूतम' को जब मंच पर उतारने की बाद आई तो उन्होंने भोपाल से संस्कृत की आचार्य संगीता गुंदेचा को सहयोग के लिए पुकारा। रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्व विद्यालय और हमारे संबद्ध संस्थानों टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र, वनमाली सृजन पीठ, रंग संवाद तथा आईसेक्ट पब्लिकेशन एवं आईसेक्ट स्टुडियो का रचनात्मक सिलसिला बना और इस सक्रियता के चलते वे कई आयोजनों में कोलकाता से भोपाल और अन्य शहरों में शिरकत करने आती रहीं। कलागुरू रवीन्द्रनाथ टैगोर की सांस्कृतिक विरासत और उनके योगदान को लेकर हमारी अनेक भावी योजनाओं में उनकी सलाह लगातार बनी रहीं। वे इस इसरार से भरी रहीं कि भोपाल के हम कुछ संस्कृतिकर्मी उनकी अगुवाई में शांति निकेतन जाए। देश–दुनिया के हालात ठीक होते तो शायद इस पावस काल में यह मुमकिन भी होता।

मेरी पहली मुलाक़ात उषाजी से भारत भवन की अंतरंग शाला में हुई थी। वे नाट्य मंचन के लिए अपने समूह 'रंगकर्मी' के साथ थी और मैं बतौर उद्घोषक औपचारिक संवाद के लिए उनसे पेश आया। फिर इस प्रस्तुति की समीक्षा अखबार के लिए लिखी। ये वो प्रस्थान बिंदु था, जहां से उषा गांगुली और उनके काम को गहरे में देखने की ललक जागी। एक मुद्दत बाद जब टैगोर कला केन्द्र का ज़िम्मा संभालते हुए उन्हें भोपाल आने के लिए पुकारा तो उन्होंने मेरी आवाज़ को पहचानते हुए सहर्ष हामी भरी। वे तयशुदा प्रायोजन से आई और फिर लगातार आती रही। स्नेह और अपनापे का यह तार कुछ ऐसे जुड़ा कि 'दीदी' के संबोधन के साथ यह आपसदारी गहराती गई। मृत्यु से एक पखवाड़ा पहले ही उन्होंने अपने छोटे भाई को खोया। अवसाद में थी। फ़िक्र इस महामारी में उन्हें कलाकारों की भी रही।

पिछले दिनों एक लंबे साक्षात्कार में उन्होंने कहा था कि थियेटर ने मुझे विशाल सामाजिक सरोकार दिया। एक ऐसे व्यक्ति के रूप में मेरा निर्माण हुआ, जिसने जीवन को देखने का एक अलग नज़रिया पाया और मैं इस विराट दुनिया को बहुत पास से देख सकीं, ख़ासकर इस देश की औरत की रूह को छूने की मैंने कोशिश की। अपनी इसी ज़िद और जिज्ञासा के चलते उषाजी ने ज़ोहरा सहगल, सूरज बाई खांडेकर, केतुकी दत्ता और सावित्री जैसी जुनूनी कलाकारों के सपनों और दुश्वारियों को नज़दीक जाकर देखा–पढ़ा और 'भारतीय रंग शिखर की महिलाएं' नाम से यह दस्तावेज़ पेश किए। यह शोध ग्रंथ बहुत चर्चा में आया। वे बहुत संतोष से भर कर कहती कि वे एक ऐसे थियेटर को साकार करने में सफल रही जिसमें विदेशी नकल से परे उनके अपने वतन की आत्मा का दर्शन हो। वे इस बात का भी सुख जताती कि उन्होंने सम्मानों और पुरस्कारों से जुड़ी सफलता की चिंता किए बगैर कुछ सार्थक करने की कोशिश की। एक सवाल के जवाब में उन्होंने कुछ ठहर कर कहा था– ''मैं अब ज़िंदगी के उस पड़ाव पर हूँ जहाँ अब बहुत ज़्यादा दिन बाकी नहीं। आंख मूंदने के साथ मैं बहुत ही सुखी आत्मा की तरह इस (भुवन) संसार से विदा लूंगी।''

उषा गांगुली जैसी उद्भट रंगकर्मी के जीवन और रंगमंच की दास्तान को हदों में बांधना उन्हें कम आंकना ही होगा। उन्होंने ज़िंदगी का हर लम्हा बामकसद जिया। रंगभूमि पर उषा की बिछलती किरणों की निशानियाँ हमेशा उजली रहेंगी...आमीन।

शायरी उनके लिये थी या वे शायरी के लिए, कहना मुश्किल है। शेर उन पर खुदा की रहमत बनकर उतरते थे। वे जिस मुशायरे में होते थे वो मुशायरा उनका 'वन मेन शो' हो जाता था। ... विश्वरंग का वो मुशायरा भी तो कुछ ऐसा ही था।

दोस्ताना ज़िंदगी से, मौत से यारी रखो

बद्र वास्ती

विश्वरंग की दास्तान जब-जब बयां की जायेगी, उसमें शिरकत करने वाले कलाकारों के ज़िक्र के बिना वह अधूरी रहेगी। इस दास्तान के कुछ क़िरदार अपनी कला के रंग बिखेर कर पर्दे के पीछे जा चुके हैं। अब उनकी यादें बाकी हैं। विश्वरंग के प्रमुख रंगों में एक रंग था- अंतरराष्ट्रीय मुशायरा। उस मुशायरे का आकर्षण थे राहत इंदौरी।

मुशायरे के लिये शायरों की फेहरिस्त बना लेना जितना आसान है उससे कहीं ज्यादा मुश्किल उन सबको एक तारीख़ पर एक जगह जमा कर लेना। वजह... महीनों पहले मुशायरों की बुकिंग। बहरहाल मशहूर शायरा नुसरत मेहदी की कोशिशें भी इस मशक्कत को आसान बनाती रही। वसीम बरेलवी साहब, राहत इंदौरी साहब और शीन काफ़ निज़ाम साहब को हर हाल में बुलाना है बस...। राहत इंदौरी से जब उन्होंने फोन पर बात की तो राहत साहब ने अपने बेबाक अंदाज़ में हंसते हुए कहा कि मैं आ तो जाऊँगा पर ऐसा ना हो कि आपके लिए कोई परेशानी खड़ी हो जाए। इस तरह राहत इंदौरी ने 'विश्वरंग' के अंतरराष्ट्रीय मुशायरे में अपनी शिरकत दर्ज कराई।

यह भी इत्तेफाक है कि राहत इंदौरी का भोपाल का यह आखिरी बड़ा मुशायरा था। मैं खुद को खुशनसीब समझता हूँ कि 'विश्वरंग' के कुछ आयोजनों में मेरी भी भूमिका रही। लेकिन अंतरराष्ट्रीय मुशायरे में मेरी शिरकत और उसका संचालन सुखद संयोग मानता हूँ। इसलिए कि उस मंच पर अपने वक्त के मुशायरों का बेताज बादशाह राहत इंदौरी भी था। वह राहत इंदौरी, जिन्हें मैंने अस्सी के दशक में अपनी शायरी के शुरूआती दौर में सैफिया कॉलेज के मुशायरों में मंच के सामने दरी पर बैठकर सुना। इक़बाल मैदान और रवीन्द्र भवन के मुक्ताकाश मंचों पर मुशायरे लूटता हुआ देखा।

अंतरराष्ट्रीय मुशायरा शुरू होने से पहले जब उन्होंने मुझसे कहा कि मुझे जल्दी पढ़वा देना, तो खुद उनके कहने के बावजूद ना तो यक़ीन आया और ना हिम्मत हुई कि एक ऐसा शायर जिसके पढ़ने के बाद मुशायरा ख़त्म हो जाता है, उसे कैसे जल्दी पढ़वाया जाये लेकिन उनके कहने के बाद हम मजबूर थे क्योंकि वाकई उनकी तबीयत बहुत खराब थी। शुरूआत में कुछ शायरों को कलाम सुनाने की दावत देने के बाद मेरे पास वह अल्फाज़ नहीं थे कि जिनके ज़रिये मैं उनसे कलाम सुनाने की दरख्वास्त करता। मैंने सिर्फ़ इशारा किया और मेरा काम शायरी सुनने के शौकीन भोपाल वालों और रवीन्द्रनाथ टैगोर यूनिवर्सिटी के युवा छात्रों

ने आसान कर दिया। तालियों और खुशी के शोर के बीच राहत साहब माइक पर आ गये। मुझे शेर याद आया– 'मैं तेरा नाम ना लूँ फिर भी लोग पहचानें के आप आपका तआरूफ हवा बहार की है।' उनकी तबीयत की वजह से किसी ने कहा भी कि माइक उनकी कुर्सी के सामने लगा दिया जाए लेकिन माइक पर आ कर उन्होंने अपनी तबीयत का खुद मज़ाक उड़ाते हुए शेर पढ़ा– 'अफवाह थी के मेरी तबीयत खराब है, लोगों ने पूछ–पूछ के बीमार कर दिया।' फिर उसके बाद राहत साहब अपने बेबाक अंदाज़ और खरी शायरी से मुशायरे के परचम को आसमान तक पहुँचा कर स्टेज से उतर कर चले गये, क्योंकि उन्हें आराम की ज़रूरत थी। अपनी बहुत कम वक्त की शिरकत के बावजूद राहत इंदौरी उस मुशायरे को कामयाब और यादगार बना गये। ये सच है कि वह जिस मुशायरे में होते थे वह मुशायरा उनका 'वन मेन शो' हो जाता था।

दो वाकेआत मुझे याद है। नब्बे के दशक की बात है। एक दिन मैं अपने उस्ताद मशहूर शायर इशरत कादरी के पास गया तो उन्होंने कहा राहत इंदौरी से मिलने चलना है। उनका फोन आया था, वह होटल किंग्स में ठहरे हैं। मैं इशरत साहब के साथ होटल पहुँचा तो इशरत साहब ने मेरा तआरूफ राहत साहब से कराया वह बहुत मुहब्बत से पेश आए और कहा कि तुमने बहुत सही उस्ताद को चुना है। अब इनका दामन छोड़ना नहीं। फिर कुछ बातचीत के बाद राहत साहब ने कहा कि इशरत भाई, मेरी किताब आ रही है। उसके लिए आपको कुछ लिखना है। तो इशरत भाई ने कहा कि भई मैं क्या लिखूंगा? तुम तो खुद इस वक्त उरूज पर हो, तुम्हें दुनिया जानती है। इस पर राहत साहब का जवाब था कि इशरत कादरी मेरे लिये सिर्फ यह लिख दे कि मैं राहत इंदौरी को जानता हूँ इतना ही मेरे लिये काफी होगा। यह अपने सीनियर्स और बड़ों के लिये उनका अदब था। यहां उन्हीं का एक शेर मुझे याद आता है– 'कोई भी कर ना सका उसके क़द का अंदाज़ा, वो आसमां है मगर सर झुकाए फिरता है।'

टी.टी.टी.आई. ऑडिटोरियम में एक मुशायरा हुआ। राहत साहब उसमें शामिल थे। मुझे भी कलाम पढ़ने का मौका मिला। मैंने ग़ज़ल पढ़ी, जिसका मतला था– 'फल दरख़्तों से गिरे थे आँधियों में थाल भर, मेरे हिस्से में मगर आये नहीं रूमाल भर।' जाल, डाल, चाल वगैरह उसके काफिये हैं। मुशायरा ख़त्म होने के बाद मैं उनको सलाम करने और उनसे हाथ मिलाने उनके क़रीब गया तो उन्होंने बेसाख़्ता कहा कि भाई तुम्हारी ग़ज़ल में एक क़ाफ़िया 'साल भर' छूट गया है, उसे भी शामिल करो। मुशायरे में कई शायरों ने कलाम पढ़ा था। राहत जैसे दुनिया के नामवर शायर को क्या पड़ी थी कि वह एक जूनियर शायर को इतने ग़ौर से सुने। उसके शेर याद रखे और उसे मशवरा भी दे। लेकिन राहत साहब की अपने बाद आने वाले शायरों से मुहब्बत और उनके लिहाज़ की यह एक मिसाल हैं।

कई लोगों को शायद यह मालूम नहीं होगा कि डा. राहत इंदौरी एक पेंटर भी थे और उन्होंने 'उर्दू मुशायरे' विषय पर पी.एच.डी. की उपाधि हासिल की थी। भोपाल के बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय से उर्दू में एम.ए. किया। वे देवी अहिल्या विवि इंदौर में उर्दू के प्रोफेसर भी रहे। मशहूर अदीब नदीम सिद्दीकी के मुताबिक राहत इंदौरी ने पहला मुशायरा देवास में पढ़ा था और उसमें पढ़ने के लिए उनकी माँ ने सिफारिश की थी।

उनके बेटे ने उनकी आखिरी ग़ज़ल शेयर की उसमें उनके आख़िरी लम्हों की आहट सुनाई देती है– ''ख़ामोशी ओढ़ के सोई हैं मस्ज़िदें सारी, किसी की मौत का ऐलान भी नहीं होता। वबा ने काश हमें भी बुला लिया होता, तो हम पे मौत का अहसान भी नहीं होता।'' इस तरह ज़िंदगी में लाखों लोगों की निगाहों का मरकज़ राहत इंदौरी 11 अगस्त 2020 को हमसे जुदा हुए। उनका जन्म 1950 में हुआ था। वह दिल खोलकर जिये और दिलेरी के साथ मौत का सामना किया, क्योंकि उन्होंने कहा था– 'एक ही नदी के हैं यह दो किनारे दोस्तों, दोस्ताना ज़िंदगी से, मौत से यारी रखो।'

सुषम की शख़्सियत के बेशुमार रंग रहे। लेखन और अध्यापन से इतर वे एक बेहतरीन अभिनेत्री भी रही। भारत की लगभग सभी पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ छपती रहीं। विश्व हिन्दी सम्मेलन से लेकर भोपाल में आयोजित साहित्य एवं कलाओं के अंतर्राष्ट्रीय महोत्सव 'विश्वरंग' तक उनकी शिरकत और वैचारिक हस्तक्षेप उल्लेखनीय रहे हैं।

बदल रही है स्त्री की दुनिया

आदित्य

हवन, गाथा अमर बेल की और मोरचे जैसे लोकप्रिय उपन्यासों की रचनाकार सुषम बेदी के निधन की सुर्ख़ी ने बहुत से उन पाठकों को निराश किया जिनके मन में प्रवासी भारतीय लेखकों को पढ़ने की उत्कंठा रही है। सुषम बेदी भारत की सरहद पार के मुल्क में बसी एक ऐसी ही लेखिका रही जिनके हिस्से हिन्दी पाठकों का गहरा आदर और अनुराग रहा। वे कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयार्क में हिन्दी भाषा और साहित्य की प्राध्यापक रहीं। फ़ीरोज़पुर पंजाब की सरज़मीं पर उनका जन्म हुआ। वहीं लड़कपन बीता। दिल्ली में उच्चशिक्षा प्राप्त की। एम.ए., एम.फिल. और बाद में 'हिन्दी नाट्य प्रयोग के संदर्भ में हिन्दी भाषा का भूमंडलीकरण' विषय पर पी.एच.डी.। सुषम की शख़्सियत के बेशुमार रंग रहे। अध्यापन और लेखन से इतर वे एक बेहतरीन अभिनेत्री भी रही, ये अलहदा है कि अभिनय की प्रतिभा परवान नहीं चढ़ पायी और इसका मलाल भी सुषम बेदी को रहा। भारत की लगभग सभी पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ छपती रहीं। विश्व हिन्दी सम्मेलन से लेकर भोपाल में आयोजित साहित्य एवं कलाओं के अंतर्राष्ट्रीय महोत्सव 'विश्वरंग' तक उनकी शिरकत और वैचारिक हस्तक्षेप उल्लेखनीय रहे हैं।

सुषमजी लेखन के प्रति अपने रुझान और ज़िम्मेदारियों को लेकर बहुत साफ़ नज़रिया रखती थी। उनका मानना था कि कला की कोई भी विधा अच्छी और बुरी नहीं होती। लेकिन मेरे मन के क़रीब लेखन इसलिए हुआ क्योंकि मैं जब अमेरिका गई तो ख़ासतौर से वक्त बहुत मिलता था। लेखन के रुप में मेरे पास अभिव्यक्ति का एक ही माध्यम रह गया। शुरु के वर्षों में नाटक मेरे पास था नहीं और तब तक मुझे लेखन भी अच्छा लगता था अभिनय भी। वहाँ जाकर मेरा लेखन बच गया। लेखन घर की चारदीवारी में होता है। वक्त मिलने लगा तो मैं आराम से बैठ कर लेखन करने लगी। लेकिन जब मैं भारत में थी तो वक्त ही नहीं मिलता था। सोशल इंटररेक्शन यहाँ पर ज्यादा होती है। ख़ासकर जब आपकी शादी हो जाती है तो ससुराल वालों के साथ भी वक्त बिताना होता है और घरवालों के साथ भी वक्त बिताना होता है और घरवालों के साथ भी रहना होता है। अपने घर को भी देखना होता है। तो कभी वक्त ही नहीं मिलता है। विदेश जाकर मैं इन सब चीज़ों से बच गई। जो लेखन मुझसे बिछुड़ा हुआ था, यहाँ पर वह फिर से मेरे क़रीब आ गया। जैसे

कला की कोई भी विधा अच्छी और बुरी नहीं होती। लेकिन मेरे मन के क़रीब लेखन इसलिए हुआ क्योंकि अमेरिका में मुझे वक्त बहुत मिलता था। लेखन के रुप में मेरे पास अभिव्यक्ति का एक ही माध्यम रह गया। जो लेखन मुझसे बिछुड़ा हुआ था, यहाँ पर वह फिर से मेरे क़रीब आ गया।

यहाँ आने से पहले भी एक चुनाव था। एक फिल्म में मुझे रोल मिल रहा था लेकिन मुझे यहां भी आना था इसलिए मैंने उसके लिए ना कर दिया। जब चुनाव की बात होती है तो मैं लेखन को चुनती हूँ, अपने अभिनय को कम। स्त्री की बदलती दुनिया के बारे में हिन्दी की शोधार्थी मुन्नी गुप्ता को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा था कि जो बदलाव आया है, बहुत ही सकारात्मक आया है। बहुत अच्छा हो रहा है कि लड़कियाँ आज पढ़ रही हैं। जितनी भी लड़कियाँ हैं नौकरियों में जा रही है। काम कर रही है और अपने विकास के बारे में सोचती है। वह क्या चाहती हैं इसके बारे में भी सजग हैं तो हमारे समय से लेकर अभी तक बहुत सारे बदलाव आए हैं। ख़ासकर भारत के समाज में मैं देखती हूँ शहरों में रहने वाली लड़कियाँ में फ़र्क आ गया है। एक तो शिक्षा के माध्यम से हो रहा है। दूसरा मीडिया भी सक्रिय हैं। सभी वर्ग की महिलाएँ अपने वक्त में नया सोच और रच रही हैं। मीडिया की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो गयी है। अमेरिका में भी मीडिया के माध्यम से ही पता चलता है कि किसके साथ क्या अत्याचार हुआ है।

जहां तक हिंदी की स्थिति की बात है, मुझे हिंदी की स्थिति बेहतर होती हुई जान पड़ती है। भारत से बाहर बहुत सारे विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जा रही है। इसके अलावा जब से 9/11 हुआ तब से अमेरिकी सरकार ने काफी पैसा खर्च किया है जो 'लेस कॉमन टॉक लैंग्वेज़' हैं मतलब फ्रेंच, जर्मन, चाइनीज ख़ूब पढ़ाई जाती हैं लेकिन एशिया की कई भाषाएँ जो वहाँ नहीं पढ़ाई जातीं उसे लैस कॉमन टॉक लैंग्वेज कहा जाता है। उसी में आती है हिंदी, उर्दू। उनको भी पढ़ाने के लिए पैसा सरकार के द्वारा दिया जा रहा है।

हिन्दी का विश्व भाषा बनना कोई आसान बात नहीं है। विश्व भाषा बनाने के लिए 2007 में न्यूयार्क में एक विश्व हिंदी सम्मेलन हुआ था और उसका मकसद यही था कि यूएन में हिंदी का इस्तेमाल हो। बात यह है कि ऐसा होना बहुत मुश्किल है। मुश्किल इसलिए है कि भारत में जो अंग्रेज़ी बोलते हैं वह बिना हिंदी को जाने काम चला सकते हैं। अगर बिना हिंदी जाने उनका काम चलता है तो बाहर के लोग इतनी मेहनत क्यों करें? चीन में उनका काम नहीं चलता, जापान में उनका नाम काम नहीं चलता तो वह चीनी भी सीखेंगे, जापानी भी सीखेंगे, लेकिन भारत में काम चल जाता है। जब तक भारत में हम हिंदी को प्रधानता नहीं देंगे और उसे मुख्य भाषा का दर्जा नहीं देंगे और हर तरह से उसका भाषा में इस्तेमाल नहीं होगा, तो कितनी भी कोशिश करें, उसकी स्वीकृति नहीं मिलेगी।

'विश्वरंग' में प्रवासी भारतीय लेखकों के बीच सुषम बेदी

रमाकान्त के भीतर सच्चे कलाकार की लगन, दूरदृष्टि, प्रज्ञा और गहरी समझ शुरू से ही रही। रमा के लिये सभी कलाएँ ख़ुद को समझने का रास्ता खोलती हुई थीं। इस क़दर निश्छल और हमेशा मदद के लिये तैयार कुछ कम ही कलाकार मिलते हैं। कलाकार वैसे भी कम ही होते हैं।

रमाकान्त होने का अर्थ

अखिलेश

एक दोपहर रमाकान्त यह चित्र लेकर आया। मैंने देखा और ज़ाहिर है चित्र उम्दा था। मैंने पूछा किसका है? मैंने बनाया कहकर उसने मेरे हाथ में थमा दिया। बेतक्कलुफ़ी से कहा रेणु (रेणु रमाकान्त की पत्नी हैं) माँडना बना रही थीं, बैठे-बैठे मैंने भी रंग उठाया और यह चित्र बना, तुम्हें देने आ गया। चित्र देखकर ऐसा नहीं लगता कि किसी नौसिखिया का बनाया चित्र है। चित्र का रंग संयोजन, रंग समर्पण, approach, reandring आदि सभी किसी सधे हुए हाथों का सा है। चित्र देखकर उसकी गम्भीरता का अहसास दर्शक को हो जाता है। चित्र बहुत धैर्य और लगन से बनाया गया था। मैंने देखा और तारीफ़ की। रमा ने उस पर ध्यान न देते हुए कहा ये तुम्हें देने आया था। मैंने कहा तुम अपने घर या गुरुकुल में टाँगो ये एक अच्छा चित्र है। नहीं यार, इसकी जगह तुम्हारा घर है। मैंने चित्र बनाकर देखा बस इतना ही काफ़ी है। अब मैं नहीं चाहता कि यह मेरे सामने रहे।

रमाकान्त में यह समझ थी कि अन्य कलाओं का महत्व क्या है? चित्र देखने की समझ भी गहरी थी। मेरे घर आने वाले अनेक युवा चित्रकारों के चित्र देखकर या कई प्रदर्शनियों में उन्हीं चित्रों की तरफ इशारा करता था जिसमें चित्रात्मकता पूरी तरह से नज़र आती हो। चापलूसों की तरह हर चित्र की तारीफ वह करता ही नहीं था। उसका यह गुण मुझे प्रभावित करता रहा। मेरा अपना अनुभव है कि ज़्यादातर संगीतकार चित्रकला के बारे में लगभग कुछ समझ नहीं रखते। लोग visually illiterate होते हैं। रमाकान्त को ईश्वर ने देखने का वरदान दिया हुआ था। रमा अपना चित्र नहीं ले गया और तब से यह चित्र मेरे स्टूडियो की शोभा बढ़ा रहा है। रमाकान्त के भीतर सच्चे कलाकार की लगन, दूरदृष्टि, प्रज्ञा और गहरी समझ शुरू से ही रही। रमा के लिये सभी कलाएँ ख़ुद को समझने का रास्ता खोलती हुई थीं। रमाकान्त को कभी मैंने दूसरे कलाकारों से ईर्ष्या के दो बोल कहते हुए कभी नहीं पाया। दूसरे कलाकार की आलोचना का आधार हमेशा कला की अभिव्यक्ति ही रहा। इस क़दर निश्छल और हमेशा मदद के लिये तैयार कुछ कम ही कलाकार

चापलूसों की तरह हर चित्र की तारीफ़ वह करता ही नहीं था। उसका यह गुण मुझे प्रभावित करता रहा। मेरा अपना अनुभव है कि ज़्यादातर संगीतकार चित्रकला के बारे में लगभग कुछ समझ नहीं रखते। लोग विजुअली इललिट्रेट होते हैं। रमाकान्त को ईश्वर ने देखने का वरदान दिया हुआ था।

मिलते हैं। कलाकार वैसे भी कम ही होते हैं। भारत भवन में डागर सप्तक के दौरान किसी मोड़ पर रमा से मुलाक़ात हुई। उन दिनों दोनों भाई उमाकान्त और रमाकान्त ने भारत भवन के अनहद प्रभाग में आना–जाना शुरू किया था और हम लोग अक्सर गच्चा खा जाते उमाकान्त और रमाकान्त को पहचानने में। एक कारण और था रमा और उमा, उमा और रमा कहने पर भी उसी तरह मिल लेते। हम सभी चकराये रहते कि कौन उमा कौन रमा। फिर मैंने ध्यान दिया कि वे आपस में शशि और विमल सम्बोधन से बात करते हैं। इस तरह मैंने विमल और शशि को पहचाना। विमल/रमाकान्त शुरू से ही संगीत में डूबा हुआ शख़्स था। रमाकान्त होने के अर्थ अनेक हैं उनमें से कुछ का ज़िक्र यहाँ किया जाना ज़रूरी है।

रमाकान्त होने का अर्थ है कि संगीत को समर्पित एक ऐसा व्यक्ति जो अपने प्रति लापरवाह हो। ● कि ध्रुपद को अकेले दम पर चारदीवारी से निकाल कर मुक्त आकाश में विचरण के लिए बाध्य कर दे। ● कि ध्रुपद में प्रयोग किया जा सके। ● कि अस्ताद देबू, चन्द्रलेखा, कुमुदिनी लाखिया के नृत्य के साथ ध्रुपद के स्वरूप को अक्षत रखते हुए सफल प्रस्तुतियाँ की जा सकें। ● कि ध्रुपद में गायी जा सकती हैं हिन्दी की कविताएँ जिसमें पद्माकर, निराला, महादेवी वर्मा, तुलसीदास, केशव, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रा नन्दन पंत आदि कवि शामिल हों। ● कि ध्रुपद अन्य कला विधाओं के साथ टकराए। ● कि महिलाओं को ध्रुपद सिखाया जा सकता है। ● कि ध्रुपद में गायक और पखावज की लड़ंत–भिड़ंत के बजाय पखावज की अपनी एकल प्रस्तुति दी जा सकती है। ● कि ध्रुपद में सबद और णमोकार गाया जा सकता है। ● कि ध्रुपद गैलेरी में मेरी प्रदर्शनी के बीच गाया जा सके। ● कि ध्रुपद को देश–विदेश में लोकप्रिय बनाया जा सके। ● मलाडी ब्रदर्स के साथ ध्रुपद गाया जा सके। ● रमाकान्त होने का अर्थ यह भी है कि उदारवादी होकर अपने शिष्यों को वह सब बाँटा जा सके जो उस्ताद से हासिल किया। ● कि ध्रुपद के सिवा कुछ और सोचने का समय न रहे।

रमाकान्त का असमय जाना हमारे देश की अपूरणीय क्षति है। संगीत की दुनिया एक उम्दा गायक से मरहूम हुयी।

विश्वरंग की एक सुबह मंगलाचरण : ध्रुपद के नाद स्वर में लीन रमाकांत गुंदेचा अपने अग्रज उमाकांत के साथ

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, 4-10 नवंबर, भोपाल

सोमवार, 4 नवंबर 2019

सुबह 10 बजे, रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, शाम 5 बजे रवीन्द्र भवन

शब्द, रंग, ध्वनि और दृश्य-टैगोर की विरासत का पुनरावलोकन

सुबह 10.00 बजे	:	शारदा सभागार, रवींद्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय **मंगलाचरण** : दो तारा पर रवीन्द्र संगीत – शुभव्रत सेन
सुबह 10.30 बजे	:	आर्टिस्ट मीट एवं टैगोर की चित्रकला पर प्रेजेंटेशन, अशोक भौमिक द्वारा, रवींद्र नाथ टैगोर विश्वविद्यालय परिसर
सायं 5.00 बजे	:	**रवीन्द्र भवन** : पूर्वरंग-गुदुम बाजा, कबीर गायन (दयाराम सारोलिया), चित्र प्रदर्शनी
सायं 6.00 बजे	:	**माननीय राज्यपाल म.प्र. श्री लालजी टंडन** द्वारा कला उत्सव का शुभारंभ प्रभु जोशी द्वारा चित्रित रवीन्द्रनाथ टैगोर के पोर्ट्रेट का लोकार्पण नेशनल पेंटिंग प्रदर्शनी कैटलॉग का लोकार्पण फेस्टिवल कैटलॉग का लोकार्पण अतिथियों के वक्तव्य
सायं 7.00 बजे	:	**रवीन्द्र भवन** : टैगोर की कविताओं पर आधारित संगीत-नृत्य रूपक – गीतांजलि **निर्देशन-संयोजन** : श्वेता देवेन्द्र – क्षमा मालवीय

शुभारंभ सत्र के अतिथि

मुख्य अतिथि	:	**माननीय श्री लालजी टंडन**, राज्यपाल मध्यप्रदेश
विशेष उपस्थिति	:	**उषा गांगुली**, रंगकर्मी-कला विदुषी **संतोष चौबे**, निदेशक, टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव **लीलाधर मंडलोई**, सहनिदेशक, टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव **मुकेश वर्मा**, संपादक, कथादेश **सिद्धार्थ चतुर्वेदी**, सहनिदेशक, टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव **डॉ. अशोक कुमार ग्वाल**, कुलपति, रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय
संचालन	:	**विनय उपाध्याय**, निदेशक टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केंद्र

उत्सव के छंद

प्रदीप नवीन

देते हुए शुभकामना,
बहुत हो रहा हर्ष
विश्व रंग का आयोजन
क्या अच्छा निष्कर्ष।

कौन विरासत में देखे?
ध्वनि, दृश्य और रंग
पर टैगोर के शब्दों को
मिला सभी का संग।

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, 4-10 नवंबर, भोपाल

मंगलवार, 5 नवंबर 2019

सुबह 10 बजे, भारत भवन, भोपाल, शाम 6 बजे रवीन्द्र भवन

सुबह 10.00 बजे	:	**मंगलाचरण** : सरोद वादन – अमीर खान
सुबह 10.15 बजे	:	**राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी का उद्घाटन** नेशनल आर्ट एक्जिबिशन, रबींद्र कला प्रदर्शनी ब्रीदिंग स्टोन : लीलाधर मंडलोई के अमूर्त छाया चित्रों की प्रदर्शनी, भारत भवन प्रख्यात चित्रकार प्रभाकर कोल्टे द्वारा तीनों प्रदर्शनियों का उद्घाटन
सुबह 10.30 – 2.45 बजे	:	**नेशनल सेमीनार ऑन आर्ट्स इन इंडिया** : अशोक भौमिक द्वारा संयोजित
सुबह 10.30 – 11.15 बजे	:	सेमीनार : प्रथम सत्र - भारतीय चित्रकला (1850 से 1930) स्नेहा रानी–वाराणसी, सुमन सिंह गाजियाबाद, दिलीप शर्मा–दिल्ली
सुबह 11.15 – 12.00 बजे	:	दूसरा सत्र - भारतीय चित्रकला (1931 से 1941) भूप्रेंद्र कुमार अस्थाना–लखनऊ, हिना यादव–वाराणसी, डॉ. अरविन्द कुमार सिंहानिया–गाजियाबाद
सुबह 12.30 – 1.15 बजे	:	तीसरा सत्र - भारतीय चित्रकला (1942 से 1946) विजेन्द्र विज–दिल्ली, मंजू प्रसाद–लखनऊ, रविन्द्र दास–गाजियाबाद
दोपहर 1.15 – 2.00 बजे		चौथा सत्र - भारतीय चित्रकला (1946 से 2000) डॉ. मृदुला सिन्हा–वाराणसी, रविन्द्र त्रिपाठी–गाज़ियाबाद, डॉ. अवधेश मिश्रा–लखनऊ
दोपहर 2.00 – 2.45 बजे		पाँचवाँ सत्र - भारतीय चित्रकला (2000 से 2019) नीरज सक्सेना–दिल्ली, विनय कुमार–पटना, **समापन** मनमोहन खन्ना सरल–मुंबई **भोजन : 2.45 – 3.45 बजे**
सायं 6.00 से 6.45	:	**पूर्वरंग** – रवीन्द्र संगीत : वृन्दगान – रेनी वृन्द, रवींद्र भवन संयोजन–रीना सिन्हा
सायं 7.00 बजे	:	**रिफ्लेक्शन** – गीत एवं नृत्य प्रदर्शन (रवींद्र संगीत एवं हिंदुस्तानी फिल्म संगीत पर आधारित) पीलू भट्टाचार्य और साथी, कोलकाता

गाँधी और टैगोर में
दिखे लोक का तंत्र
इसी विरासत का सारे
जपते रहते मंत्र।

हुई प्रदर्शित वह कला
करे राष्ट्र सम्मान
सबने अपने चित्रों का
खूब किया गुणगान।

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, 4-10 नवंबर, भोपाल

बुधवार, 6 नवंबर 2019

सुबह 10 बजे, भारत भवन, भोपाल, शाम 6 बजे रवीन्द्र भवन

सुबह 10.00 बजे	:	मंगलाचरण : वायोलीन वादन – अमित मलिक, भारत भवन
सुबह 10.30 से 2.00	:	हिंदी कवियों का कविता पाठ
सुबह 10.30 से 12.00	:	सत्र-1 ऋतुराज (अध्यक्ष), राजेश जोशी, जितेन्द्र श्रीवास्तव, मदन कश्यप, महेन्द्र गगन, लीलाधर मंडलोई, नीलेश रघुवंशी, पंकज राग, मंगलेश डबराल, अनामिका संचालन एवं कविता पाठ–कुमार अनुपम
दोपहर 12.30 से 2.00	:	सत्र-2 नरेश सक्सेना (अध्यक्ष), अरुण कमल, नवल शुक्ल, विनोद पदरज, बलराम गुमास्ता, विष्णु नागर, संतोष चौबे, प्रेमशंकर शुक्ल, पंखुरी सिन्हा, डॉ. आरती प्रांजल धर–संचालन एवं कविता पाठ
सायं 4.00 से 5.30	:	रंगमंच का नेपथ्य : संवाद स्वराज भवन – राजेन्द्र गुप्ता, उषा गांगुली, विनय उपाध्याय, सुदीप सोहनी,
सायं 6.00 से 6.45	:	पूर्वरंग – रंग संगीत, नया थिएटर – नगीन तनवीर, रवींद्र भवन संयोजन नगीन तनवीर
सायं 7.00 बजे	:	चाण्डालिका–टैगोर की बांग्ला नाट्यकृति का हिन्दी नाट्य प्रयोग निर्देशन – उषा गांगुली, प्रस्तुति – रंगकर्मी, कोलकाता

हिन्दी कविता खूब जमी
रंगमंच नेपथ्य
नाटक में ही दिखता है
अभिनय का कुछ तथ्य।

शंखनाद से जब हुआ
विश्वरंग साहित्य
स्वस्ति गान गुंदेचा का
झूम उठा आदित्य।

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, 4-10 नवंबर, भोपाल

गुरुवार, 7 नवंबर 2019

शाम 4 बजे, मिंटो हॉल, भोपाल

शाम 4.00 बजे :
आर्मी बैंड द्वारा वृन्द संगीत, शहनाई वादन, सुंदरी वादन, भिमन्ना जादव का समूह
पुस्तक प्रदर्शनी तथा जलियाँवाला बाग प्रदर्शनी का उद्घाटन

विशेष उपस्थिति
प्रभाकर कोल्टे-चित्रकार, कैलाशचन्द्र पंत-हिंदी सेवी, राजीव वर्मा-रंगकर्मी
किश्वर देसाई-लेखिका, चित्रा मुद्गल-कथाकार, संतोष चौबे-निदेशक, टैगोर
अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, मुकेश वर्मा-संपादक, कथादेश
आमंत्रित प्रवासी लेखक एवं विदेशी साहित्यकार

शाम 6:00 बजे :
विश्व रंग साहित्य उत्सव का प्रारंभ
शंख नाद : आचार्य संकुल
स्वस्ति गान : ध्रुपद गायक पद्मश्री गुंदेचा बंधु
स्वागत वक्तव्य : संतोष चौबे-निदेशक, टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव
हिंदी कहानी के दस्तावेजी संग्रह 'कथादेश' का लोकार्पण
रवींद्र कैटलॉग तथा विश्व रंग कैटलॉग का विमोचन

विशेष उपस्थिति :
मृदुला गर्ग - साहित्य अकादमी पुरस्कार - हिंदी
शीनकाफ निजाम-साहित्य अकादमी पुरस्कार-उर्दू
सी. राधाकृष्णन-साहित्य अकादमी तथा मूर्तिदेवी सम्मान-मलयालम
ध्रुवा ज्योति बोरहा-साहित्य अकादमी पुरस्कार-आसामी
याकूब-साहित्य अकादमी सम्मान-तेलुगु, ज्यॉर्ज जिटर्स-अंग्रेजी साहित्य, इंग्लैंड
डॉ. रमेशचंद्र शाह-पद्मश्री, हिंदी, डॉ. चित्रा मुद्गल-साहित्य अकादमी पुरस्कार, हिंदी
डॉ. धनंजय वर्मा-हिंदी आलोचक, रजत कपूर-फिल्म अभिनेता, निर्देशक, लेखक
डॉ. सुषम बेदी-प्रवासी लेखक, अमेरिका,
डॉ. सच्चिदानन्द जोशी-निदेशक, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला संग्रहालय
संतोष चौबे-कुलाधिपति, रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, निदेशक, विश्व रंग
मुकेश वर्मा-संपादक-कथादेश, लीलाधर मंडलोई -सह-निदेशक, विश्व रंग
सिद्धार्थ चतुर्वेदी-सह-निदेशक, विश्व रंग

संचालन
विनय उपाध्याय, निदेशक टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र

रात्रि 8 बजे :
मुक्ताकाश, करमा-सैला आदिवासी नृत्य - अम्नेश केरकेट्टा

लेखक से भी सब मिले
हुआ कहानी पाठ
पुस्तक चर्चा के दिखे
एक अलग ही ठाठ।

अन्तर्राष्ट्रीय मुशायरा
सुनने की चाहत
हर शायर दे देता है
श्रोता को राहत।

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, शुक्रवार 8 नवंबर, सुबह 10.00 बजे, मिंटो हॉल, भोपाल

दिवस-1

प्रातःकाल मुख्य सत्र

समय	मुख्य सत्र		स्थान
सुबह 10:00 बजे मंगलाचरण सुबह 10:30 बजे – दोपहर 12:30 बजे	भक्ति सदी का ध्रुपद गान (ध्रुपद गुरुकुल संस्थान, भोपाल) **मुख्य सत्र-1 टैगोर, इकबाल और कैफ-** डॉ. [illegible] (अध्यक्ष), डॉ. [illegible], [illegible], **संचालन** : [illegible]		मुख्य हॉल टैगोर परिसर
12:00–12:30 चाय			
दोपहर 12:30–दोपहर 2:00	**मुख्य सत्र-2** 21वीं सदी में विश्व साहित्य	विनय कुमार, गीत चतुर्वेदी, [illegible], [illegible], विनय शर्मा, [illegible] सिंह (अध्यक्ष) संचालन: [illegible]	मुख्य हॉल टैगोर परिसर
2:00–3:00 भोजन			

अपराह्न समानांतर सत्र — दोपहर 3:00–शाम 6:00 — सत्र का नाम एवं स्थान

समय	हॉल-1 प्रेमचंद सभागार	हॉल-2 निराला सभागार	हॉल-3 वनमाली सभागार	हॉल-4 महादेवी सभागार
दोपहर 3:00–शाम 4:15	सत्र-3 **पुस्तक चर्चा (1) अंग्रेजी (भारत माता)** पुरुषोत्तम अग्रवाल (अध्यक्ष), **समन्वय** : सुरेश तोमर	सत्र-9 **रचना पाठ : पर्यावरण संतुलन, नागरिकता और विस्थापन** [illegible] (अध्यक्ष) [illegible], [illegible], [illegible] कुमार, मनोहर [illegible], महाराज कृष्ण संतोषी, पंकज चतुर्वेदी **संचालन** : कुमार अनुपम	सत्र-5 **हिंदी की नई आवाज** **वक्ता**-[illegible], [illegible] दुबे **संचालन** : [illegible], सुदीप सोहनी, अदिति चतुर्वेदी	सत्र-7 **प्रवासी भारतीय : कविता पाठ, पुस्तक प्रवासी सृजन संसार का लोकार्पण** [illegible] (अध्यक्ष), रेखा मैत्र, [illegible] अवस्थी, [illegible], अशोक सिंह, भावना कुँवर, संजय अग्निहोत्री, उमेश ताम्बी
4:15–4.45 चाय				
शाम 4:45–शाम 6:00	सत्र-4 **पुस्तक चर्चा (2) अंग्रेजी (त्रिलॉजी)** सी. राधाकृष्णन **समन्वय** : जॉय (अर्जुन त्रिलॉजी)	सत्र-10 **प्रवासी भारतीय उपन्यास लेखन-मूल्यांकन की चुनौतियाँ,** [illegible] शर्मा (अध्यक्ष), [illegible], अर्चना पैन्यूली, [illegible] मुकेश, [illegible] जोशी, [illegible] जैन, [illegible] सिंह, ललित मोहन जोशी **संचालन** : अनुज भार्गव	सत्र-6 **युवा : कहानी पाठ** विनोद तिवारी (अध्यक्ष), मनोज पांडेय, [illegible], [illegible] पांडेय, राहुल सिंह, [illegible] **संचालन** : आशुतोष	सत्र-8 **प्रवासी भारतीय कथा लेखन: मूल्यांकन की चुनौतियाँ** कमल किशोर गोयनका (अध्यक्ष), उषा राजे सक्सेना, [illegible] शर्मा, [illegible], [illegible], संध्या सिंह, जय वर्मा **संचालन** : अनिल शर्मा

लेखक से मिलिये — दोपहर 3:00–शाम 6:00 — सत्र का नाम एवं स्थान

समय	सर्कल-1 टैगोर परिसर	सर्कल-2 टैगोर परिसर
दोपहर 3:00–दोपहर 4:15	सत्र-11-12 **लेखक से मिलिये** संतोष चौबे पंकज सुबीर [illegible] राकेश मिश्र	सत्र-15-16 **लेखक से मिलिये** सच्चिदानंद जोशी पंकज मित्र [illegible] उपाध्याय [illegible]
4:15–4:45 चाय		
शाम 4.45–शाम 6.00	सत्र-13-14 **लेखक से मिलिये** विनोद तिवारी [illegible] बिहारी किरण सिंह जगन्नाथ दुबे	सत्र-17-18 **लेखक से मिलिये** अखिलेश राजू शर्मा [illegible] मिश्र [illegible] शुक्ल

सांयकालीन सत्र

समय	सत्र का नाम	स्थान
शाम 6:15–शाम 7:15	**सत्र-19, एक मुलाकात : आशुतोष राणा से, संचालन**-सिद्धार्थ चतुर्वेदी, [illegible] चतुर्वेदी	[illegible], [illegible] सिंह सभागार
शाम 7:30–रात 10:00	**सत्र-20, अंतर्राष्ट्रीय मुशायरा,** **अध्यक्ष** – [illegible] निजाम, अजीज नबील, [illegible], [illegible], [illegible] आजमी, मदन मोहन दानिश, [illegible], [illegible], [illegible] इंदौरी, [illegible], [illegible], इकबाल अशर **संचालन** : [illegible]	[illegible] लॉन पर

जेन्डर भले ही थर्ड हो
मंच पे पहली बार
उनकी त्रासदी को मिला
श्रोताओं का प्यार।

हँसे ज्ञान पाकर के सब
कुछ ऐसा था व्यंग्य,
लोक कविता का अपना
एक अलग है ढंग।

विश्व रंग
टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, शनिवार 9 नवंबर, मिंटो हॉल, भोपाल

दिवस-2

प्रातःकाल मुख्य सत्र

समय	मुख्य सत्र	स्थान
सुबह 10:00 बजे सुबह 10:30 बजे - दोपहर 12:00 बजे	मंगलाचरण–संतूर बांसुरी जुगलबंदी (सतेन्द्र सोलंकी–भास्कर दास) सत्र-21 मुख्य सत्र-1, गांधी और टैगोर: [illegible] और लोकतंत्र, रमेश चंद्र शाह (अध्यक्ष), डॉ. नंदकिशोर आचार्य, सुधीर चंद्र, संचालन: संतोष चौबे	मुख्य हॉल टैगोर परिसर
12:00–12:30 चाय		
दोपहर 12:30–दोपहर 2:00	सत्र-22, मुख्य सत्र-2 थर्ड जेंडर के कवियों का रचना पाठ चित्रा मुद्गल (अध्यक्ष), पार्थसारथी मजूमदार, मानबी बंद्योपाध्याय, धनन्जय सिंह चौहान, देवज्योति भट्टाचार्य, विजया घोष, रितु दास, शंभुनाथ चौधरी, आलिया एस. के. संचालन: [illegible]	मुख्य हॉल टैगोर परिसर
2:00–3:00 भोजन		

अपराह्न समानांतर सत्र — दोपहर 3:00–शाम 6:00 — सत्र का नाम एवं स्थान

समय	हॉल-1 प्रेमचंद सभागार	हॉल-2 निराला सभागार	हॉल-3 वनमाली सभागार	हॉल-4 महादेवी सभागार
दोपहर 3:00–शाम 4:15	सत्र-25 भारतीय भाषाओं में युवा लेखन, जानकी प्रसाद शर्मा (अध्यक्ष) अन्वेषा [illegible], बलराम शुक्ला, [illegible], पीयूष ठक्कर, [illegible], [illegible] संचालन–अभिषेक, [illegible]	सत्र-29 वैश्विक परिदृश्य में हाशिये के स्वर, लक्ष्मण गायकवाड़ (अध्यक्ष), शरण कुमार लिंबाले, [illegible], अजीत हाजिनी, ए. अरविंदाक्षन संचालन –[illegible]	सत्र-23 युवा कविता पाठ, राजेश जोशी (अध्यक्ष), [illegible], [illegible] सिंह, [illegible], [illegible] मिश्र, सुजाता, [illegible], प्रमोद त्रिवेदी, [illegible] संचालन–[illegible] त्रिपाठी	सत्र-27 व्यंग्य रचना पाठ, ज्ञान चतुर्वेदी, (अध्यक्ष) [illegible] अरोड़ा, शांतिलाल जैन, ईश्वर शर्मा, इन्द्रजीत कौर संचालन: आलोक पुराणिक
4:15–4:45 चाय				
शाम 4:45–शाम 6:00	सत्र-26 भारतीय भाषाओं का कविता पाठ राधा वल्लभ त्रिपाठी, (अध्यक्ष), के. सच्चिदानन्दन, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] संचालन–[illegible]	सत्र-30 बाल साहित्य: सरोकार और चुनौती [illegible], (अध्यक्ष) [illegible] शर्मा, प्रो. [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] उपाध्याय संचालन–बलराम गुमास्ता	सत्र-24 लोक कवियों का रचना पाठ डॉ. [illegible], (अध्यक्ष), [illegible] (बुंदेली), [illegible] (बुंदेली), [illegible] (बघेली), [illegible] (ब्रज), [illegible] (निमाड़ी), [illegible] (निमाड़ी), [illegible] (अवधी), डॉ. [illegible] (मालवी), [illegible] (भोजपुरी) संचालन–[illegible]	सत्र-28 मीडिया का समकालीन चरित्र ओम थानवी (अध्यक्ष), मधुसूदन आनंद, [illegible], [illegible], [illegible] त्रिवेदी, [illegible] संचालन–[illegible]

लेखक से मिलिये — दोपहर 3:00–शाम 6:00 — सत्र का नाम एवं स्थान

समय	सर्कल-1 टैगोर परिसर	सर्कल-2 टैगोर परिसर
दोपहर 3:00–दोपहर 4:15	सत्र-31–32 लेखक से मिलिये अशोक पांडेय संदीप सिंह बलराम गुमास्ता [illegible]	सत्र-35–36 लेखक से मिलिये [illegible] [illegible] गुप्ता [illegible] [illegible]
4:15–4.45 चाय		
शाम 4:45–शाम 6:00	सत्र-33–34 लेखक से मिलिये [illegible] रेखा [illegible] [illegible] शर्मा आशुतोष	सत्र-37–38 लेखक से मिलिये [illegible] चौधरी [illegible], [illegible] [illegible]

सांयकालीन सत्र

समय	सत्र का नाम	स्थान
शाम 6:15–शाम 7:15	सत्र-39 एक मुलाकात: इरशाद कामिल (इंडक बैंड)	बाहर, [illegible] सभागार
शाम 7:30–रात 10:00	सत्र-40 सुखन : उर्दू शायरी की महफिल	बाहर लॉन पर

हिन्दी कविता का सुना
मधुर वृंद सा गान
और रवीन्द्र संगीत की
एक अलग पहचान।

वनमाली की कथा कहे
जो पाये सम्मान
समय सभी का कर देता
एक अच्छा गुणगान।

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, 4-10 नवंबर, भोपाल

रविवार, 10 नवंबर 2019

सुबह 10 बजे, मिंटो हॉल, भोपाल

वनमाली कथा सम्मान

सुबह 10.00 बजे	:	**मंगलाचरण**–शहनाई वादन **हिन्दी कविताओं का वृन्द गान** : हारमनी ग्रुप (संयोजन–उमेश तरकसवार)
सुबह 11.30 – दोपहर 1.30 बजे	:	**वनमाली कथा सम्मान** रवीन्द्र संगीत : रेनी वृंद (संयोजन–रीना सिन्हा) प्रभु जोशी द्वारा चित्रित वनमालीजी के पोर्ट्रेट का लोकार्पण वनमाली कथा सम्मान स्मारिका का लोकार्पण चयनित हिंदी कथा लेखकों के अंग्रेजी अनुवाद गोल्डन ट्रेजरी का लोकार्पण (पुनर्वसु जोशी) कथा सम्मान–अतिथियों के वक्तव्य
मुख्य अतिथि	:	**माननीया श्रीमती आनंदीबेन पटेल,** राज्यपाल, उत्तर प्रदेश
विशेष अतिथि	:	डॉ. धनंजय वर्मा–आलोचक, संतोष चौबे–साहित्यकार, शिक्षाविद् निदेशक विश्वरंग, मुकेश वर्मा–कथाकार, लीलाधर मंडलोई–सह निदेशक विश्व रंग, सिद्धार्थ चतुर्वेदी–सह निदेशक विश्व रंग, ममता कालिया–वरिष्ठ लेखिका, ऊषा किरण खान – वरिष्ठ लेखिका
वनमाली कथा सम्मान से विभूषित कथाकार–आलोचक	:	प्रियंवद–राष्ट्रीय वनमाली कथा सम्मान, रणेंद्र–वनमाली वरिष्ठ कथा सम्मान, भगवानदास मोरवाल–वनमाली वरिष्ठ कथा सम्मान गौरव सोलंकी– वनमाली युवा कथा सम्मान, मनोज पांडेय– वनमाली युवा कथा सम्मान, तरूण भटनागर– वनमाली युवा कथा सम्मान, विनोद शाही–वनमाली कथा आलोचना सम्मान, राहुल सिंह–वनमाली युवा कथा आलोचना सम्मान, समकालीन भारतीय साहित्य–वनमाली साहित्यिक पत्रिका सम्मान, किरण सिंह–वनमाली विशिष्ट युवा पुरस्कार, उपासना–वनमाली विशिष्ट युवा पुरस्कार
संचालन	:	विनय उपाध्याय, निदेशक–टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केन्द्र

सत्र समानान्तर चले
तय था जिनका वक्त
हॉल समय पर खाली हो
अनुशासन था सख्त।

चुनौतियाँ है विश्व में
ये कहती हिन्दी
कविता से लग जाती है
माथे पर बिन्दी।

विश्व रंग

टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, रविवार 10 नवंबर, मिंटो हॉल, भोपाल

दिवस-3

अपराह्न समानांतर सत्र दोपहर 3:00–शाम 6:30 सत्र का नाम एवं स्थान					लेखक से मिलिये दोपहर 3:00–शाम 6:30 सत्र का नाम एवं स्थान		
समय	हॉल-1 प्रेमचंद सभागार	हॉल-2 निराला सभागार	हॉल-3 वनमाली सभागार	हॉल-4 महादेवी सभागार	समय	सर्वेल-1 टैगोर परिसर	सर्वेल-2 टैगोर परिसर
दोपहर 3:00–शाम 4:30	सत्र-45 **विश्व में हिन्दी : हिंदी पाठ्यक्रम में विश्व स्तर पर एकरूपता की चुनौतियाँ, पुस्तक विश्व में हिंदी का लोकार्पण** डॉ. हाईंस वेसलर (अध्यक्ष) (जर्मनी) डॉ. इंदिरा गाजीएवा (रूस) डॉ. एराप कोकडेमिर (तुर्की) डॉ. यूरी बोत्वींकिन (यूक्रेन) डॉ. सिराजुद्दीन नुर्मातोव (उज़्बेकिस्तान) प्रो. सुब्रमनी, (फिजी) **संचालन :** प्रो. संतोष चौबे (भारत)	सत्र-47 **साहित्य : दृश्य-श्रव्य माध्यम एवं सोशल मीडिया** **वक्ता**–रवि रतलामी, अनुराधा सिंह, अनन्य देव, नीलाक्षी, सुदीप सोहनी **संचालन** – इरा जोशी	सत्र-43 **विश्व कविता सत्र (1)** इंद्रनाथ चौधरी (अध्यक्ष), तेनज़िन (तिब्बत), सुमन पोखरेल (नेपाल), नजीब बरवार (अफ़गानिस्तान), चेतन कुहनुरी (श्रीलंका), माया पी.एल. लामेट (फिलीपिन्स), लेबो माशिल (दक्षिण अफ्रीका) **संचालन**–आलम कमाल	सत्र-49 **लोक का उत्तर आधुनिक पक्ष** डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी (अध्यक्ष), अब्दुल बिस्मिल्लाह, महेंद्र कुमार मिश्र बद्री नारायण, नर्मदा प्रसाद उपाध्याय, शंभुनाथ, शेखलाल **संचालन**–डॉ. देवेंद्र चौबे	दोपहर 3:00–दोपहर 4:30	सत्र-51-52 **लेखक से मिलिये** वंदना राग कुणाल सिंह प्रभाकर सिंह महेश कटारे	सत्र-55-56 **लेखक से मिलिये** अनिल त्रिपाठी राजेश जोशी डॉ. अल्पना मिश्र, नीरज खरे
		4:30–5:00 चाय				4:00–5:00 चाय	
शाम 5:00–शाम 6:30	सत्र-46 **विश्व में हिन्दी: विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की वर्तमान स्थिति, पुस्तक प्रवासी हिंदी का विमोचन** डॉ. गेनाडी श्लोम्पेर, (इज़राइल), (अध्यक्ष), डॉ. लिउडमिला खोखलोवा, (रूस), डॉ. उल्वाना ओस्त्रुवका, (जर्मनी), डॉ. जयतुन रंजीत, (श्रीलंका) डॉ. कार्पाने नेर्सिस्यान, (आर्मेनिया), डॉ. दरीगा कोकोएवा, (कज़ाकिस्तान) **संचालन:** प्रो. वी.के. वर्मा (भारत)	सत्र-48 **टेक्नॉलॉजी और हिंदी** राहुल देव –(अध्यक्ष) जीतेन्द्र चौधरी मनीष गुप्ता लीना मेहंदले ओम विकास डॉ. अनुराग सीठा **संचालन:** अनूप भार्गव	सत्र-44 **विश्व कविता सत्र (2)** के. सच्चिदानन्द (अध्यक्ष), ओबायेद आकाश (बांग्लादेश) सुजस्ता इहसास (अफ़गानिस्तान), को को थेत (बर्मा), ईसर सीद (रूस), शाहिद महमूद (बांग्लादेश) **संचालन**–अरुण कमल	सत्र-50 **सिनेमा में साहित्य और कला** श्यामानन्द किल्लेदार (अध्यक्ष), ज्योति कपूर जयंत देशमुख सिद्धार्थ चतुर्वेदी विनय उपाध्याय **संचालन**–सुदीप सोहनी	शाम 5:00–शाम 6:30	सत्र-53-54 **लेखक से मिलिये** उत्तम गजकर शशांक मोहन सगोरिया राम कुमार तिवारी	सत्र-57-58 **लेखक से मिलिये** सत्यकाम महेश दर्पण इंद्रजीत सिंह ईश मधु तलवार

सांयकालीन सत्र

समय		सत्र का नाम	स्थान
शाम 6.45–रात 7:30	सत्र – 59	समापन सत्र	बाहर लॉन पर
रात 7:30–रात 10:30	सत्र – 59	राघु दीक्षित प्रोजेक्ट, बैंड	

उत्तर सबको मिल गया
क्या आधुनिक पक्ष
जितने भी थे लोक वहाँ
सारे ही थे दक्ष।

कला सिनेमा में दिखी
और दिखा साहित्य
चंदा थोड़ा मुस्काया
और हँसा आदित्य।

विश्वरंग में सहयोगी
साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ

वनमाली सृजन पीठ, रंग संवाद, इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए, आईसेक्ट स्टुडियो, आईसेक्ट पब्लिकेशन, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र-नई दिल्ली, साहित्य अकादेमी, नेशनल बुक ट्रस्ट, भारतीय ज्ञान पीठ, संस्कृतिक विभाग म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, ध्रुपद गुरुकुल संस्थान, वीरेश्वर पुण्याश्रम, पहले-पहल, सुबह सवेरे, मप्र जन संदेश, म.प्र. लेखक संघ, अ.भा. साहित्य परिषद, अभिनव कला परिषद, मधुवन, दुष्यंत कुमार स्मारक पाण्डुलिपि संग्रहालय, प्रभात साहित्य परिषद, तुलसी साहित्य अकादेमी, म.प्र. लेखिका संघ, म.प्र. लघु कथा अकादेमी, बाल साहित्य एवं शोध केन्द्र, इफ्तेख़ार क्रिकेट अकादेमी, त्रिकर्षि नाट्य संस्था, नया थियटर, म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, स्पंदन, नट निमाड़, यमन नृत्य एवं संगीत कला अकादेमी, उस्ताद अब्दुल लतीफ खाँ संगीत न्यास, रंगायन, सागर गुंचा कल्चरल सोसायटी, नट बुंदेले, एक रंग नाट्य समूह, कोशिश नाट्य संस्था, यंग्स थिएटर, भोपाल थियेटर, शैडो-ग्रुप, विहान ड्रामा वर्क्स, हम थिएटर, रंगश्री लिटिल बैले ट्रूप, चिल्ड्रन थिएटर अकादेमी, रेनी वृन्द, हारमनी म्यूज़िक ग्रुप, पद्मरंग नृत्य अकादेमी, पुरू कथक नृत्य अकादमी, कला समय, प्रतिभालय आर्ट्स अकादेमी, भोपाल बंगाली एसोसिएशन, आरुषि, रौनक सोशल एण्ड कल्चरल सोसाईटी, कला मंदिर, समावर्तन, राग भोपाल, गीत गागर, अंतरा, पब्लिक रिलेशन सोसायटी ऑफइंडिया....

आयोजन में आ गया
पूरा देश-विदेश
सबके मन संतोष था
क्या कहना फिर शेष।

सारे ही वालेंटियर
हर पल हर दिन चुस्त
कहीं कोई खामी दिखी
फौरन किया दुरुस्त।

संचालन में विनय करे
अच्छा शब्द प्रवाह
मीठी वाणी संतुलित
श्रोता करते वाह।

बाहर एक पिरामिड था
जिस पर सजीं किताब
जिसने की ये कल्पना
उसको मिले खिताब।

सौजन्य सहयोग

विविध विधा के नृत्य दल
और उसमें गणगौर
आँखे कहती देख लो
कुछ पल रुककर और।

नौ के कांधे पर दिखा
विश्वरंग का भार
मजबूती का आर्किटैक्स ने
खूब दिया आधार।

आर्मी का भी खूब बजा
अपनी धुन में बैण्ड
गगन भी छूने आ गया
विश्वरंग की लैण्ड।

लेकर अच्छी स्मृतियाँ
घर वापस आये
जितने आयोजन हुए
सारे ही भाये।

विश्वरंग की अंतर्राष्ट्रीय समिति

रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव 'विश्वरंग' के भोपाल में सफल आयोजन के बाद इसके विस्तार एवं देश-विदेश में विभिन्न कार्यक्रमों के बीच संयोजन के लिए रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे की अध्यक्षता में एक अंतर्राष्ट्रीय समिति का गठन किया गया है। इसमें लगभग 20 देशों के प्रतिनिधि शामिल होंगे जो सभी महादेशों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

मॉस्को (रूस) से इंदिरा गाजिएवा और ल्यूदमिला ख़ोखलोवा, जर्मनी से प्रो. डॉ. तत्याना ओरान्स्कया, (हैम्बर्ग), उज्बेकिस्तान से डॉ. सिराजुद्दीन नुर्मातोव (ताशकंद), कज़ाकिस्तान से डॉ. दरीगा कोकोएवा (अल्माटी), यूक्रेन से यूरी बोत्वींकिन (कीव), अर्मेनिया से ऋपसिमे नेर्सिस्यान (येरेवान) इज़राइल से डॉ. गेनेदी श्लोम्पेर (तेल अबीब), श्रीलंका से प्रो. उपुल रंजीत (कलवीय), फीजी से प्रो. सुब्रमनी (सूबा), इंग्लैण्ड से तेजेन्द्र शर्मा (लंदन), दिव्या माथुर (लंदन), ऊषा राजे सक्सेना (लंदन), ललित मोहन जोशी (लंदन), डॉ. वंदना मुकेश (नाटिंघम), जय वर्मा (बर्मिंघम), अमेरिका से डॉ. सुषम बेदी (न्यूयार्क), कविता वाचक्नवी (डलास), रेखा मैत्र (कैलिफोर्निया), उमेश ताम्बी (फिलाडेल्फिया), अशोक सिंह (न्यूयार्क), अनूप भार्गव (न्यूजर्सी), मनीष गुप्ता (सिएटल), कनाडा से महेन्द्र धर्मपाल (टोरंटो), ऑस्ट्रेलिया से भावना कुँवर (सिडनी), रेखा राजवंशी (सिडनी), संजय अग्निहोत्री (सिडनी), सिंगापुर से संध्या सिंह (सिंगापुर), डेनमार्क से डॉ. अर्चना पैन्युली (कोपेनहैगेन), नीदरलैंड से डॉ. पुष्पिता अवस्थी (एम्सटर्डम), डॉ. रामा तक्षक, (एम्सटर्डम), कुवैत से जितेन्द्र चौधरी (कुवैत सिटी), को शामिल किया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय समिति से सहयोग के लिए भारत से भी एक 27 सदस्यीय समूह का गठन किया गया है, जो साहित्य, संस्कृति, शिक्षा एवं प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है। इस समूह में संतोष चौबे (भोपाल), मुकेश वर्मा (भोपाल), बलराम गुमास्ता (भोपाल), महेन्द्र गगन (भोपाल), डॉ. अनुराग सीठा (भोपाल), आत्माराम शर्मा (भोपाल) लीलाधर मंडलोई (नई दिल्ली), डॉ. कमल किशोर गोयनका (नई दिल्ली), विनय उपाध्याय (भोपाल), डॉ. सच्चिदानंद जोशी (नई दिल्ली), देवेन्द्रराज अंकुर (नई दिल्ली), अशोक भौमिक (नई दिल्ली), डॉ. रमेश चंद्र शाह (भोपाल), प्रभु जोशी (इंदौर), सिद्धार्थ चतुर्वेदी, अदिति चतुर्वेदी, पल्लवी राव चतुर्वेदी, नितिन वत्स, डॉ. विजय सिंह, नुसरत मेंहदी (सभी भोपाल), अरविंद चतुर्वेदी, अभिषेक पंडित (नई दिल्ली), विनीता चौबे, पुष्पा असिवाल, शशांक एवं मेजर जनरल (रिटा.) श्याम श्रीवास्तव (भोपाल) को शामिल किया गया गया है। आईसेक्ट समूह के सभी विश्वविद्यालयों के कुलपति एवं रजिस्ट्रार इसमें विशेष आमंत्रित सदस्य होंगे।

विश्वरंग 2019 की समाप्ति के ठीक एक महीने बाद हुई आयोजन समिति की बैठक में इस समिति का गठन किया गया। समिति ने अपने लिए कुछ कार्य भी तय किये हैं जैसे-अपने देश/शहर में हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के प्रचार प्रसार के लिए कार्य करना, भारतीयता/भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करना एवं संबंधित गतिविधियाँ आयोजित करना, हिंदी और भारतीय भाषाओं के पठन-पाठन में कार्यरत स्थानीय विश्वविद्यालयों से गहरा संबंध स्थापित करना तथा उनकी यथा संभव मदद करना, भाषा के प्रचार प्रसार में टेक्नोलॉजी के उपयोग को बढ़ावा देना और टेक्नोलॉजी समूहों के साथ जीवंत संपर्क स्थापित करना, अपने-अपने देशों/महादेशों में हिंदी तथा भारतीय भाषाओं पर केंद्रित समन्वित कार्यक्रम करना तथा उसमें भारतीय साहित्यकारों को शामिल करना, स्थानीय संस्कृति और भाषा के साथ परस्पर सम्मान तथा समन्वय का (अनुवाद को शामिल करते हुए) रिश्ता कायम करना और भारत के साथ उनका रचनात्मक संबंध बनाने का प्रयास करना।

विश्वरंग की गतिविधियों को समन्वित गति प्रदान करने के लिए कुछ ठोस कार्यक्रम भी निर्धारित किये गए हैं, जिनमें-कथा देश की तरह प्रवासी भारतीय साहित्य के कथा, कविता तथा आलोचना कोश प्रकाशित करना, देशों पर केंद्रित कोश प्रकाशित करना जिसमें उस देश के आधुनिक साहित्य के अनुवाद प्रकाशित हों, भारतीय साहित्य के विदेशी भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित करना, चयनित देशों में स्वत: स्फूर्त 'विश्वरंग' जैसे कार्यक्रम आयोजित करना जो संयुक्त बैनर पर हो सकते हैं, 'विश्वरंग' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन करना जो अधिकतम लोगों को जोड़ने का प्रयास करेगी, समानधर्मी व्यक्तियों, संस्थाओं, पत्र-पत्रिकाओं का डाटाबेस बनाना तथा 'विश्वरंग' का आयोजन एक निश्चित अवधि में करते हुए उसकी गतिविधियों का विस्तार करना।

इस अंतर्राष्ट्रीय समिति का सचिवालय रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल स्थित टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला केन्द्र में स्थित होगा। 'गर्भनाल' पत्रिका सहयोगी भूमिका में रहेगी।

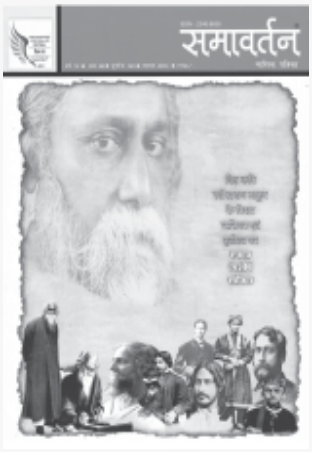

विश्वरंग के दस्तावेज़ी प्रकाशन

विश्वरंग के दस्तावेज़ी प्रकाशन

विश्वरंग के दस्तावेज़ी प्रकाशन

आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल

की ऐतिहासिक व महत्त्वाकांक्षी परियोजना

कथादेश

भारत के हिन्दी कथाकारों पर केन्द्रित कथाकोश

लगभग सवा सौ साल के परिदृश्य में लिखी गयीं हिन्दी कहानियों में से लगभग 650 प्रतिनिधि कहानियों को जिल्दबन्द करता यह कथाकोश 18 खंडों में विभाजित है। साथ ही हिन्दी कहानी की सम्पूर्ण विकास-यात्रा का सांगोपांग रेखांकन व निरीक्षण करते 75 से अधिक आलोचनात्मक आलेखों तथा संकलित प्रत्येक कहानी पर स्वतन्त्र टिप्पणियों को भी संगृहीत किया गया है। इसकी उपयोगिता कहानी के शोधार्थियों के लिए तो है ही, कथा-रस के सामान्य आस्वादकों के लिए भी है।

प्रधान संपादक : संतोष चौबे

'कथादेश' के सम्पूर्ण सेट का मूल्य 17,500 रु. है, जिस पर निर्धारित छूट देय होगी।

कथादेश के खंड निम्न समूहों के अनुसार भी क्रय किये जा सकते हैं :

धरोहर (धरोहर, प्रेमचंदोत्तर कहानी-1 व 2)
तीनों खंड एक साथ 2970 रु. (छूट के साथ 2200 रु.)

नई व साठोत्तरी कहानी (नई कहानी-1 व 2 तथा साठोत्तरी कहानी-1 व 2)
चारों खंड एक साथ 3960 रु. (छूट के साथ 2900 रु.)

समकालीन कहानी (समकालीन कहानी-1, 2, 3, 4, 5, 6 व 7)
सातों खंड एक साथ 6930 रु. (छूट के साथ 5200 रु.)

युवा कहानी (युवा कहानी-1, 2, 3 व 4) :
चारों खंड एक साथ 3960 रु. (छूट के साथ 2900 रु.)

(डाक से मँगाने पर डाक खर्च अलग से देय होगा)

अमेजन व आईसेक्ट ऑनलाइन पोर्टल पर भी उपलब्ध

'कथादेश' प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें

आईसेक्ट पब्लिकेशन
25-ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1, भोपाल-462011
फोन : 0755-4923952, 8818883165

आईसेक्ट लिमिटेड
स्कोप कैम्पस, एनएच-12, होशंगाबाद रोड, भोपाल-462047
फोन : 0755-2432801, 2432830

ईमेल : aisectpublications@aisect.org, mahip@aisect.org

आईसेक्ट पब्लिकेशन

ज्ञान-विज्ञान, कौशल विकास तथा कला-साहित्य पर हिंदी, अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में पुस्तकों और पत्रिकाओं का राष्ट्रीय प्रकाशन

सभी लेखकों के लिए प्रस्तुत है आईसेक्ट पब्लिकेशन की

स्व-प्रकाशन योजना

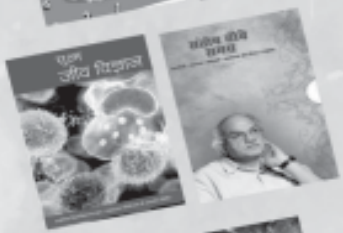

हिंदी भाषा, साहित्य एवं विज्ञान की विभिन्न विधाओं में पुस्तकों के प्रकाशन में आने वाली कठिनाइयों को देखते हुए आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल ने लेखकों के लिए स्व-प्रकाशन योजना एक अनूठे उपक्रम के रूप में शुरू की है।

जिन रचनाकारों को अपनी मौलिक, अनूदित, संपादित रचनाओं का पुस्तक रूप में प्रकाशन करवाना है, वे कम्प्यूटर पर साफ-साफ अक्षरों में कागज के एक ओर टाइप की हुई पांडुलिपि की सॉफ्ट कॉपी के साथ आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल से संपर्क करें।

आईसेक्ट पब्लिकेशन से पुस्तक प्रकाशन के लाभ ही लाभ

- प्रकाशित पुस्तक आईसेक्ट पब्लिकेशन की पुस्तक सूची में शामिल की जायेगी।
- पुस्तक, बिक्री के लिये सुप्रसिद्ध स्टॉलों एवं मेलों आदि में उपलब्ध रहेगी।
- प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा सुप्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराने का प्रयत्न किया जायेगा।
- प्रकाशित पुस्तक, शहरों व कस्बों में स्थापित वनमाली सृजनपीठ के सृजन केन्द्रों में पठन-पाठन और चर्चा के लिए भिजवाई जायेगी।
- पुस्तक के लोकार्पण और साहित्यिक मंच पर संवाद-चर्चा आदि की व्यवस्था की जा सकेगी।
- पुस्तक चयनित ई-पोर्टल (अमेज़न, फ्लिपकार्ट, आईसेक्ट ऑनलॉइन आदि) पर भी बिक्री के लिये प्रदर्शित की जायेगी।

सुरुचिपूर्ण फोर कलर प्रिंटिंग ● आकर्षक गेटअप ● नयनाभिराम पेपर बैक में

कुल बिक्री के आधार पर वर्ष में एक बार नियमानुसार रॉयल्टी भी

पांडुलिपि किसी भी विधा में स्वीकार

आईसेक्ट पब्लिकेशन, आपका पब्लिकेशन

आप स्वयं पधारें या संपर्क करें

- प्रकाशन अधिकारी, आईसेक्ट पब्लिकेशन : 25/ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल-462011, फोन- 0755-4923952, मो. 8818883165,
- अध्यक्ष, वनमाली सृजनपीठ : 25/ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल-462011 फोन- 0755-4923952, मो. 9425014166,
- E-mail : aisectpublications@aisect.org

वनमाली
सृजन पीठ

साहित्य, संस्कृति एवं सृजन के लिये

•भोपाल•खण्डवा•बिलासपुर•दिल्ली

साहित्य, संस्कृति एवं सृजन के लिये

सुप्रतिष्ठित कथाकार, शिक्षाविद तथा विचारक स्व. जगन्नाथ प्रसाद चौबे 'वनमाली' के रचनात्मक योगदान और स्मृति को समर्पित वनमाली सृजन पीठ एक साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा रचनाधर्मी अनुष्ठान है, जो परंपरा तथा आधुनिक आग्रहों के बीच संवाद तैयार करने सतत सक्रिय है। साहित्य तथा कलाओं की विभिन्न विधाओं में हो रही सर्जना को प्रस्तुत करने के साथ ही उसके प्रति लोकरुचि का सम्मानजनक परिवेश निर्मित करना भी पीठ की प्रवृत्तियों में शामिल है। इस आकांक्षा के चलते रचनाधर्मियों से संवाद और विमर्श के सत्रों के अलावा यह सृजन पीठ शोध, अन्वेषण, अध्ययन तथा लेखन के लिए नवोन्मेषी प्रयासों तथा सृजनशील प्रतिभाओं को चिन्हित करने और उन्हें अभिव्यक्ति के यथासंभव अवसर उपलब्ध कराने का काम भी करेगी। बहुलता का आदर और समावेशी रचनात्मक आचरण हमारी गतिशीलता के अभीष्ट हैं।

सक्रियता के आधार बिन्दु

पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्र की स्थापना • कथा, उपन्यास और आलोचना के साथ ही कविता तथा अन्य साहित्यिक विधाओं पर एकाग्र रचनापाठ एवं संवाद गोष्ठियाँ • स्थानीय तथा प्रवासी साहित्यकार कलाकारों के प्रदर्शन सह व्याख्यान • पुस्तक चर्चाएँ • साहित्य तथा कलाओं के अंतर्संबंधों की पड़ताल • अग्रज और नई पीढ़ी के सर्जकों के बीच विमर्श • चयनित कलाकारों साहित्यकारों के मोनोग्राफ का प्रकाशन • बच्चों की कलात्मक अभिरुचि का प्रोत्साहन • अध्ययन और शोध के अवसर उपलब्ध कराना • उत्कृष्ट सर्जना का सम्मान • पारंपरिक कलारूपों और समकालीन सृजन संवाद का दस्तावेजीकरण • साहित्यिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले शहरों कस्बों में विभिन्न आयोजन • लोक, शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम संगीत तथा वृन्दगान की प्रस्तुतियाँ • अन्य समानधर्मी संस्थाओं के साथ मिलकर गतिविधियों की साझेदारी।

संपर्क :
वनमाली सृजनपीठ
22, ई-7, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-16
फोन : +91-755-242806

www.vishwarang.com

विश्व रंग 2020

TAGORE INTERNATIONAL LITERATURE & ARTS FESTIVAL

विश्व रंग

20th-29th November, India

Organised by

Rabindranath TAGORE UNIVERSITY

MADHYA PRADESH, BHOPAL

Tagore International Arts and Literature Festival

72 sessions online
on Arts, Literature, Science and Culture
1,000 Artists from
50 Nationalities
1,00,000 Participants
from all over the
World.

- A Retrospective on Tagore.
- Painting Exhibitions of Young Artists.
- Book Discussions and Releases.
- Literature and Cinema.
- International Mushaira.
- Over 1000 artists and authors from over 50 nationalities.
- World Poetry Festival.
- Release of Vigyan Katha Kosh (6 volumes) and Vigyan Kavita Kosh.
- Discourse on Tagore, Gandhi and their Contemporariness.
- Drama Festival.
- Meet the Author Sessions.
- Hindi and the World
- Children's Literature Festival.
- Short film Festival.
- Dastangoi.
- Writings of Non Resident Indians.
- Musical Extravaganza by Popular bands.
- Over 1,00,000 participants from all over the world.

Tagore International Centre for Arts & Culture

यह विश्वरंग

जिसमें अन्तरमन की उमंग
भावों अनुभावों की तरंग
यह विविध कलाओं का प्रसंग ।
यह विश्वरंग, यह विश्वरंग ।।

जिसमें सम्वेदन की सुगंध ।
अनुराग राग के ललित बंध ।
मुखरित हर भाषा हर बोली ।
शब्दों अर्थों की राँगोली ।
अनुभूति भूति अक्षय अभंग ।।
यह विश्वरंग यह विश्वरंग ।।

जिसमें प्रबुद्ध वाणी विलास ।
अनुपम प्रज्ञाओं का उजास ।
सीमा विहीन संवाद सेतु ।
हर उपक्रम जग कल्याण हेतु ।
साहित्य गगन के शुभ विहंग ।
यह विश्वरंग, यह विश्वरंग ।।

जिसमें अनुगुंजित लोकराग ।
संगीत गीत स्वर का सुहाग ।
है जहाँ तूलिका का वैभव ।
नित रंगकर्म का नव अनुभव ।
नूपुर ध्वनि नर्तित अंग अंग ।।
यह विश्वरंग, यह विश्वरंग ।।

कवि रवि प्रेरित अनुपम उत्सव ।
संतोष कल्पना का उद्‌भव ।
स्वागत उत्सुक भोपाल नगर ।
आतिथ्यातुर है डगर डगर ।
सत्कार हेतु हम सभी संग ।।
यह विश्वरंग, यह विश्वरंग ।।

- राम वल्लभ आचार्य